१७.११.७७ को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में
शपथ लेते हुए न्यायमूर्ति स्व० श्री महावीर सिंह जी

गुरुकुल-पत्रिका

शोध–पत्रिका

Monthly Research Magazine

न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति-अंक

सम्पादक

डॉ0 भारतभूषण विद्यालंकार

वेदाचार्य, एम.ए., पी-एच.डी.

प्रोफेसर - वेद विभाग

एवं

निदेशक

श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान

उपसम्पादक

डॉ0 दिनेशचन्द्र शास्त्री 'धर्ममार्तण्ड'

वरिष्ठ प्रवक्ता, वेद विभाग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार - 249404

जून - अक्टूबर 1998	वर्ष 50वां	ज्येष्ठ शुक्ल सप्तमी - कार्तिक शुक्ल एकादशी सं0 2055

मुद्रक : किरण प्रिंटिंग प्रेस, निकट गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, कनखल फोन : 415975

श्री स्वामी श्रद्धानन्द अनुसन्धान प्रकाशन केन्द्र के प्रकाशन

स्वामी श्रद्धानन्द	पं. सत्यदेव विद्यालंकार	500.00
वेद का राष्ट्रीय गीत	वेदमार्तण्ड आचार्य	
	आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति	200.00
श्रुतिपर्णा	डॉ. विष्णुदत्त राकेश	95.00
वैदिक साहित्य, संस्कृति और समाजदर्शन	डॉ. विष्णुदत्त राकेश	500.00
वेद और उसकी वैज्ञानिकता		
भारतीय मनीषा के परिप्रेक्ष्य में	आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति	300.00
शोध सारावली	सम्पादित	220.00
भारतवर्ष का इतिहास (दो खंडों में)	आचार्य रामदेव	350.00
Glimpses of Environmental Percepts	*Dr. B.D. Joshi*	50.00
Classical Writings on Vedic & Sanskrit Literature	*Dr. Suryakant Shrivastava* *Dr. Jagdish Vidyalankar*	800.00
दीक्षालोक	सम्पा. डॉ. विष्णुदत्त राकेश	
	डॉ जगदीश विद्यालंकार	500.00
स्वामी श्रद्धानन्द (समग्र मूल्यांकन)	डॉ रणजीत सिंह	300.00
पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति		
कृतित्व के आयाम	डॉ कुशलदेव शंकरदेव कापसे	300.00
स्वामी श्रद्धानन्द के सम्पादकीय लेख	डॉ. विष्णुदत्त राकेश	500.00
	डॉ. जगदीश विद्यालंकार	
कुलपुत्र सुनें	डॉ. विष्णुदत्त राकेश	300.00
	डॉ. जगदीश विद्यालंकार	

श्रुति-सुधा

शन्नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु। (ऋ. 7-35-2)

बहुत मनुष्यों में प्रसिद्ध न्यायकारी हमारे लिए आनन्द देने वाला होवे।

नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु। (ऋ. 7-63-6)

हे न्यायकारी परमात्मन् ! आप सबके मित्र और वरणीय हो, अत: हमारे आत्मा के सुख प्राप्त्यर्थ सब प्रकार का ऐश्वर्य धारण करायें।

शन्नो भवत्वर्य्यमा। (ऋ. 1-90-9)

उत्तम न्याय का करने वाला ऐश्वर्यवान् परमात्मा हमारे लिए कल्याणकारी होवे।

अर्यमाभि रक्षत्यृजूयन्तमनु व्रतम्। (ऋ. 1-136-5)

जो व्यक्ति कुटिलता रहित सरल आचरण करता है (ऋजूयन्तं) और नियमों के अनुसार काम करता है (अनुव्रतं) अर्यमा उसकी रक्षा करता है।

इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति।
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः।।

(ऋ. 7-60-5)

सबको सुख पहुँचाने वाले, किसी न दबनेवाले, अदिति अर्थात् मातृभूमि के पुत्र ये मित्र, अर्यमा और वरुण बहुत फैले हुए असत्य का पता लगा लेनेवाले या उसको मार डालनेवाले हैं, ये सत्य के घर में बढ़ते हैं।

यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम्। द्वौ संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद् वेद वरुणस्तृतीयः।।

जो कोई खड़ा है या चल रहा है और जो धोखा देता है, जो छिपकर चलता है, जो दूसरे को कष्ट पहुँचाकर छिपे-छिपे विचरता है, जो परस्पर मिल-बैठकर जो गुप्त परिभाषण करते हैं, जगत् का राजा वरुण उनमें तीसरा हुआ, उसे जानता है।

ये ते पाशा वरुण सप्तसप्त त्रेधा तिष्ठिन्ति विषिता रुशन्तः। छिनन्तु सर्वे अनृतं वदन्तं यः सत्यवाद्यति तं सृजन्तु।।

(अथर्व 4-16-6)

हे वरुण ! तेरे जो फंदे सात सात, त्रिविध प्रकार से स्थित हैं, शरीर में विशेषतया जो बँधे हुए हैं, और जो कि शरीर को हिंसित कर रहे हैं; वे सब असत्य बोलने वाले को काट दें और जो सत्यवक्ता है उसे छोड़ दें।

संकलयिता
डॉ0 दिनेशचन्द्र शास्त्री

सम्पादकीय

महाभारतीय कथा के अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ में सभी मनुष्य परस्पर प्रेम पूर्वक धर्मानुसार व्यवहार करते थे। धीरे-2 वस्तुओं की न्यूनता के परिणाम स्वरूप मत्स्य न्याय प्रचलित हो गया। तब आवश्यकता हुई एक व्यवस्थापक की। जो धर्म की स्थापना कर सके। जिससे पशुता पर अंकुश लगे। इस व्यक्ति की तेजस्विता व दण्ड देने के सामर्थ्य के कारण उसे राजा पद प्रदान किया गया। राजकीय जटिलताओं के बढ़ने पर उसके अनेक सहयोगी, सचिव आदि बनाए गए। यह राजा भी दण्ड व्यवस्था के आधीन था। इसी के प्रतीक के रूप में सिंहासनारूढ़ होने पर उस पर दण्ड का स्पर्श किया जाता था। इस कार्य को करने वाला पुरोहित ही न्याय व्यवस्था भी देखता था। इसके लिए वेद में अर्यमा शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है।

वस्तुत: धर्म, सत्य, न्याय आदि विभिन्न शब्द एक ही भाव को व्यक्त करते हैं। इसीलिए न्यायाधीश को इन गुणों से युक्त होना ही चाहिए अन्यथा न्याय करना संभव नहीं होता। उसके लिए न्यायकारी एवं दयालु दोनों ही होना चाहिए। ये दोनों शब्द परस्पर विपरीत से प्रतीत होते हैं। परन्तु वस्तुत: एक दूसरे के पूरक हैं। यदि न्यायाधीश मन्युवान नहीं है तो वह न्याय नहीं कर सकता। मन्यु का अर्थ है विवेक पूर्वक दण्ड देने का सामर्थ्य। दण्ड देने का सामर्थ्य तो राजकीय आदेश से प्राप्त हो जाता है परन्तु विवेक व्यक्ति का अपना गुण है। जो व्यक्ति सत्य एवं श्रद्धा का समन्वय करने वाला हो वही श्रेष्ठ न्यायाधीश हो सकता है। क्योंकि तभी वह पक्षपात रहित होगा। पाश्चात्य परम्परा में तो न्याय की देवी की आंख पर पट्टी बंधी होती है कि वह छोटा, बड़ा, कुछ न देख सके। पर भारतीय परम्परा में मस्तिष्क एवं हृदय दोनों खुले रखकर ही न्याय हो सकता है। न्यायाधीशों के उपरोक्त गुण युक्त न होने के परिणाम स्वरूप हम निर्णय तो पा सकते हैं पर न्याय नहीं। वह न्याय नहीं है जिससे पीड़ित को सान्त्वना प्राप्त न हो।

उपरोक्त गुण विशिष्ट श्री महावीर सिंह जी जिस एलम ग्राम के निवासी थे वह शब्द ही यह प्रेरणा देने के लिए पर्याप्त है। एलम-इलामन्नानां समूह ऐलम अन्न समूह : यद्वा इला पृथिवी तस्या इद ऐलम। अन्नै जन्तूनां पोषका इत्यर्थ:। जो स्थान सब ओर से धनधान्य से भरा-पूरा हो जो प्रभूत पृथिवी से युक्त हो अर्थात् जहां विस्तृत कृषि भूमि, चारागाह आदि उपलब्ध हों। उनके माध्यम से जो, सभी जीव जन्तुओं का पोषण करने में समर्थ हो। वहाँ का निवासी ऐलभृता या ऐलवृदा होगा जो कि आर्यत्व के गुणों से ही संभव है।

इसलिए आर्य संस्कारवान् बालक महावीर, आर्यसमाज से विभिन्न रूपों में जुड़ा और उसकी न्याय व्यवस्था के सर्वोच्च पद पर पहुँचा। ऋषि दयानन्द से प्रेरणा पाकर जो शैक्षिक क्रान्ति इस देश में हुई उसने बहुत से लोगों को इस ओर प्रेरित किया। महावीर सिंह जी का तो इसमें स्वाभाविक सम्मान था। इसीलिए विश्वविद्यालय के सर्वोच्च पद पर भी वे प्रतिष्ठापित हुए। ये विभिन्न गुण ही मानव को महामानव बना देते हैं।

उस महामानव को कोटिश: नमन।

भारत भूषण विद्यालंकार

स्व० न्यायाधीश महावीर सिंह
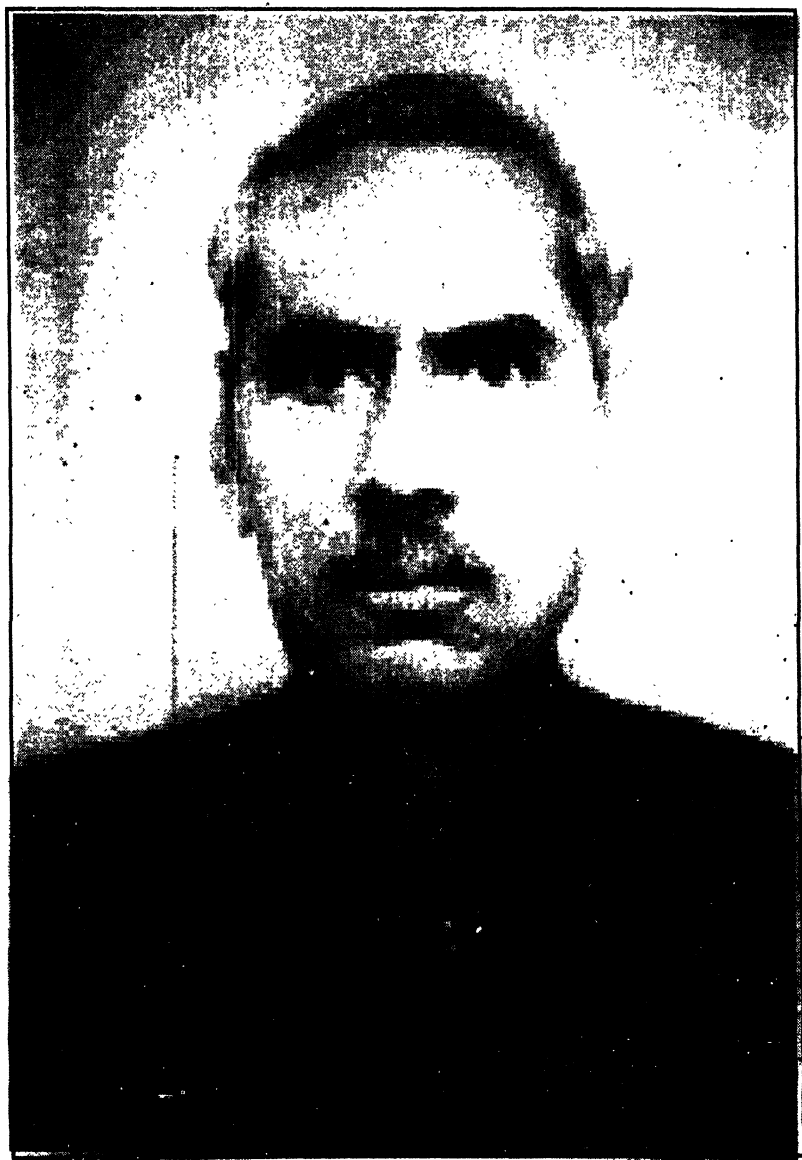
आविर्भाव - १७ अक्टूबर १६१६ तिरोभाव - ११ अगस्त १६६७

सोमपाल
SOMPAL

D.O. No.................../ MOS (Agri.)/98 (1)
कृषि राज्य मंत्री
भारत सरकार
कृषि दिल्ली – 110 001
MINISTER OF STATE FOR AGRICULTURE
GOVERNMENT OF INDIA
KRISHI BHAWAN
NEW DELHI- 110 001

संदेश

यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार की "गुरुकुल पत्रिका" द्वारा, श्रद्धेय न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी के जीवन–वृत्त एवं उनके कृतित्व पर विशेषांक प्रकाशन की योजना है। हमारे लिए यह गौरव की बात है कि श्रद्धेय न्यायमूर्ति जी ने इस विश्वविद्यालय के सम्मानित पद, "परिद्रष्टा" को सुशोभित किया तथा उनके प्रेरणादायक नेतृत्व में, विश्वविद्यालय में अनेक आधुनिक पाठ्यक्रमों का समावेश हुआ जिससे विश्वविद्यालय के विकास में और अधिक व्यापकता एवं उपयोगिता के नए सोपान जुड़े।

श्रद्धेय न्यायमूर्ति जी मेरे पूज्य पिताजी के अभिन्न मित्र थे, मैं इनके सम्पर्क में बाल्यावस्था से रहा हूँ। निकट सम्बन्धों के आधार पर मुझे यह कहते हुए परम आनन्द की अनुभूति हो रही है कि उस महापुरुष ने ठेठ ग्रामीण अंचल में अपनी शिक्षा–दीक्षा पूर्ण करके मान्य उच्च न्यायालय इलाहाबाद के गरिमापूर्ण न्यायमूर्ति के पद को सुशोभित किया। मैं यह गर्व के साथ कह सकता हूँ कि उन्होंने अपनी लम्बी न्यायिक सेवा–अवधि में सदैव ईमानदारी, निष्पक्षता एवं मर्यादा का अक्षरशः पालन किया। निःसन्देह उनकी इस कार्यशैली से युवा पीढ़ी सदैव प्रेरणा प्राप्त करती रहेगी। यूं तो श्रद्धेय न्यायमूर्ति जी मानवीय सद्गुणों के भण्डार थे किंतु मैं उनकी सादगी एवं जीवन के प्रति सहजता की विशेषताओं को कभी विस्मृत नहीं कर पाऊंगा। सादा जीवन, उच्च विचार की वे साकार प्रतिमा थे।

मुझे विश्वास है कि **गुरुकुल पत्रिका** का उक्त विशेषांक समाज को नैतिक मूल्यों एवं चरित्र निर्माण के विकास की प्रेरणा प्रदान करेगा। श्रद्धेय न्यायमूर्ति जी के जीवन–वृत एवं कृतित्व से प्रभावित हो युवा पीढ़ी राष्ट्रीय हित में अग्रसर होगी, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है। मैं उस महान पुरूष के प्रति अपनी आस्था एवं श्रद्धा प्रगट करते हुए, गुरुकुल पत्रिका के उक्त विशेषांक की सफलता की शुभ कामना करता हूँ तथा गुरुकुल के सम्मानित अधिकारियों के प्रति आभार प्रगट करता हूँ कि उन्होंने न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी के प्रशंसनीय मानवीय गुणों को प्रसारित करने का शुभ संकल्प लिया।

सोमपाल

डा0 धर्मपाल
कुलपति
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार – 249404

साहिब सिंह
मुख्यमंत्री
SAHIB SINGH
CHIEF MINISTER

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार
GOVT. OF NATIONAL CAPITAL TERRITORY OF DELHI
पुरा सचिवालय, दिल्ली-110 054
OLD SECRETARIAT, DELHI-110 054
TEL. NO 2933161
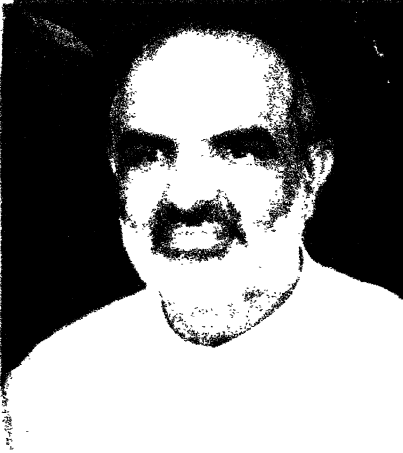
सन्देश

मुझे यह जानकार हार्दिक प्रसन्नता है कि **गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार** द्वारा श्री महावीर सिंह जी की वार्षिकी पर **गुरुकुल पत्रिका** के माध्यम से श्रद्धांजलि स्वरूप "न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक" प्रकाशित किया जा रहा है।

श्री महावीर सिंह जी, इलाहाबाद उच्च न्यायालय से बतौर न्यायाधीश सेवा निवृत्त हुए। अपनी विलक्षण बुद्धि एवं मधुर व्यवहार के कारण आपको आर्यों की सर्वोच्च सभा, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय सभा का अध्यक्ष मनोनीत किया गया था। आपने भारतीय संविधान का हिन्दी अनुवाद किया जो विधि छात्रों एवं विधि विशेषज्ञों के मध्य अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रशंसित हुआ। आप ऋषि दयानन्द के परम भक्त, आर्य समाज एवं समाज-सुधार के प्रत्येक कार्य में अग्रणी तथा हिन्दी एवं भारतीयता के लिए समर्पित रहे।

आशा है इस विशेषांक में श्री महावीर सिंह जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व संबंधी विस्तृत जानकारी होगी जिससे पाठक निस्संदेह लाभान्वित होंगे।

मैं, इस अवसर पर स्मृति अंक के सफल-प्रकाशन की कामना करता हूं।

(साहिब सिंह)

ओ३म्

सूर्यदेव

कुलाधिपति

गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
निवास - १८६२ चीराखाना मालीवाडा
चॉदनी चौक दिल्ली - ६
दूरभाष - ०११-३२६४१२६
३२७४७७१
३३६०१५०
२६६७४४०

सन्देश
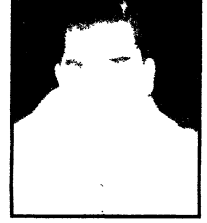
यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय "गुरुकुल पत्रिका" के विशेषांक के माध्यम से परिद्रष्टा न्यायमूर्ति स्व० महावीर सिंह को श्रद्धाञ्जलि देने के लिए कृतसंकल्प है।

न्यायमूर्ति श्री महावीर सिंह आर्यसमाज के साथ गहरे जुड़े हुए थे, वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्यायसभा के अध्यक्ष भी थे। मैंने उन्हें अत्यन्त निकट से देखा और उनकी कार्यशैली से अत्यन्त प्रभावित हुआ उनकी सरलता और कर्मठता अनुकरणीय है। मैं इस अवसर पर पत्रिका के सम्पादकों को अपनी शुभकामनाएं देता हूँ।

सूर्यदेव

डॉ0 धर्मपाल

कुलपति

।। ओ३म् ।।

फोन : 0133 – 416366 (ऑ0)
फोन : 0133 – 416235 (नि0)
फैक्स : 0133 – 416366
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार – 249404 (भारत)

'न्यायाधीश महावीर सिंह'

ब्रिटिश राज्य में लुप्त होती हुई भारतीय संस्कृति के रक्षण के लिए तीन महापुरुषों ने शिक्षा के माध्यम से इसकी रक्षा का प्रयास किया। उत्तर में ऋषि दयानन्द के परम शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द ने वैदिक साहित्य एवं संस्कृति को आधार बनाकर गुरुकुल कांगड़ी की, महामना मदन मोहन मालवीय ने पुराण साहित्य को वरीयता देते हुये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की तथा रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने शान्ति निकेतन की स्थापना की, जो मुख्यत: कला एवं संगीत को लेकर स्थापित की गई। गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों ने अपने कुलपिता के आदर्शों पर चलते हुए विभिन्न क्षेत्रों के अतिरिक्त पत्रकारिता के क्षेत्र में भी सराहनीय योगदान दिया। उसी क्रम में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की **"गुरुकुल पत्रिका"** भी प्रयासरत है।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने १६/४/९३ को अपनी बैठक में सर्वसम्मति से न्यायाधीश श्री महावीर सिंह जी को विश्वविद्यालय का परिद्रष्टा (विजिटिर) नियुक्त किया। स[illegible]ल एवं मधुरभाषी, परन्तु प्रत्येक शब्द से अपनी योग्यता की छाप छोड़ने वाले, सीधी-सतर [illegible]द काठी, दृढ़ता से बन्द होंठ, चेहरे से टपकती गम्भीरता, तरल आंखें, सादगी पूर्ण लिबास, भारतीय संस्कृति में रचा-बसा मन, हर नयी चीज को ग्रहण करने को उद्यत मस्तिष्क, ये था महावीर सिंह जी का बाह्य रूप।

आपको विदित ही है कि श्री महावीर सिंह जी इलाहबाद उच्च न्यायालय से अवकाश प्राप्त करने के बाद भी अपने सभी सहयोगियों के मध्य अपने मधुर व्यवहार के कारण लोकप्रिय बने रहे। जहाँ-जहाँ भी वे न्यायाधीश रहे अपनी न्याय-प्रियता के लिए वे आज भी याद किये जाते हैं। न्याय न केवल होना चाहिए अपितु दिखाई भी देना चाहिए, जिससे उभय पक्ष सन्तुष्ट हों, यही न्याय की विशेषता है इसीलिए आर्यो की सर्वोच्च सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी अत्यन्त महत्वपूर्ण न्यायार्य सभा का उन्हें अध्यक्ष मनोनीत किया था। इस रूप में उन्होंने अनेक समस्याओं को अत्यन्त सरल रूप में सुलझाने में सफलता प्राप्त की थी। सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्र में भी आपने सराहनीय कार्य किया।

श्री महावीर सिंह जी ने भारतीय संविधान का हिन्दी अनुवाद भी किया था, जो अपनी प्रामाणिकता एवं विद्वता-पूर्ण टिप्पणियों के लिए विधि छात्रों के लिए ही नहीं विधि विशेषज्ञों के मध्य भी अत्यन्त लोकप्रिय और प्रशंसित हुआ।

हिन्दी एवं भारतीयता के लिए समर्पित, ऋषि दयानन्द के परम भक्त, आर्य समाज एवं समाज-सुधार के प्रत्येक कार्य में अग्रणी, सिद्धान्तों से समझौता न करने वाले इस महापुरुष की स्मृति को अपने हृदय पटल पर अंकित करने हेतु विश्वविद्यालय उनकी वार्षिकी पर गुरूकुल पत्रिका के माध्यम से श्रद्धाञ्जलि स्वरूप **"न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक"** निकालने जा रहा है। इसके लिए पत्रिका के सम्पादक एवं सहयोगीगण धन्यवाद के पात्र हैं।

डॉ0 धर्मपाल
कुलपति

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पो.ओ.-गुरुकुल कांगड़ी
जिला-हरिद्वार-२४९४०४ (यू०पी०)
☎ : ०१३३- ४२७१११ कार्यालय
४२६८३५ निवास
फैक्स : ०१३३-४२७३६६

कुलसचिव

संदेश

यह प्रसन्नता का विषय है कि 'गुरुकुल पत्रिका' के माध्यम से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपने भूतपूर्व परिद्रष्टा, स्वर्गीय न्यायाधीश महावीर सिंह जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को चिरस्थायी रखने के लिए उनकी वार्षिकी पर एक विशेषांक प्रकाशित करने जा रहा है। निस्सन्देह यह अङ्क भावी पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक का कार्य करेगा। मैं इस अंक के निर्विघ्न प्रकाशनार्थ अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

(प्रो0 एस. एन. सिंह)

MEMBER OF PARLIAMENT
(LOK SABHA)

40, केनिंग लेन,
नई दिल्ली-110001
फोन : 3384958, 3385207
दिनांक : 9 जुलाई, 1998

सन्देश

यह हर्ष की बात है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपनी पत्रिका 'गुरुकुल पत्रिका' के माध्यम से पत्रकारिता के क्षेत्र में सराहनीय योगदान करता रहा है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इस बार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हिन्दी एवं भारतीयता के लिए समर्पित, ऋषि दयानन्द के परम भक्त, आर्य समाज एवं समाज-सुधार के प्रत्येक कार्य से अग्रणी, सिद्धान्तों से समझौता न करने वाले महापुरुष श्री महावीर सिंह जी की स्मृति में 'न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक' का प्रकाशन करने जा रहा है। आशा है इसमें प्रकाशित सामग्री पाठकों के लिए उपयोगी होगी। मैं इसके सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

आपका

(बलराम जाखड़)

प्रो० शेर सिंह
पूर्व रक्षा राज्यमंत्री

दूरभाष : 6859234, 6851716, 6857711,
फैक्स : 6522522
एम-14, साकेत
नई दिल्ली 11001

सन्देश

न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी वास्तव में न्याय की मूर्ति थे। वे सच्चे और ईमानदार न्यायाधीश थे और न्यायालय में उनकी न्यायप्रियता और सच्चरित्रता की छाप थी।

वे अपनी कुशाग्रबुद्धि और कानून तथा संविधान की विस्तृत जानकारी के लिये प्रसिद्ध थे। उत्तर प्रदेश में सहकारिता के जो कानून बने, उनके प्रवर्तकों में वे अग्रणी रहे। भारत के संविधान की हिन्दी भाषा में जितनी विस्तृत व्याख्या करके उन्होंने कई भागों में उसे छपवाया, वह हिन्दी साहित्य की अनमोल पूंजी है। हिन्दी भाषा में ही उन्होंने उत्तर प्रदेश के सहकारिता से सम्बन्धित कानूनों की टीकाएं भी छपवाई हैं। राष्ट्रभाषा की इतनी बड़ी सेवा इस क्षेत्र में इनसे बढ़कर शायद ही किसी ने की हो। उनके कुछ ग्रन्थों को पुरस्कृत भी किया गया।

श्री महावीर सिंह जी महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। उनकी राष्ट्रभक्ति, न्यायप्रियता और सच्चरित्रता आदि गुणों के कारण ही उनको सर्वसम्मति से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का परिद्रष्टा चुना गया, तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय सभा का अध्यक्ष। जो भी उत्तरदायित्व उनको सौंपा गया, उन्होंने उसे बड़ी योग्यता, निष्ठा और निष्पक्षता से निभाया।

ऐसे महानुभावों के लिये हमारी विनीत श्रद्धान्जलि।

(शेर सिंह)

दूरभाष – 6859234, 6851718
एम – 14, साकेत
नई दिल्ली – 110017

संदेश

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपने स्वर्गीय परिद्रष्टा जस्टिस महावीर सिंह की स्मृति में 'गुरुकुल पत्रिका' का अंक उनकी वार्षिकी पर निकालने जा रहा है। निश्चय ही यह प्रशंसनीय कदम है। इस अवसर पर मैं अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करती हूँ। यह अंक भावी पीढ़ी के लिए सत्य एवं न्याय के पथ पर आरूढ़ होने वालों के लिए मार्गदर्शक का कार्य करेगा।

(पण्डिता प्रभात शोभा)

स्थापित १९०८
रजिस्टर्ड : १९१४

।। ओ३म् ।।

तार : सार्वदेशिक (Sarvadeshik
फोन : ३२७४७७१, ३२६०९८५

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA

(International Aryan League)

महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान,
नई दिल्ली - ११०००२

प्रिय डा० धर्मपाल जी,

सप्रेम नमस्ते।

आपका पत्र मिला जिससे यह ज्ञात हुआ कि आप सभी गुरुकुलवासियों ने स्व० जस्टिस महावीर सिंह जी के प्रति उनकी सामाजिक सेवाओं को देखते हुये गुरुकुल पत्रिका विशेषांक तैयार करने का निश्चय किया है और साथ ही इस निमित्त एक स्मृति ग्रन्थ भी प्रकाशित करने का निर्णय लिया है।

वह एक साधारण ग्रामीण अन्चल में जन्म लेकर एल०एल०बी० की उच्च उपाधि प्राप्त करके इलाहाबाद हाईकोर्ट के जस्टिस नियुक्त हुए और वहां से अवकाश प्राप्त करने के बाद सुप्रीम कोर्ट में उन्होंने वकालत भी की। शिक्षा-क्षेत्र में आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के (परिद्रष्टा) विजिटर भी रहे ।

आपने विधि विधान पर कई पुस्तकें भी लिखीं, जो कि कानून के द्वारा मान्यता प्राप्त हैं।

आप सरल स्वभाव, विवादों से दूर, हंसमुख व्यक्तित्व के धनी थे। आज आप हमारे मध्य नहीं हैं, आपका अभाव हमें सदा ही अखरता रहेगा। आपका जीवन हमारे लिए प्रेरणदायक रहे, आयोजकों को मेरी बधाई और शुभकामनायें।

(सोमनाथ मरवाह)
कार्यकर्ता प्रधान
सार्व० सभा, दिल्ली

ओ३म्

पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
महर्षि दयानन्द वैदिक शोधपीठ
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
पूर्व उपकुलपति एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

आचार्य रामनाथ वेदालंकार
विद्यामार्तण्ड, एम.ए., पी-एच डी.
वेदमन्दिर, ज्वालापुर (हरिद्वार)
पिन- २४९४०७
दिनांक ९-८-९८

प्रिय कुलपति डॉ० धर्मपाल जी,

आपके पत्र से यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आप निकट भविष्य में विश्वविद्यालय की 'गुरुकुल पत्रिका' का 'न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक' निकाल रहे हैं। जब श्री माननीय महावीर सिंह जी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा बने, तब मेरा उनसे कुछ भी परिचय नहीं था। संभव है वे वैदिक लेखक आदि के रूप में मेरे विषय में कुछ जानकारी रखते हों।

एक दिन हमारे आश्रम निवासी एक छात्र ने मेरे पास आकर कहा कि गुरुकुल के परिद्रष्टा महोदय आप से मिलना चाहते हैं। मेरे यह पूछने पर कि कब कहाँ बुलाया है, उसने उत्तर दिया कि वे नीचे खड़े हैं। मैं ज्यों ही उनके स्वागतार्थ नीचे चलने लगा तब वह छात्र बोला कि उन्होंने केवल यह देखने के लिए मुझे भेजा है कि आप अपनी कुटी पर हैं या नहीं। फिर भी मैं जिस वेष में था वैसा ही उनकी अगवानी के लिए नीचे पहुँच गया और उन्हें साथ लेकर अपने कुटीर पर ऊपर आ गया। उन्होंने मुझ से मेरे परिचय की बहुत सी बातें पूछीं और गुरुकुल की कुछ समस्याओं पर भी विचार-विनिमय किया। वे बहुत प्रसन्न मुद्रा में मेरी बातें सुनते रहे। यह भी पूछा कि आप के समय के गुरुकुल में और आज के गुरुकुल में क्या अन्तर है तथा आज के गुरुकुल में आप की दृष्टि में क्या कमियाँ या खूबियाँ है। उन्होंने गुरुकुल से संबंध एक व्यक्ति के विषय में मेरी सम्मति भी जाननी चाही। मेरे मस्तिष्क में उन सज्जन का जो चित्र था वह मैंने उनके संमुख खींच दिया और निवेदन किया कि किस हेतु पूछ रहे है यह ज्ञात होने पर और अधिक कह सकता हूँ। परन्तु उन्होंने कहा कि आपने जितना बताया है उतना मेरे लिए पर्याप्त है।

रणबीर भाटिया

उप प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब

B XII - 316
शाहपुर रोड, लुधियाना
नि : 722038
का : 720176

सन्देश

आप के पत्र से मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपनी विख्यात-लोक प्रिय **'गुरुकुल पत्रिका'** में न्यायाधीश महावीर सिंह जी की वार्षिकी पर श्रद्धान्जलि स्वरूप "न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक" प्रकाशित कर रहा है। यह उत्तम कार्य निश्चित ही प्रशंसनीय तथा जनोपयोगी सिद्ध होगा। न्यायाधीश महावीर सिंह जी के उज्ज्वल चरित्र-उदार विचार देदीप्यमान व प्रेरणादायी जीवन प्रसंग हमारे जीवन के लिये न केवल प्रकाश स्तम्भ हैं अपितु आर्य जगत् की अमूल्य निधि हैं। आपके सम्पर्क मात्र से ही न जाने कितने लोगों की काया पलट हो गई। आप जैसे महान् जीवन पुंज का बृहद् विशेष अंक प्रकाशित करना उपयोगिता की दृष्टि से अति महान् होगा।

जब यह महामना सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय सभा के अध्यक्ष थे तो मुझे इनसे मिलने का अवसर मिला था आप मिलनसार मधुर भाषी शीतल स्वभाव तथा आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे। न्याय सभा के अध्यक्ष पद पर रहते समय आपने जो कार्य किये हैं। उनकी महत्ता सर्वविदित है। आर्य धर्म और संस्कृति की रक्षा और समाज को स्वस्थ बनाने की दिशा में उनका प्रयास सर्वथा सराहनीय रहा है। आपके उत्तम कार्यों की अमिट छाप भुलायीं नहीं जा सकती। कृतज्ञ आर्य जगत् सदा उनका अभारी रहेगा।

आप द्वारा प्रकाशित हो रहे इस विशेष अंक में उनके जीवन के प्रति खोज पूर्ण लेख होंगे जो निश्चय ही प्रेरणादायक होंगे। मैं न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक की सफलता के लिये अनेकों शुभ कामनाएं देता हूं।

(रणबीर भाटिया)

।।ओ३म् ।।

श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट, टंकारा

उपकार्यालयः आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली - 110001 दूरभाष : 3363718, 3362110
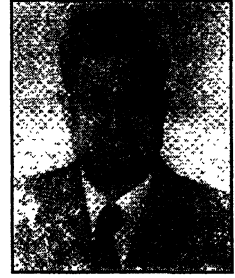
आदरणीय डॉ० धर्मपाल जी,

सादर नमस्ते।

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की तपोभूमि गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी से सतत प्रकाशित 'गुरुकुल पत्रिका' का एक विशेषांक आप 'न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक' के नाम से प्रकाशित करने जा रहे हैं।

मेरी दृष्टि में यह प्रयास अत्यन्त ही सराहनीय है। पुरानी पीढ़ी के विशिष्ट महानुभावों के व्यक्तित्व एंव कृतित्व से नई पीढ़ी का भावनात्मक सम्पर्क सूत्र बना रहे, यह बहुत आवश्यक है।

न्यायाधीश महावीर सिंह जी प्रसिद्ध न्यायविद् होने के साथ-साथ अन्य अनेक विशेषताओं से विभूषित थे। उनकी स्मृति चिन्तनशीलता एवं कार्य के प्रति उत्साह का सृजन करती है।

मैं आपके इस पुण्य प्रयास का हार्दिक अभिनन्दन करता हुआ, प्रस्तुत विशेषांक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

शुभकामनाओं सहित--

भवदीय

(रामनाथ सहगल)
मन्त्री

ओ३म्

डा0 भवानीलाल भारतीय

उपप्रधान–परोपकारिणी सभा
(स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित)
प्रबन्ध सम्पादक – परोपकारी मासिक
अध्यक्ष–आर्य लेखक परिषद्
(सेवा निवृत्त अध्यक्ष एवं प्रोफेसर–
दयानन्द शोधपीठ पंजाब विश्वविद्यालय)

दूरभाष : 6 2 8 3 8 3

'रत्नाकर', 8/423, नन्दनवन,
चौपासनी आवासन मण्डल,
जोधपुर-342008 (राजस्थान)

न्यायाधीश महावीर सिंह स्मृति अंक

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल पत्रिका प्रसिद्व न्यायविद्, धाराशास्त्री तथा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व परिद्रष्टा श्री जस्टिस महावीर सिंह की पुण्य स्मृति में एक विशेषांक का प्रकाशन कर रही है। न्याय के लिए समर्पित स्व. न्यायमूर्ति ने इलाहबाद हाई कोर्ट से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् अपना अधिकांश समय समाज सेवा तथा शिक्षा जगत् को समर्पित किया था। वे ऋषि दयानन्द तथा आर्य समाज के अनन्य भक्त तथा निष्ठावान कार्यकर्ता थे। आशा है कि स्मृति ग्रन्थ उस महापुरुष के प्रति हमारी श्रद्वा को सुदृढ़ करने में सफल होगा।

डा. भवानीलाल भारतीय

Summmu Manufacturing Ing.

Manufactuer of Tublar Steel Polor.

225 kiwnisbld , vamant Industrial Park , West hazicton, Pa. 18201 (717) 454, 8730 Fax : (717) 454: 5946

Dr. Dharampal

Kulpati

Gurukul Kangri

Haridwar U.P. - 249404

India

Via Facsimile & Fed-Ex Mail

Shri Dharmpal,

It is an honor to receive this letter from you I am at the time thankful for your support and dedication to publish the special edition for beloved Uncle Justice Mahavir by a great Institution like yours.

I have been living in North American continent for past 31 years. My thinking and ideas have constantly changed while living in influentail western society. However there are words, advises and values which Shri Mahavir Singh spoke to me about have remained unchanged. Most important of all he gave me these two important advises which I have always practiced.

1. Work as hard as your can and have no idle time that you can not account for.
2. You need to have satisfaction of doing the right thing. Be responsible to your past, friends & family as well as being a part of contribution to the society.

These are among many advises I have been fortunate enough to receive from my uncle and I have not forgotten.

Justice Mahavir Singh was a character of inspiration and courage to me as well as hundreds of others. His objectives and goals will always alive be for generations to come.

Respectfully,

Raj Pawar
President
Chief Operating Officer

गु०कां०वि०वि० के ६५वें दीक्षान्त समारोह स्थल पर खड़े हुए बायें से दायें-

श्री हरवंशलाल शर्मा (प्रधान, आ०प्र०स० पञ्जाब)

जस्टिस महावीर सिंह जी (परिद्रष्टा),

सूर्यदेव जी (कुलाधिपति), डॉ० धर्मपाल जी (कुलपति)

पीछे- चौ० ऋषिपाल सिंह एडवोकेट (पञ्जाब), श्री मण्डन मिश्र जी,

डॉ० पुरुपोत्तम कौशिक, डॉ० एस.एल. सिंह आदि।

९५वें दीक्षान्त समारोह में बायें से दाये-

श्री सूर्यदेव जी (कुलाधिपति), जस्टिस महावीर सिंह जी,

डॉ० जयदेव वेदालंकार (तत्कालीन कुलसचिव)

पीछे-

स्व० आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार, डॉ० धर्मपाल जी (कुलपति)

गु०कां०वि०वि० के ६५वें दीक्षान्त समारोह में यज्ञ करते हुए
जस्टिस महावीर सिंह जी, साथ में बैठे हुए श्री सूर्यदेव जी,
तत्कालीन लोकसभाध्यक्ष शिवराज पाटिल,
कुलपति डॉ० धर्मपाल जी, आचार्य राम प्रसाद जी एवं अन्य

Debi Singh Tewatia

A-27/15, DLF Qutab Enclave, Phase-1
Gurgaon-122002 (Har) Ph.: 350797

I am glad to know that **Gurukul Kangri University** in honouring Late Justice Mahabir Singh by bringing out a special issue of **'Gurukul Patrika'** and dedicating it to the Memory of Justice Mahabir Singh.

Justice Mahabir Singh deserved no less honour. An overview of his life's activities would bring into bold relief his multi faceted personality. He was distingueshed juist a celeberated author, a social activist and an educationist. In his dealings he was generous and very fair minded. He was honesty and simplicity personified. In his demise an year ago we lost an outstanding and memorable person.

I Join you in remembering late Justice Mahabir Singh Ji.

With warm regards.

(Debi Singh Tewatia)

संस्मरण / लेख

संस्मरण-न्यायाधीश श्री महावीर सिंह

-महावीर सिंह
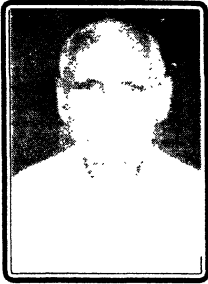
वह हमारे निकट सम्बन्धी एवं आत्मीयजन थे, उनकी बड़ी बहन सुशीला का विवाह मेरे ज्येष्ठ भ्राता कैप्टन महाराज सिंह के साथ हुआ था, जो १९४८ में कश्मीर युद्ध में शहीद हो गये तथा सुशीला भाभी का उनसे पहले ही स्वर्गवास हो चुका था। हमारे दोनों परिवार आर्य समाज के संस्कार तथा राष्ट्रीय-विचारधारा से ओत-प्रोत रहे हैं, जिन्होंने क्षेत्र व समाज की यथाशक्ति सेवा करने में अपनी शक्ति लगाई। अत: स्वाभाविक तौर पर सम्बन्ध-सूत्र में बंधकर दोनों परिवारों में अत्यन्त घनिष्ठता एवं प्रेम का संचार हुआ।

बचपन से ही मुझे अपने पाँचों भाईयों में कनिष्ठ होने के नाते सबसे बड़ी भाभी श्रीमती सुशीला के साथ उनके एलम परिवार में जाने का प्राय: अवसर मिलने के कारण महावीर सिंह जी के समस्त परिवार के निकट सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिससे सुसंस्कारित होने में काफी सहायता मिली। बच्चों की भांति मैं उनके परिवार में पूर्णतया घुल-मिल गया था। जहां एक ओर मुझे उनके पिताजी, चौ० जीत सिंह तथा चचेरे भाई पं० गंगाराम जी (जिन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम में सक्रिय भाग लिया था) से अच्छे संस्कार मिले, वहीं दूसरी ओर श्री महावीर सिंह जी के सरल, सौम्य एवं निष्छल व्यक्तित्व से मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ और उनके प्रति सदैव मेरे हृदय में श्रद्धा, प्रेम व सम्मान बढ़ता चला गया।

वह महान् व्यक्तित्व के धनी थे, जिनमें आत्मीयता, सज्जनता एवं मानवीयता कूट-कूट कर भरी थी। उनमें किसी प्रकार का लेषमात्र भी भेदभाव नहीं था। वह एक साधारण किसान परिवार में जन्में थे, जिन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करके तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के उच्च पद पर पहुँचकर भी ग्रामीण परिवेश को कभी नहीं भूला। पश्चिमी उत्तर प्रदेश का प्रत्येक किसान उनको अपना परम सहयोगी एवं हितचिन्तक समझता था। वह किसानों को नि:शुल्क विधि-परामर्श देते थे तथा स्वयं एक ग्रामीणजन की भांति व्यवहार करते थे। उनका निष्कपट हृदय था, बनावट उनको छू तक नहीं गई थी।

वह सरल स्वभाव के अत्यन्त समझदार, योग्य, लग्नशील व्यक्ति थे। वह जहां कानून के प्रकाण्ड विद्वान् थे, वहां वह आत्म-ज्ञान से भी भरपूर थे, वह सदैव समाज एवं राष्ट्रहित में सोचते थे। उनकी कथनी व करनी में कभी कोई अन्तर नहीं रहा। उनका आदर्श सादा जीवन व उच्च-विचार था। कुछ दिनों राजनीति में रहकर भी उन्होंने अपने स्वभाव को नहीं बदला। वह वास्तव में एक प्रकार से राजर्षि थे। वह नदी में नाव की भांति रहते हुए संसार की वस्तुओं में कभी लिप्त नहीं हुए। वह एक सेवापरायण, ईमानदार एवं व्यवहार कुशल व्यक्ति थे। उनमें सबसे बड़ा गुण यह था कि वह विनम्रता की मूर्ति थे। गांधी जी ने अपने एकादश व्रतों के पालन के लिये विनम्रता का धारण करना अत्यन्त आवश्यक बताया था तथा यह गुण उनमें साक्षात् विद्यमान था।

मेरा उनसे काफी सम्पर्क रहा। वह मुझे लघु भ्राता के समान प्यार करते थे। मैंने उनको कभी क्रोध में नहीं देखा। काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार उन पर कभी हावी नहीं हो सका। उनका बच्चों जैसा सरल एवं निश्छल स्वभाव था, वैर-भाव, वैमनस्यता उनको छू तक नहीं गया था। उन्होंने एम०ए०, एल०एल०बी० तक प्रथम श्रेणी में शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् पहले कुछ दिनों तक मु० नगर में वकालत की तथा बाद में उन्होंने जाट वैदिक कालेज बड़ौत में अर्थशास्त्र के प्रवक्ता के नाते अध्यापन कार्य किया। वह जहां कालेज में अपनी विद्वता की छाप छोड़ते थे, वहीं छात्रों में अपनी व्यवहार कुशलता एवं मृदु स्वभाव के कारण काफी लोकप्रिय थे। उस समय मैं ७-८ कक्षाओं का छात्र था। वह अपने सीधे-सादे ग्रामीण सम्बन्धियों के साथ भी उसी प्रकार आत्मीयता का व्यवहार करते थे, जैसा अन्य शिक्षित एवं उच्च स्तर के सम्बन्धियों एवं मित्रों के साथ वह सबको उचित सम्मान प्रदान करते थे, भेदभाव तो वह जानते ही नहीं थे।

वह सबकी सहायता करते और सबको अच्छी सलाह देते। उन्होंने अपने माता-पिता की जिस निष्ठापूर्वक सेवा की, आज का शिक्षित उच्च पद का व्यक्ति आसानी से नहीं कर सकता। माता पिता जो आज्ञा देते, उन्हें सदा शिरोधार्य करते। वह वर्तमान युग के एक प्रकार से श्रवण कुमार कहे जा सकते थे। एक बार उनके पिताजी के पैर में चोट लग गई थी, उस समय वह रामपुर में जिला न्यायाधीश थे, तथा मैं लखनऊ में अधिसूचना विभाग में नियुक्त था। वह पिताजी को उनके आप्रेशन हेतु लखनऊ ले गये तथा मेरे पास ठहरे। पिताजी को मैडिकल कालेज में भर्ती कराया गया। वह रात्री में उनके पास अस्पताल में रहते तथा प्राय: रातभर उन्हें जागना पड़ता था। पिताजी को भी उनके बिना संतोष

नहीं होता था, उनकी इस सेवा-सुश्रूषा में उनकी पत्नि का भी अत्याधिक योगदान रहा, जिसे भुलाया नहीं जा सकता। अतिथि-सत्कार में वह अत्यन्त निपुण तथा व्यवहारकुशल थीं, जिनका उनसे कई वर्ष पूर्व स्वर्गवास हो गया। दोनों पति-पत्नि वास्तव में त्यागमूर्ति थे, जिनका स्मरण हृदय-पटल पर सदैव अंकित रहेगा।

वह जहां एक न्यायाधीश एवं प्रशासक के रूप में कार्य करते थे, वहीं राष्ट्रभाषा हिन्दी के समर्थक रहे, उन्होंने विधि सम्बन्धी कई पुस्तकें भी लिखी तथा राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किये। उच्च न्यायालय, इलाहाबाद में हिन्दी भाषा में प्रथम बार उन्होंने एक केस का निर्णय लिखकर एक उदाहरण प्रस्तुत किया था। हिन्दी के इस योगदान के लिये उन्हें सदैव स्मरण किया जायेगा।

महावीर सिंह न्यायाधीश जैसे सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति समाज में कठिनाई से मिलते हैं। उस पावन आत्मा के प्रति हम नतमस्तक हैं तथा सदैव उनके ऋणी रहेंगे।

हम दोनों की भांति हमारे दोनों के पिताजी भी एक ही नाम राशि (जीत सिंह के नाम) के थे। मेरे पिताजी जज साहब के गुणों के कारण उन्हें बेहद प्यार करते थे और वह भी पिताजी का अत्यधिक सम्मान करते, उन्हें भी पिताजी के समान मानते थे तथा उनके राय-मशवरे को जज साहब सही मानकर उसका हृदय से पालन करते थे। यही कारण था कि मेरे पिताजी के कहने से उन्होंने चौ० लहरी सिंह, भूतपूर्व मंत्री, हरियाणा की भतीजी, होशियारी देवी (जो लगभग निरक्षर थी, क्योंकि उन दिनों बालिका शिक्षा का अत्यन्त अभाव था) के साथ अपना विवाह स्वीकार कर लिया, जबकि उनके परिवार के अन्य सदस्य इस रिश्ते से पूर्णतया सहमत नहीं थे। परन्तु इस नवदम्पत्ति ने केवल एक दूसरे का साथ ही नहीं निभाया, बल्कि जजसाहब की उन्नति में उनकी पत्नी ने चार चांद लगा दिये। जज साहब ने अपने सरल स्वभाव के अनुसार परस्पर सामंजस्य करके अपनी पत्नि का सदैव हार्दिक सम्मान किया और पत्नि के स्वर्गवास हो जाने के बाद तो वह उनका फोटो अपने शयन कक्ष में ही रखते थे तथा अपनी सामाजिक उन्नति में उनको अत्यधिक श्रेय देते थे। उनकी पत्नि वास्तव में देवी तुल्य थी तथा घर पर दूर देहात से आने वाले परिचित, अपरिचित व्यक्तियों का भी हृदय से सम्मान व अतिथि-सत्कार करती थी, जिससे जजसाहब का सामाजिक जीवन उन्नत होता चला गया तथा वह पारिवारिक जिम्मेदारियों से निश्चिन्त होकर अपना बाह्य सामाजिक कार्य करते रहे। अत: जज साहब के साथ उनकी पत्नि का स्मरण आवश्यक प्रतीत होता है।

यद्यपि उनकी पत्नि, श्रीमती होशियारी देवी बहुत कम पढ़ी-लिखी थी, परन्तु उनकी सूझ-बूझ व समझदारी किसी विदुषी महिला से कम नहीं थी। एक बार जब श्री महावीर सिंह जनपद बदायूं के जिला न्यायाधीश थे, उनके समक्ष एक महत्वपूर्ण विधायक की हत्या का केस आया, जिसमें कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को भी रंजिशन व पार्टी-बन्दी के कारण अभियुक्त बना रखा था, उन्होंने सही साक्ष्य के अभाव में उनको बरी कर दिया, परन्तु उनके लिये यह कहर हो गया और कठिनाइयों के पहाड़ उन पर टूट पड़े। उपरोक्त विधायक काफी प्रभावशाली तथा जमींदार परिवार से सम्बन्ध रखता था तथा उनके एक भाई उस समय पुलिस में डी०आई०जी० थे, तथा तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री कमलापति त्रिपाठी उनके सम्बन्धी थे, जिनके बल पर पुलिस द्वारा जज साहब के विरुद्ध तरह-तरह के झूठे आरोप गढ़े गये तथ उन्हें तथा उनके परिवार को परेशान करने में कोई कमी नहीं रखी गई। परन्तु जहां एक ओर जज साहब स्वयं दृढ़ तथा निष्पक्ष बने रहकर सब कठिनाई झेलते रहे, उनकी पत्नि होशियारी देवी ने भी जज साहब की अनुपस्थिति में पुलिस व अन्य विभागों की ज्यादतियं का दृढ़ता एवं निडरतापूर्वक सामना किया तथा धैर्य का बांध टूटने नहीं दिया। अन्त में वही हुआ, जैसा कि कहावत है "सच्चाई को आँच नहीं।" पुलिस या अन्य कोई उनका कुछ नहीं बिगाड़ सका। बाद में उपरोक्त हत्या कांड की अपील में किसी प्रकार उच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त बरी किये गये अभियुक्तों को सजादे दी गई, परन्तु अन्त में उच्चतम न्यायालय द्वारा श्री महावीर सिंह जी का निर्णय ही अप-होल्ड रखा गया। वास्तव में यह उनकी नैतिक विजय थी। इस प्रकार जज साहब ने कानून के इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण पेश किये जिससे न्याय की तराजू को कभी झुकना नहीं पड़ा। वह सदैव दुखी, पीड़ितों की विशेष तौर पर सुनवाई व सहायता करते थे, गलत कार्य करने में वह निकट सम्बन्धियों तक को भी कोई सहयोग देने में साफ इंकार कर देते थे, चाहे कोई अप्रसन्न भी क्यों न हो जाय? परन्तु दूसरी ओर सभी से सहानुभूति रखते तथा उनके सही कार्यों में पूरा-पूरा सहयोग देते तथा मदद करते। वह मुझसे काफी प्रसन्न रहते थे तथा मेरे बिना कहे ही आवश्यकतानुसार मेरी सहायता करते रहते थे।

उनके मानवीय गुणों को भुलाया नहीं जा सकता तथा मेरे हृदय-पटल पर उनकी स्मृति सदैव बनी रहेगी। उन्होंने अपने बच्चों के साथ भी कभी कठोर व्यवहार नहीं किया, वह छोटे बड़े सबसे मित्रवत् व्यवहार रखते थे। उनके दोनों पुत्र कर्नल भूपेन्द्र तथा योगेन्द्र, आई०ए०एस०/आई०एस०एस० (जो विदेश सेवा में है) तथा तीनों पुत्रियां भी काफी योग्य तथा माता-पिता के गुणों को आत्मसात् किये हुये हैं। आशा है कि वे सभी उनके छोड़े हुए कार्य को पूरा करने का पूर्ण प्रयास करेंगे।

वह अपनी सरकारी सर्विस करते हुए समाज-सेवा करने में सदैव अग्रणीय रहे। सूरजमल-ट्रस्ट, जनकपुरी, दिल्ली को उसकी मजबूत नींव पर खड़ा करने में उनका अत्यन्त योगदान रहा। सर्विस करते हुये, वह प्रत्येक सप्ताह के रविवार को इधर-उधर जाकर उसके लाइफ-मैम्बर बनाना उनका एक नियम ही बन गया था। उन्होंने आर्यसमाज के क्षेत्र में भी अपना काफी योगदान दिया तथा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वह "विजीटर" रहे।

महावीर सिंह एक बहुआयामी व्यक्तित्व का नाम है। समाज में उनके गुणों की गहरी छाप थी। तथा सभी क्षेत्रों में, चाहे वह सामाजिक हो या राजनैतिक क्षेत्र, वह आसानी से ग्राह्य थे। आपराधिक क्षेत्र में भी उनकी सज्जनता का गहरा प्रभाव था। एक बार जब वह जनपद शाहजहाँपुर में जिला न्यायाधीश थे, एक दिन शनिवार को अपने न्यायालय में एक डकैती केस के जघन्य अपराधियों की सुनवाई की थी, सायं को न्यायालय से ही कार्य समाप्त करके जज साहब अपने नियमानुसार ट्रेन की द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में बैठने लगे, तो उन्होंने देखा कि उसी डिब्बे में वे सब अभियुक्त जो उनके समक्ष उस दिन न्यायालय में अपने डकैती केस की सुनवाई के लिये गये थे, बैठे हुये मिले। जैसा कि उन्होंने स्वयं मुझे बतलाया था कि एक बार तो वह उन्हें देखकर थोड़ा घबरा गये, परन्तु वे अभियुक्त जज साहब को देखकर एकदम उनका सम्मान करते हुए खड़े हो गये और अपनी सीट उन्हें बैठने के लिए दी। फिर जज साहब भी उन लोगों से आत्मीयता से बात-चीत करते गये। वह निजी कार्यों के लिये साधारण श्रेणी में ही सफर करते थे। उनमें किंचित् मात्र भी बनावट नहीं थी। वह राष्ट्र-भक्त एवं स्वाभिमानी होते हुए मृदुल एवं व्यवहार कुशल व्यक्ति थे।

उन्होंने कुछ दिनों तक राजनीतिक क्षेत्र में भी कार्य किया, परन्तु बेहद घुटन के साथ। उनके साथ वहां पर न्याय नहीं किया गया। चूंकि वह अपना स्वधर्म छोड़कर अवसरवादी नहीं हो सकते थे, अतः राजनीति की आपाधापी में वह अपना उचित स्थान नहीं पा सके। मेरे विचार से यदि वे सीधे-सीधे सामाजिक क्षेत्र में उतरते, तो अधिक सफलता प्राप्त कर सकते थे और अधिक कार्य कर सकते थे। वह विशेष तौर पर उ०प्र० के ग्रामीण क्षेत्र के जाने-माने व्यक्ति थे। किसान वर्ग उन्हें अत्यधिक श्रद्धा एवं आदर से देखता था।

एक बार जज साहब की नियुक्ति लखनऊ में हुई थी, कुछ दिनों तक वह अकेले मेरे पास रहे, क्योंकि मकान उन्हें नहीं मिल पाया था। वह किराये का मकान तलाश करते थे, तो छोटे मकान को देखकर कहा करते थे कि मुझे तो भाई बड़ा मकान चाहिये।

क्योंकि दो कमरों की तो उन्हें अपने दो पिताओं के लिये जरूरत पड़ेगी। यह सुनकर लोगों को आश्चर्य होता था कि जजसाहब के दो पिता कैसे हो सकते हैं ? इस पर वह हंसकर बताते कि एक मेरे पिता और दूसरे मेरी पत्नि के पिता (जो भी उनके पिता समान हैं) तो लोगों के हृदय में यह सुनकर उनके सरल एवं सच्चे जीवन के प्रति सम्मान उत्पन्न होता। वास्तव में वह तथाकथित अपने दोनों पिताओं में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करते थे। मकान में उन दोनों बुजुर्गों के लिये अलग-अलग एक कमरा रहता था। उनकी पत्नी श्रीमती होशियारी देवी अपने पिता चौ० कन्हैया सिंह की अकेली सन्तान थी और वह भी अपने दोनों पिताओं को बराबर का सम्मान देती और उनकी हृदय से सेवा सुश्रुषा करती थी। उनके पिता भी मृत्यु के उपरान्त उनके साथ ही रहे। जबकि उनसे किसी प्रकार का लोभ-लालच भी नहीं था, क्योंकि चौ० कन्हैया सिंह जी ने अपनी सब अचल सम्पत्ति (जमीन जायदाद) ग्राम भगान (हरियाणा) में अपने भाईयों के लिये छोड़ दी थी। यही कारण है कि भगान का खानदान आज भी जजसाहब व उनकी पत्नी के प्रति अत्यन्त सम्मान रखता है। वास्तव में जज साहब व उनकी पत्नी होशियारी देवी के हृदय अत्यन्त विशाल थे और किसी प्रकार लोभ-लालच व संकीर्णता उनको छू तक नहीं गई थी। ऐसी दम्पत्ति जोड़ी का समाज में मिल पाना कठिन है।

ईश्वर उन दोनों पावन आत्माओं को स्वर्ग में शान्ति प्रदान करें।

पूर्व पुलिस उपाधीक्षक
ग्राम : फैजपुर निनाना
जि० : बागपत (उ०प्र०)

❑ ❑ ❑

आज के युग के महापुरुष

–वेदपाल सिंह
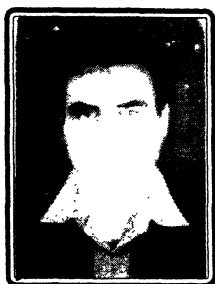
कुछ मनुष्य संसार में जन्म लेकर जीवन प्रर्यन्त, धनोपार्जन करके संसार से विदाई लेते हैं। कुछ अपने अयोग्य, व्यभिचारी, मद्यान्ध, धर्मान्ध, स्त्री, पुत्र एवं पुत्रियों के मोह में, येन केन प्रकारेण धन कमाकर, उनपर अपव्यय करते रहते हैं तब संसार को छोड़ते हैं। कुछ जीवन भर दूसरों के अधिकारों को छीनकर, अनैतिक कार्य करके, सदैव झूठ व चालाकी का सहारा लेकर, इस संसार से विदाई लेते हैं। लेकिन आज के युग में ऐसे इन्सान बहुत कुम हैं जो ईमानदारी व सादगी से जीवन जीकर सदैव दूसरों का हित करते हैं, नैतिक मूल्यों की रक्षा करते हैं, देश व समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को बखुबी निभाते हैं और तब इस संसार को अलबिदा कहते हैं। पूर्व न्यायधीश श्री महावीर सिंह आज के युग में जन्मे ऐसे महापुरुष हुए जिन्होंने अपना मूल्यवान् जीवन सदैव दूसरों के हित में, देश व समाज के हित में न्यौछावर कर दिया, ईमानदार व सादगी तथा नैतिक मूल्य अपने जीवन में अपना कर।

सादगी व उज्जवल चरित्र के प्रतीक, ईमानदारी के प्रतीक, दूसरों की सेवा भाव के प्रतीक, देश प्रेम के प्रतीक अपनी जन्मभूमि के प्रेम के प्रतीक, एलम ग्राम जनपद मु० नगर में जन्मे श्री महावीर सिंह का बाल्यजीवन आर्थिक कठिनाई में बीता ज्यों-त्यों करके पूजनीय पिता जी, स्वर्गीय श्री जीत सिंह ने अध्ययन पर खर्च किया तब सर्व प्रथम उन्हें एक शिक्षक के रूप में फिर मुन्सफ के रूप में कामयाब कराया। बाद में उनका ही परिश्रम था जो जनपद न्यायाधीश के रूप में और इलाहाबाद उच्चन्यायालय के न्यायधीश के रूप में नियुक्त हुए और वहीं से सेवानिवृत्त हुए।

न्यायाधीश श्री महाबीर सिंह आर्य समाज की विचारधारा में अटूट विश्वास रखते थे, उनकी इसी विचारधारा के कारण तथा न्यायप्रिय होने के कारण आर्यो की सर्वोच्च सभा, "सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा" ने अपनी महत्वपूर्ण न्यायार्य सभा का उन्हें अध्यक्ष मनोनीत किया था। राजनैतिक क्षेत्र में भी निःस्वार्थ सेवाभाव से कार्य करते हुए कभी भी उन्होंने पद की इच्छा नहीं की, हां उन्हें या उनके स्वाभिमान को ललकारने की कोशिश की तो चुनाव से भी पीछे नहीं हटे, भले ही उसका कुछ भी परिणाम हो। सामाजिक कायों में तथा सामाजिक सेवा में तो आजकल के नौजवानों को मात दे रक्खी थी। सेवानिवृत्ति के बाद सामाजिक कार्यो में बढ़ चढ़कर भाग लेते रहते थे यहां तक कि किसानों के हित में महेन्द्र सिंह टिकैत द्वारा बनाये गये संगठन

में उनके ही आमन्त्रण पर सक्रिय भाग लेते रहे, किसानों के लिए संघर्ष करते रहे और जब यहां पर भी उनके स्वाभिमान को ठेस पहुंची तो बड़ी सहजता से इससे अलग हो गये।

उच्च न्यायालय के न्यायधीश पद पर आसीन होकर या अन्य उच्च पदों पर आसीन शायद कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो साधारण इन्सान की भांति जीवन जीकर दूसरों के दुःख दर्द के लिए संघर्ष करता रहा हो बल्कि इसके विपरीत शहर की अलीशान कोठियों से बाहर निकलना भी पसन्द नहीं करते लेकिन न्यायाधीश श्री महावीर सिंह ने दिन रात एक करके करीबन सभी वर्गो के संगठन में भाग लेकर उनकी पीड़ा यथासम्भव कम करने की कोशिश की।

इस कर्मवीर ने एलम कस्बा (जन्मभूमि) में अपनी निजि सम्पत्ति पर सन् १९८६ में एक महिला आई०टी०आई० जो भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है, की स्थापना की। मेरे जैसे कुछ व्यक्तियों का सहयोग लेकर अन्तिम सांस तक इस संस्थान को दान देकर इसे फलीभूत किया। इस क्षेत्र की हजारों बहन और बेटियां डिप्लोमा लेकर लाभान्वित हो चुकी हैं। रुग्ण अवस्था में जब भी उनसे मुलाकात होती थी तो शैय्या पर लेटे-लेटे भी अपनी संस्था के भविष्य के विषय में सोचते रहते थे अपने परिवार को समझाते थे कि मेरे मरणोपरान्त इस संस्था का विशेष ध्यान रखना। उनकी सादगी की एक छोटी-सी याद आती है शायद किसान संगठन में भाग लेने हेतु सिसौली कस्बा गये हुए थे वहां से कुछ सामाजिक कार्य हेतु दूसरी जगह चले गये सुबह सवेरे अपनी प्रिय संस्था आई०टी०आई० में पहुंचने के कारण रातभर बस द्वारा यात्रा की जब एलम स्टैण्ड पर पहुंचे तो देखते हैं कि यह दुबला पतला इन्सान एक साधारण से खोखे में बैठकर अपनी दाढ़ी बनवा रहा है समय का सदुपयोग कर रहा है इस समय जो व्यक्ति उन्हें देखता है सहम जाता है और उन्हें हैरानी होती है लेकिन वे भूल जाते हैं कि कितनी सादगी थी उनमें और कितनी इन्सानियत की पराकाष्ठा।

उन्होंने अपना ७५वां जन्म दिन अपने ही कस्बे एलम में सादगी से अपनी जन्मभूमि पर मनाया। जब इस महापुरुष को अपनी बीमारी के समय यह एहसास हो गया कि अब तो इस संसार से विदा ही होना है तो परिवारजनों को कहते हैं कि मेरा दाहसंस्कार उस मिट्टी में करना जिसमें मैं पैदा हुआ हूं ताकि इस क्षेत्र की अधिक से अधिक जनता मेरे अन्तिम दर्शन कर सके, और कहते हैं कि दाह संस्कार के पश्चात् मेरी राख को हरे भरे खेतों में फेंक देना, मेरी अस्थियों को गंगा में विसर्जित कर देना ताकि मेरे शरीर का एक एक कण इस देश की पवित्र मिट्टी में मिल जाये।

इस तपोभूमि की पवित्रात्मा को मेरा कोटि-कोटि प्रणाम।

प्रधानाचार्य
हरचन्दमल जैन इण्टर कालेज
टीकरी (मेरठ) उ.प्र.

जस्टिस महावीर सिंह : एक महामानव

–मास्टर भूपाल सिंह पँवार

मेरा श्री महावीर सिंह जी से निकट का सम्बन्ध है। मेरे पिता जी एवं श्री महावीर सिंह जी सगे तहेरे चचेरे भाई थे।

श्री महावीर सिंह जी का जन्म कोटा (राजस्थान) में हुआ था। उनके पिता जी श्री जीत सिंह कोटा रियासत में जंगलात विभाग में नौकरी करते थे। उनके पिता जी के अक्सर तबादले होते रहते थे। एक बार श्री महावीर सिंह जब अपने पिता जी के साथ गांव आये तो कहने लगे कि पिताजी सब के तबादले होते हैं ताऊ जी का तबादला नहीं होता, उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि ताऊ जी नौकरी नहीं करते हैं।

उनकी प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर इन्टर तक की कोटा में ही हुई। शुरु से ही वे मेधावी और मितव्ययी रहे। बी०ए० इलाहाबाद से तथा एम०ए०, एल०एल०बी० दोनों एक साथ लखनऊ विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में किया। गोल्ड मैडेलिस्ट रहे जिमनास्टिक के चैम्पियन एवं टैनिस के खिलाड़ी थे। शुरु से ही इनकी रुचि सादे पहनावे में रही। कुर्ता पायजामा बन्डी धोती यह उनका पहनावा था। वे कहा करते थे कि भई हमने तो एम०ए० में जाकर एक पैन्ट सिलाई थी।

सादा इतने की पढ़ाई के अलावा दूसरी बातों पर ध्यान नहीं देते थे। वो सुनाया करते थे कि एम०ए० तक हमें यह पता नहीं था कि अपने प्रोफेसरों को खुश रखने के लिये उनके घर पर भी जाना चाहिये। हमारे साथी ऐसा करते थे।

एम०ए०, एल०एल०बी० करने के बाद १९४४ में मेरठ में वकालत की ट्रेनिंग की उसके बाद मुजफ्फरनगर में प्रैक्टिस शुरु कर दी। इसके पूर्व जाट कालेज में अध्यापन कार्य भी एक वर्ष किया।

प्रैक्टिस के दौरान आई०सी०एस० में बैठे लिखित में पास होने के बाद दिल्ली साक्षात्कार के लिये गये बोर्ड के समक्ष। उन दिनों पाकिस्तान बनने की बात चल रही थी एक सदस्य ने उनसे पूछा कि क्या पाकिस्तान बनना चाहिये श्री महावीर सिंह जी ने निडरता से कह दिया कि पाकिस्तान नहीं बनना चाहिये। उन सज्जनों ने कहा कि तर्क दीजिये उन्होंने जो तर्क दिये उनसे वह नाराज हो गये। अत: श्री महावीर सिंह जी का चुनाव नहीं हो पाया।

इसके बाद भी मुकाबलों में बैठते रहे। अन्त में मुन्सफी की परीक्षा में सफल हो गये प्रथम नियुक्ति नगीना बिजनौर में हो गई।

जिन दिनों गाजियाबाद में नियुक्त थे उस समय एक वाद मलकपुर गांव का श्री महावीर सिंह जी की अदालत में चल रहा था। एक पक्ष के वकील ने अपने मुवक्किल से कहा कि श्री महावीर सिंह की अदालत से अपना केस उठवा लो क्योंकि दूसरे पक्ष की रिश्तेदारी श्री महावीर सिंह के गांव में है तुम केस हार जाओगे। इस पर उस पक्ष वाले ने कहा कि वकील साहब यह केस तो श्री महावीर सिंह जी की ही अदालत से तय होना है मुझे उनके न्याय पर पूर्ण विश्वास है ऐसी थी उनके न्याय पर जनता की धारणा।

श्री महावीर सिंह जी को कभी किसी काम में शर्म नहीं थी। गर्मियों की छुट्टियों में गाँव आते थे तो दूर दूर से लोग बाग कानूनी मशवरा लेने आते थे। जब हम लोग मौजूद नहीं होते थे तो स्वयं उनका हुक्का भरते तमाम आव भगत करते थे। मेरी छोटी बहन के ससुर जो कि बावली गांव के थे श्री महावीर सिंह जी से मिलने गाजियाबाद चले गये, लौटकर गांव में बताते हैं कि महावीर सिंह कैसा मुन्सिफ है अपने हाथ से कुट्टी काटता है अपने ही हाथ से मुझे हुक्का भर के पिलाया। ये कुछ उदाहरण उनकी सादगी के हैं।

उनकी निडरता का एक उदाहरण :–

जिन दिनों बदायूँ में जिला जज थे उनकी अदालत में बहुचर्चित त्रिवेणी सहाय (दाता गंज) मर्डर केस चल रहा था। कमलापति त्रिपाठी उ०प्र० के मुख्य मंत्री थे तथा त्रिवेणी सहाय के रिश्तेदार थे। मुख्यमंत्री बदायूँ आये श्री महावीर सिंह जी को बुलाकर कहा कि महावीर सिंह मैं चाहता हूं कि त्रिवेणी सहाय केस इस तरह तय किया जाये। श्री महावीर सिंह जी ने बड़ी निर्भीकता से कह दिया कि श्रीमान् जी इस केस में क्या किसी में भी वही होगा जो मेरी फाईल या साक्ष्य कहेंगे। मुख्यमंत्री को ऐसे जबाव की उम्मीद नहीं थी वे नाराज हो गये उच्च न्यायालय को शिकायत कर दी कि श्री महावीर सिंह कार रखे हैं लड़का दिल्ली में पढ़ता है ये सब खर्चे कहां से पूरे होते हैं। उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश बदायूँ जाँच हेतु आये जांच के दौरान वकीलों से पूछा कि महावीर सिंह के विषय में क्या विचार हैं। वकीलों का कहना था जो एक संत के विषय में विचार हैं वही विचार श्री महावीर सिंह जी के विषय में हैं उनका दो रुपये रोजाना का खर्चा भी नहीं है। बदायूँ में श्री महावीर सिंह जी को शैडो मिला हुआ था। मुख्यमंत्री के नाराज होने पर शैडो हटा लिया गया। हमारे नाना जी ने अपना रिवाल्वर श्री महावीर सिंह जी को दे दिया लेकिन इन्होंने उसे कभी चलाकर नहीं देखा एक शाम टहलने जा रहे थे रास्ते उनकी बड़ी लड़की ने पूछा पिताजी रिवाल्वर साथ में क्यों नहीं लाये उन्होंने बड़ी सरलता से कहा बेटी मुझे रिवाल्वर चलाना नहीं

आता। लड़की ने कहा पिताजी ऐसी बातें रास्ते में नहीं कहते, इतने सरल थे।

श्री महावीर सिंह जी को मैंने सदैव राजनीति से दूर रहने की सलाह दी क्योंकि सीधे साधे व्यक्ति को राजनीति से दूर ही रहना चाहिये। उन्हें अधिकतर व्यक्तियों ने धोखा ही दिया। उदाहरणार्थ-

यह वाकया इन्दिरा गांधी के जमाने का है। उच्चतम न्यायालय में सीनियर एडवोकेट की जगह खाली थी - श्री महावीर सिंह जी को उसका ऑफर दिया गया था। इसका पता किसी तरह चरण सिंह जी को चल गया चरण सिंह जी ने उन्हें बुला कर कहा कि तुम यह ऑफर स्वीकार मत करो मैं तुम्हें राज्य सभा का सदस्य बनवा दूँगा। इन दिनों मेरी चाची बीमार चल रही थी मैं उन्हें देखने दिल्ली गया था। श्री महावीर सिंह जी ने इसका जिकर मुझसे किया मैंने कहा आप एडोकेट वाला ऑफर स्वीकार कर लें यह आपको राज्य सभा का सदस्य नहीं बनवायेंगे और हुआ भी यही जब समय आया तो उनकी जगह वीरेन्द्र वर्मा को राज्य सभा का सदस्य बनवा दिया गया। ऐसा ही व्यवहार श्री महावीर सिंह के साथ अजीत सिंह ने किया। रामपुर, कैराना व मुजफ्फरनगर से श्री महावीर सिंह से सांसद के लिये नामांकन कराया लेकिन टिकट नहीं दिया।

श्री महावीर सिंह के स्वर्गवास होने से कुछ दिन पूर्व ही उन्हें सूचना दी गई कि उनकी नियुक्ति राज्यपाल के पद पर होने जा रही है। श्री महावीर सिंह ने इसकी सूचना अपने एक परिचित को टेलीफोन पर दी- उन परिचित ने रातों रात पासा पलट दिया और अपनी नियुक्ति करा ली।

हमारे जाटों में एक कहावत है कि जाट के मुख से एक बार अगर ना निकल गई फिर हां नहीं होगी श्री महावीर सिंह सुनाया करते थे कि एक बार मैं एक रिश्तेदारी में करीब १२ बजे पहुँचा रिश्तेदारों ने पूछा कि जज साहब खाना खाओगे। मेरे मुख से ना निकल गई उन्होंने कई बार पूछा मैं ना ही करता रहा हालांकि मुझे बड़े जोर की भूख लगी थी जाति का गुण भी विद्यमान था।

श्री महावीर सिंह जी में एक विशेष गुण था वह अपने कुटम्ब वालों एवं रिश्तेदारों से अत्यधिक प्यार करते एवं उनकी अपने सामर्थ्य के अनुसार सहायता भी करते थे। वास्तव में ही वे एक अत्यन्त सरल एवं सहज मानव थे। उन्हें हार्दिक श्रद्धांजली।

पूर्व प्रधान, ग्रा. मिलक अमाती (डिलारी)
जि० मुरादाबाद - उ०प्र०

न्यायमूर्ति महावीर सिंह : सरलता और निष्कलंकता की मूर्ति

–ओमप्रकाश स्वतन्त्र

मेरा सौभाग्य है कि मुझे उसी धरा प्रांगण-गांव में पैदा होने का सुअवसर मिला जिसमें न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी का जन्म हुआ था। अतः बचपन से ही उनके प्रभामण्डल का प्रेरक संस्पर्श मुझको मिलता रहा। अतः मैं समझता हूं कि मैं आज जो कुछ हूं उसमें प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से महावीर सिंह जी की मौलिक भूमिका रही है।

मेरे बचपन के दिनों में महावीर सिंह जब अपनी छुट्टियों का समय बिताने गांव में आते थे तो गांव के वातावरण में जैसे एक उत्साह और प्रेरणा की लहर दौड़ जाती थी। गांव समाज में यह गर्व की अनुभूति होती थी कि उनके अपने परिवार का कोई व्यक्ति एक न्यायाधीश के पद पर गांव को सम्मान व प्रतिष्ठा प्रदान कर रहा है। महावीर सिंह जी स्वयं भी अपना अधिकतर समय गांव में घूमने, गांव वालों से मिलने और गांव के बुजुर्गों के दर्शन करने में व्यतीत करते थे। उनका यह व्यवहार-उनकी मिलनसारता, सरलता और विनम्रता, प्रेम और आत्मीयता सबको बहुत प्रभावित करती थी।

मुझे महावीर सिंह जी के जीवन से जुड़े हुए कुछ प्रेरक प्रसंग याद आ रहे हैं। जिनको मैं पाठकों के सामने पेश करना चाहूंगा।

मैंने अपने गांव में, अपने घर पर एक बार पांच दिवसीय वैदिक यज्ञ का आयोजन किया था जिसके लिए दिल्ली से पंडितों और विद्वानों को बुलवाया गया था। यज्ञ में भाग लेने के लिए अपने गांव के अलावा आस-पास के ग्रामीण क्षेत्र के प्रतिष्ठित नागरिकों को भी आमन्त्रित किया गया था। पूरे आयोजन में महावीर सिंह जी की भूमिका देखते ही बनती थी, वह यज्ञ शुरु होने से पहले वेदी पर उपस्थित हो जाते और सभी बन्धुओं के प्रसाद ग्रहण कर के प्रस्थान कर जाने के बाद ही वेदी वे विदा लेते। यही नहीं बल्कि यज्ञ में भाग लेने वाले भाइयों को भोजन आदि कराने की सेवा का दिल खोल कर आनन्द लेते। यह थी उनकी ग्राम-निष्ठा।

महावीर सिंह जी की किसान निष्ठा भी उतनी ही गहरी थी जितनी ग्राम निष्ठा। एक बार उन्होंने दिल्ली के महाराजा सूरजमल संस्थान में देश के किसान नेताओं का दो दिवसीय सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन का उद्देश्य था

किसान के नेतृत्व में देश की विशेष कर ग्राम्य भारत की किसान और जन शक्ति को संगठित करना, ताकि भारत की आजादी के अधूरे काम को पूरा किया जा सके और ग्राम्य भारत और वैदिक संस्कृति की नींव पर भारत के भविष्य का निर्माण किया जा सके। इस सम्मेलन में पाँच स्तर के लोगों को शामिल किया गया था। केन्द्र में किसान नेताओं को रखा गया था। इसके बाद पहले सर्किल में कृषि वैज्ञानिकों को, दूसरे सर्किल में किसान और ग्राम्य जीवन पद्धति में रुचि रखने वाले चिन्तकों और विचारकों को, तीसरे सर्किल में किसान राजनेताओं को लिया गया था और अन्त में उनके साथ प्रबुद्ध किसान समुदाय को जोड़ा गया था। इससे महावीर सिंह जी की वैज्ञानिक सोच और कार्य पद्धति का परिचय मिलता है।

न्यायिक सेवा से अवकाश प्राप्त कर लेने के बाद जब महावीर सिंह जी दिल्ली में बस कर सुप्रीम कोर्ट में वकालत करने लगे तो एक दिन मैंने पूछा कि अब आपको वकालत करने की क्या आवश्यकता है, तो कहने लगे कि मेरी कुछ देनदारियां हैं, उनको पूरा करने तक मुझे काम करना पड़ेगा, और उसके बाद मैं निश्चित रूप से अपना सारा जीवन समाज की सेवा में समर्पित कर दूंगा। धन्य है, न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी ! शत-शत प्रणाम है ऐसी न्याय की मूर्ति को जो अपनी कर्त्तव्य निष्ठा के साथ साथ अपनी निष्कलंक चरित्र व ईमानदारी के कारण सारा जीवन नौकरी करने के बाद भी देनदारी से मुक्त नहीं हो पाये। आज के भ्रष्ट बाजारू माहौल को देखते हुए महावीर सिंह जी एक सच्चे सन्त और साधु थे।

ईश्वर करे उनकी आत्मा इस देश को सत्य न्याय और त्याग-निष्ठा के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देकर भारत के नये भविष्य का मार्ग प्रशस्त करती रहे। उस ऋषि-पुत्र के चरणों में मेरा बारम्बार प्रणाम।

४-बी, हैली रोड,
नई दिल्ली-१

इस युग का देवता : जस्टिस महावीर सिंह

-त्रिलोक चन्द चौधरी
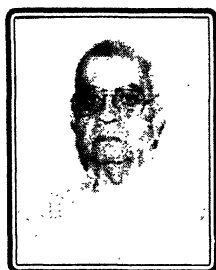
मेरा आदरणीय श्री महावीर सिंह से परिचय १९५१-५२ से था जब वे गाजियाबाद में मुंशिफ के पद पर नियुक्त थे। उनका व्यक्तित्व प्रत्येक दिशा में इतना महान् था कि उसका उल्लेख शब्दों द्वारा करना मेरे जैसे पुरुष के लिए बहुत असम्भव व कठिन प्रतीत होता है। उनके व्यक्तित्व की अनुभूति का आनंद मुझे अपने मन ही मन इस तरह से प्रतीत होता है जैसे किसी गूंगे को कोई बहुत स्वादिष्ट व मीठी चीज खिलाने पर उसका जो आनन्द प्राप्त होता है, उसको वह गूंगा होने के कारण जो स्वाद की अनुभूति वह मन ही मन अनुभव करता है उसका वर्णन वह अपनी वाणी से नहीं कर सकता। उसी प्रकार मैं भी उनके बहुमुखी व्यक्तित्व का वर्णन शब्दों द्वारा करने में बहुत असमर्थता प्रकट करता हूं।

उनका व्यक्तित्व न्यायिक, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में जितना विशाल था उस विशालता को शब्दों द्वारा आंका व मापा नहीं जा सकता।

कुछ व्यक्ति न्यायिक विभाग से संबंधित हैं वो अपने कार्य क्षेत्र में बहुत ईमानदार व कर्तव्यनिष्ठ पाये गये हैं परन्तु सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में वह किसी से सम्पर्क बढ़ाने व बनाने में इतने संकोचीत होते हैं कि कहीं हमारी न्यायिक प्रतिष्ठा खतरे में ना पड़ जाये अत: ऐसे लोग सामाजिक व धार्मिक दृष्टि से शून्य होते हैं। परन्तु आदरणीय श्री महावीर सिंह जी अपने गाजियाबाद के कार्यकाल के दौरान आर्य समाज से इतने निकट से जुड़ गये थे कि प्रत्येक रविवार और सभी अवसरों पर वह आर्य समाज के कार्यक्रमों में बहुत रूचि के साथ संलग्न रहते थे तथा आर्य समाज के सेक्रेटरी भी चुने गये थे। सामाजिक दृष्टि से शहर के संभ्रांत परिवारों से विशेषकर जो परिवार आर्य समाज से जुड़े थे उनसे इतने निकट के संबंध बन गये कि लोग उन्हें अपने परिवार का सदस्य ही समझने लगे थे। परन्तु इसके साथ-२ अपने न्यायिक क्षेत्र में भी कुशलता पूर्वक कार्य करने में भी इतने निपुण थे कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के पद को सुशोभित किया तथा न्यायप्रियता के लिए आज तक याद किये जाते हैं। उनका व्यक्तित्व समुद्र की तरह गहरा, हिमालय की तरह विशाल, कमल की भांति कोमल व गंगा जल की भांति पवित्र था। मैं तो उन्हें इस युग के देवता की संज्ञा देता हूं।

आर-९/१२, राजनगर
(गाजियाबाद)

Justice Mahavir Singh

-P.P Rao

I came in contact with Justice Mahavir Singh after he returned to the Bar following his retirement as a Judge of the Allahabad High Court in the early eighties. Within a short time he impressed one and all in the Supreme Court Bar as an active Member. He took keen interest in the affairs of the Supreme Court Bar Association. Not only he served as a senior Membr of the Executive Committee but also shouldered the responsibility for conducting elections to the Bar Association. We worked together in a few cases. He was a person of great integrity and sincere devotion to work. In 1989 I became his neighbour being a resident of sector 15-A, Noida. I had more opportunities to associate with him. He was public spirited and always ready to give his precious time liberally to public causes. He served as Vice-President of the Resident Welfare Association of Sector 15-A. As Vice-President, he was the guiding spirit of the Association.

His house was open to all. Once he invited a Member of the Constituent Assembly from undivided Punjab province to his house and requested all his friends and acquaintances to meet him and interesct with him. We had a very lively session. The chief guest enlightened the audience about some difficult aspects of constitution-making.

Justice Mahavir Singh took keen interest in politics as well. In fact, he had a mind to contest for a seat in Parliament. Unfortunately, he succumbed to cancer. I tried to get him treated by Arya Vaidyasala, Kottakkal, Kerala which has developed a supplementary therapy for cancer. But it was too late. Justice Mahavir Singh himself used to practice Inidan medicine. Once when he saw me suffering from throat trouble with severe cold, he treated me with some which powder which he himself prepared.

He was honest to the core and extremely upright. He had a large circle of friends and admirers in the legal profession and outside the profession. I used to visit him now and then while he was battling hard the deceptive disease. Towards the end he knew that his condition was deteriorating and yet he took it in his stride philosophically. His death is a great loss to the nation.

May his soul rest in peace !

Senior Advocate,
Park View, 143, Sec-15 A
NOIDA - 201301

न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी को सच्ची श्रद्धाञ्जलि किस रूप में हो सकती है ?

-डॉ0 मुमुक्षु आर्य

न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी के निधन से उनके परिवार को ही नहीं अपितु सम्पूर्ण आर्य जगत् एवं राष्ट्र को भारी क्षति पहुँची है। अपने सौम्य स्वभाव एवं अनुभव से वह चिरकाल से हमारा नेतृत्व एवं मार्गदर्शन करते आ रहे थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के वह अनन्य भक्त थे और वैदिक धर्म की स्थापना हेतु स्थापित आर्य समाज को सशक्त देखने की तीव्र अभिलाषा अपने मन में संजोए हुऐ थे। नौएडा नगरी को यह सौभाग्य प्राप्त था कि उन्होंने अपने जीवन का अन्तिम समय यहाँ व्यतीत किया। आर्य समाज नौएडा के साथ उनका विशेष लगाव था। हमनें जब भी अपने कार्यक्रमों में उनका सहयोग चाहा उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। आर्य समाज नौएडा के भवन में संचालित आर्य गुरुकुल के वह स्वयं सदस्य बने और अपनी बेटी को भी सदस्य बनाया। अन्य लोगों को भी प्रेरित करते रहते थे। सन् १९९६ में आयोजित आर्ष गुरुकुल नौएडा के प्रथम वार्षिकोत्सव पर उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में आर्य समाज नौएडा द्वारा संचालित गुरुकुल की सराहना की और अन्य समाजों को भी यहां की गतिविधियों से प्रेरणा लेने का आह्वान किया। राष्ट्र की समस्त समस्याओं का समाधान गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित करने में ही है चल रहे गुरुकुलों को मन-मन-धन से सहयोग देकर सुधारना एवं नये-नये गुरुकुल खोलने के लिए उन्होंने परामर्श दिया। मार्च १९९७ के आर्ष गुरुकुल नौएडा के द्वितीय वार्षिकोत्सव पर आयोजित राष्ट्र रक्षा सम्मेलन में अस्वस्थ होने के कारण उन्होंने अपना अध्यक्षीय संदेश लिखकर भेजा। उपस्थित जनसमूह ने उनके संदेश की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। उनके जीवन काल का यह अन्तिम संदेश था। इस संदेश को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के ९७वें वार्षिकोत्सव पर १३ अप्रैल १९९७ को आयोजित राष्ट्र रक्षा सम्मेलन में भी पढ़कर सुनाया गया। अपने इस अन्तिम संदेश में उन्होंने देश के कर्णधारों को राष्ट्र रक्षा हेतु एटम व हाईड्रोजन बम बिना किसी झिझक के बनाते रहने का परामर्श दिया ताकि दुश्मन हमसे अचानक लाभ न उठा सके। इसके साथ-साथ प्रत्येक नागरिक के लिए सैनिक शिक्षा का अनिवार्य करना, समय-समय पर उनका

अभ्यास करना, पाकिस्तानी व बंगलादेशीय घुसपैठियों व ईसाई पादरियों से सावधान रहने पर भी विशेष बल दिया। उन्होंने स्पष्ट कहा कि हममें से कुछ व्यक्तियों को उनकी भाषा, वेश भूषा व जाहिरा धर्म परिवर्तन करके उनमें घुलमिल जाना चाहिए ताकि जानकारी हासिल हो सके अर्थात् साम, दाम, दंड, भेद व छद्मवेष के द्वारा ऐसे तत्वों का पता लगाकर सरकार को व जनता को कार्य करना चाहिए। अपने संदेश में न्यायमूर्ति जी आगे लिखते हैं कि यह सब तभी हो सकता है जब विद्यार्थियों में व नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना को पूरे जोर शोर से भरें। हमारा इतिहास देश पर मिटने वालों से भरा पड़ा है। उनकी जीवनी को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाया जाये ताकि हमारे बच्चों को प्रेरणा मिल सके। जाति-प्रथा को सम्पूर्ण रूप से नष्ट करना व भिन्न भिन्न मत-मतान्तरों का समूल नाश कर एक वैदिक धर्म की स्थापना करना राष्ट्र रक्षा के लिए अति आवश्यक है और यह कार्य आर्य समाज को ही करना होगा। आर्य समाज की वर्तमान परिस्थिति, शिथिलता, घुसपैठ, मतभेदों की सार्वजनिक चर्चा, परस्पर वैमनस्य व दोषारोपण से वे अत्यन्त चिंतित रहते थे।

आत्मा के शरीर छोड़ने के उपरान्त शोक सभाओं में उसका गुणगान किया जाता है। जब तक आत्मा माता, पिता, भाई बन्धु के रूप में शरीर में विद्यमान रहता है तब तक जो कुछ उसके लिए किया जाता है वही सार्थक है, वही पितृ यज्ञ है, वही श्राद्ध है और वही तर्पण है। परन्तु जब आत्मा शरीर को छोड़कर चली जाती है तब जो कुछ भी उसके लिए किया जाता है वह निरर्थक है, अवैज्ञानिक है व मात्र औपचारिकता है। शवयात्रा एवं शोक सभा का मुख्य प्रयोजन वास्तव में हमें स्वयं को ही सावधान करना होता है कि कोई चाहे कितना भी बड़ा न्यायाधीश हो, राजा हो, अधिकारी हो, सबके शरीर को इसी प्रकार जलकर राख हो जाना है। इसलिए शरीर के ही भरण-पोषण में जीवन को नष्ट नहीं करना चाहिए। स्वयं को अर्थात् आत्मतत्व को पहचानना और उसके उत्थान के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना ही बुद्धिमत्ता है जिस आत्मा की हम बात करते हैं वह परमाणु से भी अति सूक्ष्म है। अन्तर है तो इतना की परमाणु जड़ है और आत्मा चेतन। परमाणु तीन प्रकार के विद्युत् कणों से युक्त रहता है और आत्मा मन, बुद्धि, चित व अहंकार इन चार प्रकार के तत्वों से युक्त रहता है। हम जो भी कार्य करते हैं उनका संस्कार मन पर पड़ता है। इन्हीं संस्कारों के अनुसार हमारा आगामी जन्म होता है। इन्हीं संस्कारों के कारण एक ही समय में उत्पन्न होने वाले बच्चों के भाग्य में इतना अन्तर होता है। न कि किसी ग्रहों आदि के कारण। पूर्व जन्मों की बातों का स्मरण न रहना परमात्मा की ओर से एक बड़ी

कृपा है क्योंकि पूर्व जन्मों की घटनाएं स्मरण रहें तो जीना दूभर हो जाए। कर्मों के संस्कारों के कारण ही आत्मा जन्म मरण के चक्कर में आते रहता है। आत्मा तब तक इस प्रकार भटकता है जब तक मन सब प्रकार के संस्कारों से शून्य होकर मोक्ष को प्राप्त नहीं कर लेता। यह अद्‌भुत शरीर इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मिलता है। निष्काम भाव से शुभ कर्म एवं योगाभ्यास द्वारा ही इस चरम लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु प्राय: हम इस अद्‌भुत शरीर को अहम्, ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ अथवा काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार रूपी दलदल में फंसाकर नष्ट कर डालते हैं। इसका एक कारण शिक्षा का उद्देश्य सच्चे मानव का निर्माण न होकर मात्र धनोपार्जन रह जाना है। शवयात्रा व शोक सभा द्वारा इस हो रही भूल में सुधार करना मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। वरन् दिवंगत आत्मा को तो इस सबका कोई लाभ पहुंचने वाला नहीं होता। उसकी प्रसन्नता, संतुष्टि व सेवा हेतु कुछ किया जा सकता था तो उसके शरीर में रहते ही किया जा सकता था। परम पिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की सद्‌गति व आगामी जन्म में ऐसे उपयुक्त वातावरण, माता, पिता आचार्य की प्राप्ति के लिए प्रार्थना अवश्य कर सकते हैं जिसे पाकर वह दिवंगत आत्मा जीवन के चरम लक्ष्य, मोक्ष को प्राप्त करनें में विशेष प्रयत्न कर सके। हमें आशा है कि वह पुन: जन्म लेकर किसी और रूप में आर्य समाज व ऋषि दयानंद के कार्यों को आगे बढ़ायेंगे। उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजली यही होगी कि समस्त परिवारजन आर्य समाज से जुड़कर देश विदेश में वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार में सहयोग करें और समस्त आर्य जन अपनी समर्थता एवं योग्यता अनुसार समाज का कार्य करें। ईष्या, द्वेष आदि का शिकार होकर कुछ अप्रिय व अनुचित न कहें और न करें और अपनी पूरी शक्ति धर्म प्राप्ति व धर्म प्रचार में लगाएं।

न प्रणाशोऽस्ति जीवस्य, दतस्य च कृतस्य च। याति देहान्तरं प्राणी, शरीरं तु विशीर्यते।। (महाभारत) अर्थ: - जीवात्मा का, दिये हुए दान का और किये गये कर्म का कभी नाश नहीं होता। यथा समय जीवात्मा देह को प्राप्त करता है और पूर्व शरीर नष्ट हो जाता है।

जी-६, सेक्टर-१२
नौएडा-२०१३०१

❑ ❑ ❑

राष्ट्र व आर्य समाज के नाम अन्तिम सन्देश[1]

—स्व0 जस्टिस महावीर सिंह

आर्य समाज के उत्सवों में कुछ समय राष्ट्ररक्षा पर विचार करने को लगाया जाता है। वैसे तो यह भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह इस विषय पर चिन्तन करे व आवश्यक उपाय सुझाए, परन्तु आर्य समाज इस ओर सबसे अधिक प्रयत्नशील रहता है क्योंकि वास्तव में आर्यसमाज राष्ट्र के प्रहरी के रूप में माना जाता रहा है। स्वतंत्रता का उद्घोष करने वाले सर्वप्रथम आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द थे। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में उनका योगदान अब सर्वमान्य हो गया है। उसके बाद के स्वाधीनता आन्दोलनों में ९० प्रतिशत व्यक्ति आर्यसमाज से सम्बन्धित रहे हैं। राष्ट्ररक्षा किसी विशेष काल के लिए ही सीमित नहीं है, कुछ कह सकते हैं कि जब युद्ध हो, तभी इस पर चिन्तन करना उचित है, परन्तु यह भावना बिल्कुल गलत है। यह प्रश्न तो हमेशा ही सामने रहता है क्योंकि जब कभी ठीले पड़े, हमारे दुश्मन राष्ट्र उनका लाभ उठा सकते हैं।

राष्ट्ररक्षा के दो पहलू हैं- एक का सम्बन्ध फौजी तैयारी से है और दूसरा प्रजा (जनता) से है। फौजी तैयारी के सम्बन्ध में हमें इतना ही कहना है कि देश व काल के अनुसार यह रहनी चाहिए। इस समय हमें पाकिस्तान और कुछ हद तक चीन से खतरा हो सकता है। जब पाकिस्तान के पास एटम व हाइड्रोजन बम बनाने की क्षमता है व अब चीन से मिसाइल भी ले लिए हैं तब हमारा बराबर यह कहना कि हम न्यूक्लियर शक्ति को केवल शान्ति कार्यों में लगाएंगे बेमानी हो जाता है। जो देश विशेषकर अमेरिका यह कहते हैं कि हमें एटम बम नहीं बनाना चाहिए, उनसे हमें यही कहना है कि पहले पाकिस्तान को तो रोकें। इसलिए आर्य समाज अपने ऐसे सम्मेलनों में यह मांग सरकार से करता रहे कि वे एटम व हाइड्रोजन बम बिना किसी झिझक के बनाते रहें ताकि दुश्मन हम से अचानक लाभ न उठा सकें। लेकिन इस विषय का दूसरा पहलू ऐसा है जिससे हम प्रत्यक्ष रूप से अधिक कार्य कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में निम्न कार्य अति संगत है।

यह अन्तिम सन्देश स्व0 न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी ने आर्य गुरुकुल नौएडा के दूसरे वार्षिकोत्सव पर 30 मार्च 1997 को एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के 97वें वार्षिकोत्सव पर 13 अप्रैल 1997 को आयोजित राष्ट्र रक्षा सम्मेलनों में भेजा। स्वास्थ्य खराब होने से वे स्वयं इन सम्मेलनों में उपस्थित न हो सके थे। (सम्पादक)

१. **सैनिक शिक्षा** : हमें प्रत्येक नागरिक को कुछ न्यूनतम सैनिक शिक्षा देनी होगी। आजकल युद्ध केवल फौजी इलाकों तक सीमित नहीं रहता है- देश के प्रत्येक भाग पर आधुनिक मिसाइलों द्वारा हमला हो सकता है। अत: प्रत्येक नागरिक को समय पड़ने पर फौजी सिपाही की तरह कार्य करना होता है। यदि इसका प्रशिक्षण हमें न मिले तो हम कमजोर पड़ जाते हैं। इस सम्बन्ध में स्कूलों में एन०सी०सी० के माध्यम से कुछ कार्य होता है परन्तु वह इतना कम है कि कुछ समय बाद वे विद्यार्थी भी जिन्होंने एन०सी०सी० की ट्रेनिंग पाई है, इसको भूल जाते हैं। अत: प्रत्येक पांचवें वर्ष इस शिक्षा को दोहराते रहना चाहिए। सामान्य नागरिक के लिए भी कुछ समय के लिए अनिवार्य कर दिया जाए तो और भी अच्छा हो। यह हमारी रक्षा की दूसरी पंक्ति रहेगी।

२. *हमें राष्ट्र में रहने वाले ऐसे तत्वों को उजागर करना है तथा उनसे सावधान भी रहना है जो रहते व नमक हमारे देश का खाते हैं परन्तु जिनकी आस्था हमसे भिन्न अन्य राष्ट्र या राष्ट्रों* में है। ये विभीषण की भूमिका अदा करते हैं। हमारे देश में पाकिस्तानी व बंगलादेशीय घुसपैठिए बहुत हो गए हैं। पाकिस्तान की आई०एस०आई० का जाल मुस्लिम बहुल इलाकों में बुरी तरह फैलता जा रहा है। सरकार की खुफिया एजेंसी इनकी जानकारी करने में लगी रहती है। परन्तु इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी व सहायता जनता के सजग व्यक्ति कर सकते हैं। कौन नहीं जानता कि १९४७ के दंगों के दौरान यदि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्त्ता दिल्ली के उपायुक्त रणधावा को समय-समय पर सूचना न देते तो दिल्ली को बहुत हानि हो सकती थी। अब यह कार्य और अधिक कठिन होता जा रहा है। इसलिए हमें अपने स्वयं सेवकों को साम, दाम, दण्ड, भेद व छद्म वेष के द्वारा ऐसे तत्वों का पता लगाते रहना चाहिए। हममें से कुछ व्यक्ति उनकी भाषा, वेष भूषा व जाहिरा धर्म परिवर्तन करके उनमें घुलमिल जाना चाहिए ताकि जानकरी हासिल हो सके। ऐसा ही खतरा विदेशी ईसाई पादरियों से है। ये जनजाति क्षेत्र में घुस कर उनको दिखावे के तौर पर डाक्टरी व शिक्षा देते हैं परन्तु कुचक्र उन्हें ईसाई बनाने का है। आज पूरा उत्तर पूर्वी क्षेत्र इनसे भरा पड़ा है। वहां विद्रोही अधिकतर ईसाई ही हैं। आर्य समाज ने उनकी चुनौती को स्वीकार करते हुए जगह-जगह आर्य सेवाश्रम खोले हैं। परन्तु ईसाइयों की तुलना में बहुत कम हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसे आश्रमों को खोलने व वर्तमान आश्रमों को सुचारु रूप से चलाने में तन मन धन से मदद करें।

३. **राष्ट्रीयता की भावना को प्रोत्साहित करना** : यह स्पष्ट है

कि यदि हमारे नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना न होती तो हम कोई ठोस योगदान नहीं कर सकते और थोड़ी-सी कठिनाई या लालच होते ही हम अपने कर्तव्यों से विमुख हो जाते हैं। सरकारी गुप्त अधिनियम (Official Secrects Act) में अधिकतर हमारे ही व्यक्ति पकड़े जाते हैं। फौज तभी अच्छी तरह लड़ती हैं जब उनमें राष्ट्र प्रेम हो। केवल वेतन के आधार पर लड़ने वाले सफल नहीं होते। यह आज सब मानते जा रहे हैं कि हम लोगों में राष्ट्रीयता की भावना कम होती जा रही है प्रत्येक वर्ग जाति, धर्म व प्रदेश को दृष्टि में रख कर कार्य करने लगा है। यही से विघटन की शुरुआत होती है। देश जब भी गुलाम हुआ है तब ऐसे तत्वों का ही जोर था। हमें अपने विद्यार्थियों में, नागरिकों में राष्ट्रीयता की भावना को पूरे जोर-शोर से भरना होगा। हमारा इतिहास देश पर मिटने वालों से भरा पड़ा है, उनकी जीवनी शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाया जाए ताकि हमारे बच्चों को प्रेरणा मिल सके। इस सिलसिले में हमें जाति-प्रथा को सम्पूर्ण नष्ट करना होगा। आर्य समाज ने प्रथम समय में इस सम्बन्ध में बहुत कार्य किया, परन्तु अब बिल्कुल ढीला पड़ गया है। जातिवाद दंगे अब और अधिक मात्रा में होने लगे हैं। प्रदेशों में आपसी मतभेद चरम सीमा पर है। चाहे प्रदेशों में एक ही दल की सरकार क्यों न हो। पंजाब, हरियाणा, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु इसके उदाहरण हैं। अतः हमें इन बुराइयों को दूर करने को प्रभावी उपाय सोचकर उन पर जोर-शोर से कार्य करना होगा, वरना फिर बहुत देर हो जाएगी और देश की एकता खतरे में है। इसका एक परिणाम यह भी है कि हम अपनी कोई राष्ट्रभाषा नहीं बना सके।

अन्त में फिर यही अपील करूंगा कि आर्य समाज का राष्ट्ररक्षा के सम्बन्ध में बहुत बड़ा दायित्व है। हमें इसके सजग प्रहरी के तौर पर कार्य करने के योग्य बनना होगा व दूसरों को बनाना होगा।

❑ ❑ ❑

एक महान् व्यक्तित्व न्यायाधीश महावीर सिंह जी

–लाभ सिंह कादयान

संसार में अनेक महान् आत्माओं ने जन्म लिया है और समाज को सही दिशा प्रदान की है। इसी कड़ी में स्वामी दयानन्द के परम भक्त, आर्य समाज के सिद्धान्तों पर चलकर जीवन यात्रा करने वाले न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी का नाम प्रमुख है।

इस महान् न्यायधीश का जीवन एक किसान के घर आरम्भ होता है और देश प्रमुख शिक्षाविदों, न्यायविदों और लेखकों के रूप में सामने आया। इनके जीवन से सभी को यह प्रेरणा मिलती है कि यदि हम अपने लक्ष्य को लेकर चलें तो उच्चतम पद को भी प्राप्त कर सकते हैं।

श्री महावीर सिंह जी का जन्म आलम गांव (उ०प्र०) में हुआ। मेरा इनसे पुराना सम्पर्क रहा है। हरियाणा के गांव भिगान जिला सोनीपत में हमारी भी रिश्तेदारी है उसी परिवार में डा० महावीर सिंह जी का विवाह श्रीमती होशयारी देवी सुपुत्री श्री कन्हैया सिंह से हुआ। बहन होशयारी देवी एक आर्य समाजी परिवार से सम्बन्ध रखती थी हमारी वह रिश्ते में बहन लगती थी। अत: उनसे कई बार सम्पर्क होता रहता था। दम्पति में जो सौहार्द था वह भी एक उदाहरण था। कई बार वह उनके जीवन की घटना बताती थी। इस अवसर पर एक घटना का वर्णन करना चाहूंगा। जब श्री महावीर सिंह जी जज बने और जब तक उनके माता-पिता जिन्दा रहे तब तक सारा वेतन अपने पिता जी के चरणों में रख देते थे और बाद में उन्हीं से खर्च के लिए लेते थे। डा० महावीर सिंह जी अनेक संस्थाओं से जुड़े हुए थे। महाराजा सूरजमल ट्रस्ट देहली के वे संस्थापक सदस्यों में से थे। उन्होंने जनकपुरी में संस्थान बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई।

कई अवसरों पर उनके विचार सुनने को मिले। वे कहा करते थे कि मनुष्य में जब तक शक्ति है उसे परमार्थ के कार्यों में भाग लेते रहना चाहिए।

श्री महावीर सिंह जी ने भारतीय संविधान का हिन्दी अनुवाद किया जो सभी विधि ज्ञाताओं के लिए तथा विधि के विद्यार्थियों के लिए एक आदर्श पुस्तक है। आप एक मधुरभाषी और व्यवहार कुशल व्यक्ति थे। आपने अनेक पदों को ग्रहण करके उन पदों की गरिमा को बढ़ाया है। गुरुकुल कांगड़ी को आपने अपना मूल्यवान समय विजिटर के रूप में रहकर दिया और अनेक सुधार किए।

आपका अपनी बात कहने का अनोखा ढंग था। आप सदा सरल भाषा में और मधुर शब्दों में अपनी बात कहकर सबका दिल जीत लेते थे। और अपनी बात सहज ही मनवा लेते थे।

आप में अतिथि सत्कार की भावना भी बहुत अधिक थी। इतने महान् पद पर रहते हुए भी जब भी कोई आपके पास आ जाता था तो आप स्वयं उनका आदर सत्कार करते थे। स्वामी शिवान्द जी महाराज प्राय: उनके घर ही ठहरा करते थे। वह भी अपने भाषणों में बताया करते कि किस आदर भान से श्रीमहावीर सिंह जी तथा उनकी पत्नी होशयारी देवी उनका सत्कार करते थे।

ऐसे महान् व्यक्तित्व को मैं अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं और प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि उनका महान् जीवन हम सबको शुभ मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता रहे।

रजिस्ट्रार
आर्य विद्या परिषद्
हरयाणा

एक सौम्य, स्नेहिल व्यक्तित्व : न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी

– डॉ० शशिप्रभा कुमार

सन् १९९३ के मई मास में जब हमने अपने नौएडा स्थित नवनिर्मित गृह 'अभ्युदय' में निवास प्रारम्भ किया तो आदरणीय बन्धु डा० धर्मपाल जी (कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार) ने बताया कि आपके पड़ोस में ही जस्टिस महावीर सिंह जी भी रहते हैं। मैं अक्सर शाम को टहलने जाती तो उनके मकान के आगे से गुजरते समय मन में एक गरिमामय, रौबीले व्यक्ति की छवि उभरती, इसलिए संकोचवश अन्दर जाने का साहस नहीं जुटा पाती और लौट आती। तब मैं नहीं जानती थी कि श्रद्धेय महावीर सिह जी कितने सरल, सौम्य एवं स्नेहिल व्यक्ति हैं। इनकी सादगी का अनुमान इसी घटना से किया जा सकता है कि तीन-चार महीने बाद (सम्भवत: सितम्बर मास के दूसरे सप्ताह में) एक दिन सायंकाल वे स्वयं हमारे घर पधारे और अपना परिचय देते हुए कहने लगे कि मुझे डॉ० धर्मपाल ने आपके बारे में बताया है और हम लोग संस्कृति मंच, नोएडा के अन्तर्गत आपका व्याख्यान कराना चाहते हैं। तभी मुझे ज्ञात हुआ कि वे संस्कृति मंच के संरक्षक अध्यक्ष हैं। अस्तु -

संस्कृति मंच के माध्यम से मेरा उनसे सम्पर्क बढ़ा तो पाया कि उनके हृदय में अपने देश, अपनी संस्कृति, अपनी भाषा और अपनी भूषा के प्रति कितना उत्कट अनुराग हैं सहसा उन्हें देखकर कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वह न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी से रूबरू है। मुझे याद है कि एक बार जब मरे मान्य गुरु प्रो० वाचस्पति उपाध्याय उनसे मिलने गये तो बाहर से उनके मकान को देखकर बरबस कह उठे। इस न्यायाधीश ने कभी अनुचित साधनों से धन न लिया होगा, यह निश्चित है। सत्तर वर्ष से ऊपर आयु होने पर भी वे इतने कर्मठ एवं सक्रिय थे कि किसी नवयुवक को उनके समक्ष लज्जित होना पड़े। हम लोग जब कभी किसी विवाह या अन्य समारोह से रात में देर को लौटते तो मैं देखकर चकित होती थी कि उनके कार्यालय में रोशनी है यानि महावीर सिंह जी अभी तक अपने काम में व्यस्त हैं।

अपने काम के सिलसिले में उन्हें प्राय: दिल्ली नौएडा से बाहर यात्रा भी करनी पड़ती थी; बड़े सहज रूप में बस, ट्रेन या किसी भी सार्वजनिक वाहन का

प्रयोग करते थे। एकबार तो उन्होंने स्वयं बताया कि रात्रि में देर से नौएडा पहुंचे तो कोई सवारी नहीं मिली, अपना समान उठाये हुए पैदल ही घर की ओर चल पड़े तो पुलिसवाले ने रोक लिया जब उन्होंने अपना नाम-पता बताया तो वह हैरान परेशान, किन्तु न्यायमूर्ति जी अविकारी भाव से चलते रहे। उदारता की पराकाष्ठा इतनी कि अपने बच्चों को भी कष्ट नहीं देना चाहते थे।

धीरे-धीरे जब मेरी उनसे घनिष्ठता हुई तो मैंने उनमें एक स्नेह और वात्सल्य से छलछलाते हुए व्यक्तित्व के दर्शन किये। मुझे वे अपनी मानस पुत्री की भांति मानते थे और सदा वैदिक आदर्शों की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देते थे। जब आर्यसमाज हनुमान रोड में उनकी आयु के पचहत्तर वर्ष पूर्ण होने पर उनका अमृत-महोत्सव मनाया गया तो कोई सोच भी नहीं सकता था कि इतनी जल्दी वे हम सबसे विदा ले लेंगे।

दैव की क्रूर नियति का विधान कुछ ऐसा बना कि इतने सात्विक और नियमित जीवन जीने वाले व्यक्ति को भी कैंसर जैसे भयानक रोग ने आ घेरा मुझे जब यह सूचना मिली तो मैं अवाक् रह गई, समझ में नहीं आता था कि उनका सामना कैसे करूंगी। लेकिन जब मैं उनसे मिलने गई तो बिस्तर पर ही अपनी किताबें लेकर अपने अधूरे काम पूरे करने में लगे हुए थे- तभी उन्होंने इच्छा व्यक्त की कि उनके घर पर सामूहिक यज्ञ का अनुष्ठान किया जाये और मैं वेद में आरोग्य, विषय पर कुछ बोलूं। उनकी इच्छा के अनुसार यह कार्य सम्पन्न हुआ और वे इतने भावुक हो उठे कि उनकी आंखों से अश्रुधारा बह निकली।

उनकी बीमारी के दौरान मैंने उनके व्यक्तित्व का एक दूसरा पक्ष भी देखा- तब तक मैं उन्हें सर्वथा पारम्परिक विचारधारा का अनुयायी समझती थी, लेकिन अपने पोत्री-पोतों के साथ वे बिल्कुल ऐसे हिलमिल कर रहते थे जैसे उन्हीं के हमउम्र हों। उनकी पोती ने भी स्वीकार किया कि 'दद्दू' बिल्कूल दकियानूसी नहीं हैं- उनमें परम्परा और आधुनिकता का अनूठा संगम है। शायद यही रहस्य था उनकी अदम्य जिजीविषा का और यही कारण था कि परिवार के सभी सदस्यों, सबसे बढ़कर उनकी बड़ी बहू, शकुन भाभी के साथ उनका इतना आत्मीय रिश्ता था कि वे अनवरत 'पिताजी' की सेवा- शुश्रूषा में लगे रहते थे। आज के युग में, जब परिवार के वृद्धजनों की उपेक्षा की समस्या विषम रूप धारण करती जा रही है, न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी के परिवार का आदर्श वस्तुतः अनुकरणीय है। उनमें समय के साथ बदलने की इतनी अद्भुत क्षमता थी कि वही उनकी सौम्यता एवं सेवा का स्रोत बनी।

जब उनका रोग बढ़ता गया एवं वे चलने-फिरने में असमर्थ हो गये, तब भी उनके सहिष्णुता एवं बालोपम सरलता ने मेरे मन पर अमिट छाप छोड़ी उनके देहावसान से तीन दिन पहले मैं उनसे मिलने गई तो वे असत्य वेदना में थे, लेकिन अपने सामने लगे महर्षि दयानन्द के चित्र को देखकर कहने लगे कि 'स्वामी जी' के कष्ट के सामने मेरा कष्ट तो कुछ भी नहीं - उनका सारा शरीर छालों से छलनी हो चुका था, फिर भी वे प्रभु की प्रार्थना में लीन थे और मैं हूँ कि इतनी सी तकलीफ से व्याकुल हो रहा हूं। उस समय उनकी आँखों के आँसू इतने निश्छल थे कि अन्दर तक मुझे द्रवित कर गये, मैं उन्हें प्रणाम करके चली आई। दो दिन बाद जब उनके दुखद निधन की सूचना मिली तो ऐसा लगा जैसे सर से एक वरद हस्त का साया उठ गया है, जैसे एक पुण्यात्मा परमात्मा के आश्रय में पहुंच गई है, जैसे पीड़ा से छटपटाते एक जीव को मुक्ति मिल गई है, जैसे एक महान् ऋषिभक्त को ऋषि दयानन्द का सान्निध्य मिल गया है......।

भारतीयता के मूर्तिकार स्वरूप, गुणों एवं आचरण से सच्चे आर्य, विनम्रता और सादगी की प्रतिमा स्नेह और सरलता के पुञ्ज परम श्रद्धेय न्यायमूर्ति महावीर सिंह जी की पावन स्मृति में मैं अपनी हार्दिक श्रद्धान्जलि अर्पित करती हूं।

दर्शन विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❐ ❐ ❐

"जज साहब" चौधरी महावीर सिंह

रामवीर सिंह

सन् १९५६-५७ का शिक्षा सत्र, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी; डॉ० गंगानाथ झा छात्रावास; पश्चिमी उत्तर प्रदेश के हम कई छात्रों में चर्चा है; "कोई मुंसिफ/सिविल जज हैं, मेरठ या मुजफ्फरनगर के, नाम है महावीर सिंह। जाट हैं। टैगोरटाउन में रहते हैं। सीधे सरल स्वभाव के हैं। अपनी ओर के लड़कों को बहुत चाहते हैं।" मिलने की उत्सुकता लिये, पश्चिमी उत्तर प्रदेश का होने के नाते, जाट होने के नाते; एक दिन रविवार को प्रातः टैगोरटाउन में उनके निवास पर पहुँचता हूँ, कुछ प्रमाण-पत्रों की सत्यप्रतिलिपियां कराने के बहाने। छोटा सा बंगला खपरैल की छतों का। सामने छोटा सा बरामदा, दरवाजा खटखटाया, एक सामान्य कद व हल्के शरीर का साधारण-सा दिखने वाला व्यक्ति दरवाजा खोलता है। बरामदे में आता है। पजामा, कुर्ता, बीच में कटी छंटी छोटी-छोटी मूंछे। तीस-पैंतीस साल की आयु। अभिवादन के बाद परिचय। यही हैं महावीर सिंह जी। मैंने अपना नाम बताया, परिचय दिया। "अतरौली (अलीगढ़) के पास गांव है पीपरी। साधारण किसान परिवार। यहाँ इस वर्ष चौथा साल है, डॉ० गंगानाथ झा छात्रावास में रह कर। एम.ए. फाइनल है।" और भी बातें होती रहीं। बड़ा अपनत्व मिला, मानों चार साल बाद इलाहाबाद में मुझे एक गार्जियन मिल गया हो। थोड़ी देर बैठने के बाद ही वह कहने लगे, "मुझे अभी जाना है। फिर मिलेगें, अवश्य आना। 'मैं प्रणाम कर चलने लगा तो पुनः बोले, 'आर्य समाज जाते हो।'? (उनका तात्पर्य कटरा आर्यसमाज से था) मेरा नकारात्मक उत्तर सुनकर बोले, 'इतवार को आया करो। चलो अभी चलो , मैं वहीं जा रहा हूँ। 'मैं मना नहीं कर सका। घर से बाहर मुख्य सड़क पर आकर हम दोनों रिक्शे में बैठे और दस-पन्द्रह मिनट में कटरा आर्य समाज मन्दिर आ गये। वहाँ आकर देखा हमारी यूनिवर्सिटी के कई प्रोफेसर डॉ० रामकुमार वर्मा आदि भी यज्ञ में भाग ले रहे थे। दोपहर तक हम आर्यसमाज मन्दिर में रहे। कार्यक्रम सम्पन्न होने पर मैं अपने छात्रावास चला आया और वह अपने घर चले गये। पहली मुलाकात में, न्यायपालिका से जुड़े व्यक्ति का किसी अपरिचित लड़के के साथ इतना आत्मीय अपनापन उनके जीवन की सरलता, सादगी व निश्छलता को आकाश की अनन्त ऊँचाइयों तक ले जाता है। यूनिवर्सिटी में, उसी समय, उनकी प्रेरणा से, हम पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लड़को ने एक संस्था बनाई थी, 'फ्रेन्ड्स सर्किल', उनकी मीटिगों में भी प्रायः आते रहते थे। हम अनेक लड़कों को ऐसा लगने लगा था कि टैगोरटाउन में अपना एक घर है।

समय के अन्तराल के साथ, जीवन की व्यस्तताओं में हम सब इलाहबाद से इधर-उधर हो गये। सम्पर्क टूट गये। मैं इधर मध्य प्रदेश में आ गया। नये उत्तरदायित्व , नये व्यक्ति, नये सम्पर्क, नई व्यस्तताओं, पुरानी स्मृतियां विस्मृत बनी रहीं।

सन् १९८१-८२। दिल्ली के एक अंग्रेजी दैनिक में उत्तर प्रदेश के किसी कांग्रेसी राज्सभा सदस्य की सदस्यता समाप्त करने के इलाहबाद उच्च न्यायालय के निर्णय का एक समाचार छपा था। वह निर्णय किन्हीं जस्टिस महावीर सिंह का था, मन में उत्सुकता जगी, सम्भवत: यह जस्टिस महावीरसिंह वही हों, टैगोर टाउन वाले। मैंने एक अनमना सा पत्र इलाहबाद के अपने संक्षिप्त संदर्भ के साथ, अपनी जिज्ञासा बताते हुये, उच्च न्यायालय, खण्डपीठ लखनऊ के पते पर उन्हें लिख दिया। तुरन्त उनका विस्तृत पत्र आया। उन्हें पच्चीस वर्ष पूर्व का सब कुछ याद था। ऐसे व्यस्त जीवन का व्यक्ति और इतनी पुरानी स्पष्ट यादें। बड़ी प्रबल व तीक्ष्ण स्मरणशक्ति थी उनकी। पत्र पाकर मिलने की इच्छा बलवती होने लगी मन में। एक दिन अचानक उनका फोन आया कि, 'मैं दिनांक ९-१० फरवरी (१९८२) को किसी निरीक्षण में आगरा आ रहा हूँ और मन कर रहा है कि ग्वालियर आकर आप लोगों से भी मिलूं। मैं चाहूंगा ग्वालियर में भी इलाहबाद जैसा 'फ्रेन्ड्स सर्किल' बनाओ। 'हम अनेक साथियों ने , जल्दी-जल्दी में कार्यक्रम निश्चित कर उन्हें उनकी यात्रा के दौरान ग्वालियर पधारने का निमंत्रण दे दिया वह दिनांक ११ फरवरी १९८२ को एक दिन की यात्रा पर पहली बार ग्वालियर पधारे। मध्य प्रदेश हाईकोर्ट बार एसोसियेशन ने भी उनके सम्मान में एक विशाल भव्य समारोह, जिसमें मध्य प्रदेश हाईकोर्ट के भी. कई न्यायाधीश उपस्थित थे; आयोजित किया। इस सम्मान समारोह में उन्होंने अपने भाषण में, जिस वास्तविकता व अपने हृदय की गहराई से विचार व्यक्त किये, पूरा सभा कक्ष तालियों की गड़गड़ाहट से गूंजता रहा था। न्यायालयों में राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के आखिरी निर्धन व्यक्ति तक सस्ते न्याय की सुलभता पर उनका वह भाषण आज भी यहाँ याद किया जाता है। शाम को वह हमारे सामाजिक कार्यक्रम में भी पधारे और हमें प्रेरणा दे गये एक ऐसा संगठन खड़ा करने की जो नि:स्वार्थ भाव से समाज कल्याण में लग सके। हमें गर्व है, हमारा यह संगठन आज उन्हीं के दिखाये मार्ग पर चल कर समाज सेवा में लगा है। इसी दिन एक और सुखद संयोग घटा था। आगरा से उनके साथ वहाँ के तत्कालीन अतिरिक्त जिला न्यायाधीश चौ. सी.पी. सिंह भी साथ आये थे। हमारे लिये नितान्त अपरिचित। शाम का कार्यक्रम सम्पन्न होने के बाद आगरा वापिस लौटने से पहले, मैंने जज साहब को सन् १९५७-५८ का इलाहाबाद का, "फ्रेन्ड्स सर्किल"

का एक ग्रुप फोटो; जो मेरी मां ने गांव में अपने किसी बक्से में सम्भाल कर रखा हुआ था, दिखाया। हम अनेकों साथियों के साथ जज-साहब, उस फोटो में, बीच में बैठे थे। यादों में खोये, बड़ी देर तक, उस फोटो को देखते रहे और मुस्कराते रहे। तभी अचानक श्री सी.पी. सिंह बड़े जोर से बोल उठे, "अरे, इसमें तो मैं भी बैठा हूँ।" हमें बिसरे हुये एक और मित्र मिले, जज साहब के माध्यम से। श्री सी. पी. सिंह (चन्द्रपाल सिंह) भी तब इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्र थे, हमारे ही छात्रावास में।

तब से लेकर आखिरी समय तक (अगस्त ११, १९९७) ग्वालियर से जज-साहब का अटूट सम्पर्क निरन्तर बना रहा। वह प्रतिवर्ष ग्वालियर किले पर हमारे वार्षिक आयोजन अखिल भारतीय किसान राणा मेला (रामनवमी) में पध ारे, अध्यक्षता की। केवल सन् १९९५ (९ अप्रैल) के हमारे वार्षिक कार्यक्रम में पधारने में उन्होंने अपनी असमर्थता व्यक्त की थी क्योंकि परिद्रष्टा के नाते उन्हें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में किसी पूर्व निर्धारित कार्य से जाना था। हमारे हर कार्य एवं प्रकाशन के प्रेरणास्त्रोत आज भी जज साहब ही हैं।

सात-आठ साल पुरानी बात है। नौएडा से जज साहब का एक पत्र आया, "मैं अमुक दिन पंजाब मेल से ग्वालियार आ रहा हूँ। एक दिन रुकूँगा। पत्र में यात्रा का कोई उद्देश्य विशेष या जानकारी नहीं लिखी थी। हमने सोचा, कोई काम होगा, आ रहे होंगे।" उनके आने के निश्चित दिन की पूर्व सन्ध्या को एक सज्जन अम्बेस्डर कार से हमारे घर आये, बोले, "जस्टिस महावीर सिंह जी कल ग्वालियर आ रहे हैं। उनके ठहरने, भोजन तथा गाड़ी की व्यवस्था हमने कर ली है, आप कुछ न करें।" मुझे उत्सुकता हुई, आपको कैसे पता है ? उनके ठहरने की व्यवस्था आपने क्यों की है ? आपके परिचित हैं ? मैंने उनसे यह प्रश्न किये। "नहीं परिचित नहीं," वह सज्जन बोले, "हमारे डी.ए.वी. इन्टर कालेज तथा आर्यसमाज में कुछ विवाद हैं। उनकी जांच करने आ रहे हैं। वह सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय-सभा के अध्यक्ष हैं।" पूरी बात हमारी समझ में आ गई और वह सज्जन चाय पी कर चले गये।

अगले दिन निर्धारित समय पर हम गाड़ी लेकर कई साथी जज साहब को रिसीव करने स्टेशन गये। वह सज्जन भी वहाँ पहले से उपस्थित थे। ट्रेन आई, जज साहब आये। उन सज्जन ने आग्रह किया, "आप हमारी गाड़ी से चलें हम गाड़ी लाये हैं। आप हमारे काम से आये हैं। हमने आपके ठहरने की भी व्यवस्था की है।" जज साहब बोले, सामान्य मुस्कुराहट के साथ, भाई यहाँ ग्वालियर में मेरा अपना

घर है। और फिर आपका आतिथ्य तो मैं वैसे भी स्वीकार नहीं करूँगा। क्योंकि मैं आपके प्रकरणों की जांच करने आया हूँ। मैं कल दस बजे आर्यसमाज आऊँगा। आप दोनों पक्ष वहीं मिलें।" वह सज्जन भी मुस्कराकर अभिवादन करके अपनी गाड़ी की तरफ चले गये। हम और जज साहब घर आ गये। इस सीधी-सादी घटना में उनके महान् व्यक्तित्व की कितनी महान् ईमानदारी, न्यायप्रियता व निष्पक्षता छिपी है।

लगभग चार-पांच वर्ष पूर्व की बात है। नौएडा से जज साहब का एक दिन फोन आया कि उसी दिन वह ए.पी. (आन्ध्रा एक्सप्रेस ट्रेन) से, जो दिल्ली से चल कर रात १० बजे ग्वालियर पहुँचती है, हैदराबाद जा रहे हैं। भा.ज.पा. की राष्ट्रीय कार्यसमिति की मीटिंग है। उन्हें भी राष्ट्रीय कार्यसमिति में विशेष आमंत्रित के रूप में भाग लेने बुलाया गया है। मुझे स्टेशन पर आकर मिलने के लिये कहा, कुछ चर्चा करनी है। उन्होंने फोन पर ट्रेन की बोगी नम्बर भी बता दी। शाम को घर में चर्चा हुई कि मैं रात को जज साहब से मिलने स्टेशन पर जाऊँगा। पत्नी ने सुझाव दिया कि, "रात १० बजे का समय प्रायः भोजन का समय होता है। खाना बना रहे हैं लेते जाइये। रेल में पता नहीं कैसा खाना मिलेगा। वह खायें, न खायें रेल का खाना।" और स्टेशन जाते समय खाने का डिब्बा स्कूटर में मेरे साथ रख दिया। मैं स्टेशन पहुँचा, ट्रेन आई, जज साहब प्लेट फार्म पर उतर आये। हम दोनों ने चर्चा की, जो करनी थी। ट्रेन पाँच मिनट रुक कर चल दी। मैंने उन्हें वह खाने का डिब्बा दिया, "इसमें आपका रात का खाना है। घर पर सब कह रे थे, पता नहीं रेल में कैसा खाना मिलता है। खायें, न खायें; आप तो खाना लेते जाइये।" जज साहब बोले, यह आपने बहुत अच्छा किया। मैं फोन पर भी कहने वाला था खाने की, लेकिन जल्दी में कहना भूल गया। और डिब्बे में चढ़ गये। मैं यह सोचते-सोचते प्लेटफार्म से बाहर निकला कि यदि जज साहब के अलावा कोई और व्यक्ति रहा होता तो निश्चित यह कहता, "अरे, खाने की क्या जरूरत थी। क्यों कष्ट किया। ट्रेन में खाना मिलता तो है।" लेकिन यह जज साहब के व्यक्तित्व की सरलता सादगी भोलापन स्पष्टवादिता और उकनी महानता की भीतर बाहर एकरूपता थी जो उन्हें और महान् बना गई थी।

सन् १९६६ में राज्यसभा के लिये कुछ सीटों का चुनाव होना था उत्तर प्रदेश से। जज साहब का मन था संसद में जाने का। एक बार लोकसभा का चुनाव भी लड़ा था। भा.ज.पा. के विधायकों के मतों के बल पर उत्तर प्रदेश से उस बार तीन सदस्य चुनकर राज्यसभा में जाने वाले थे। जज साहब की भी भा.ज.पा. से नजदीकी बढ़ चली थी। एक दिन सुबह उनको फोन आया कि मैं जज साहब के नाम की सम्भावना के बारे में कल्याण सिंह जी से बात करूं। कल्याण सिंह जी से फोन पर बात करने पर पता चला कि वे लोग तीन में से एक टिकिट जाट को भी दे रहे हैं। और वह नाम लगभग

फाइनल हो गया है। अब तो देर हो गई मैंने उनको यह पूरा डवलपमेन्ट फोन पर बता दिया। जज साहब उत्तर प्रदेश भवन में एक दिन बाद कल्याण सिंह जी से भी मिले और उन्हें आश्वस्त किया कि, "जो नाम आपने फाइनल किया है वह हमारे ही भाई हैं। उस नाम के लिये भी हम सब आपके हार्दिक आभारी हैं।"

सन् १९८४ में, किसान भवन मथुरा में अखिल भारतवर्षीय जाट महासभा के "प्रधान" का चुनाव था। दिल्ली, मथुरा, आगरा, जयपुर, भरतपुर, ग्वालियर, रोहतक, हिसार लगभग सभी की ओर से जज साहब का नाम प्रस्तावित होने वाला था। निश्चित था कि वही "प्रधान" बनेंगे। चुनाव से कुछ घंटे पहले उन्हें पता चला कि कैप्टन भगवान सिंह आई.ए.एस. (पूर्व राजदूत) का मन है "प्रधान" बनने का। जज साहब ने अपने नाम के बारे में स्पष्ट मना कर दिया और अपने पूर्ण हार्दिक समर्थन से कैप्टन साहब को जाट महासभा का "प्रधान" बनवाया और फूलमाला पहनाकर उनका अभिनन्दन किया। कितना निष्कपट, निष्कलुष हृदय था साधारण से दिखने वाले इस महामानव का।

बहुत स्मृतियां हैं उनकी हम ग्वालियरवासियों से जुड़ी। सन् १९८२ से लेकर सन् १९९६ तक वह अनगिनत बार ग्वालियर पधारे। एक भावनात्मक आत्मीय जुड़ाव था उनका ग्वालियर से। हमने सुप्रीम कोर्ट की लाइब्रेरी से लेकर नौएडा में उनके घर तक उनके साथ अनेकों बार यात्रा की। अनेकों नेताओं के घर भी कई बार हम साथ-साथ गये। उन्होंने हमारी अनेकों पारिवारिक व संस्थागत समस्याओं का निदान इतनी सहजता, सरलता से किया मानो समस्यायें थी ही नहीं।

जीवन के अन्तिम दिनों में भी वह ग्वालियर से सतत सम्पर्क में रहे थे। कई बार फोन पर स्वास्थ्य के बारे में चर्चा होती रहती थी। मध्य प्रदेश में राजगढ़ में एक व्यक्ति कैंसर की देशी दवा देता है। वह भी उनके पास पहुँची थी। शुरु में उस दवा ने कुछ लाभ बताया था। ग्वालियर कैंसर शोध संस्थान में आने का भी हमने उनसे आग्रह किया था, लेकिन उनकी मान्यतायें और आस्थायें अपनी अलग थीं। उनके दर्शाये समाजसेवा के निस्वार्थ व ईमानदार मार्ग पर हम आगे बढ़ते रहें, यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

हमारे पास भी उनकी अनगिनत स्मृतियां; अनेकों फोटो व ढेर सारे पत्र सुरक्षित हैं। शायद हम भी उन्हें कभी प्रकाशित कर सकें।

तानसेन मार्ग, ग्वालियर

वे सच्चे अर्थों में आर्य्य थे

-डॉ० दिनेशचन्द्र शास्त्री
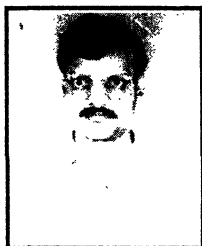
जहां तक आर्य्यसमाज के इतिहास से सम्बन्धित मेरी जानकारी है, उसके अनुसार मैं कह सकता हूँ कि आर्य्यसमाज की पुरानी पीढ़ी में न्यायाधीशों ऐसे न्यायप्रियों कि जिनका यश चतुर्दिक् फैला हुआ था और जिनके मनसा, वाचा, कर्मणा व्यवहार से यह मान्यता बलवती हुई कि आर्य्यसमाजी ईमानदार होते हैं, वे कभी झूठ नहीं बोलते- की परम्परा में स्व० जस्टिस महावीर सिंह जी का नाम उल्लेखनीय है। जिनके शासन में कभी सूर्य्य नहीं छिपता था, जिसके नाविक समुद्र की लहरों पर शासन करते थे- ऐसे अंग्रेजी शासकों की हुकूमत में भी अपनी न्यायप्रियता एवं ईमानदारी का डंका बजाने वाले- दीवानबहादुर (अम्बाला वाले) जस्टिस मेहरचन्द महाजन, जस्टिस गंगा प्रसाद (टिहरी) आदि कुछ ऐसे नाम हैं, जिनके निर्णय न्यायालय के मामलों में मील का पत्थर साबित हुए। इस स्वच्छ आर्यत्व की परम्परा को, आर्योचित विचारधारा को उभयविध (अंग्रेजी एवं स्वदेशी) शासन में आगे बढ़ाया इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश स्व० जस्टिस महावीर सिंह जी ने। उनके समग्र जीवन का अध्ययन करने पर (जैसा मैंने किया) हम कह सकते हैं कि वे एक सच्चे आर्य्य थे। वे किसी वर्ग और क्षेत्र विशेष के न थे। उन्होंने हमेशा निर्बलों को संरक्षण दिया। विनम्रता, सरलता, ईमानदारी, पवित्रता और साहस की तो वे जीती जागती मूर्त्ति थे। उन्होंने न्यायालय में जो सही साक्ष्य पाये गये उसी के आधार पर निर्णय दिये। इसीलिए लोगों का उन पर विश्वास था। मलकपुर (गाजियाबाद) ग्राम से सम्बन्धी वाद इस बात का प्रतीक है बड़ी से बड़ी ताकत के सामने भी वे कभी गलत कार्यो के लिये तैय्यार नहीं हुए। सिद्धान्तों के सामने उन्हें सब समान दिखायी पड़ते थे। क्योंकि वे युगप्रवर्तक स्वामी दयानन्द के सच्चे अनुयायी थे और अनुयायी थे वे भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र के। ईश्वर को छोड़कर कभी इन्होंने किसी से भय न माना। बदायूँ केस से सम्बन्धित तत्कालीन उ०प्र० के मुख्यमन्त्री कमलापति त्रिपाठी से हुई उनकी बातचीत इसका प्रबल उदाहरण है। अपने जीवन में इस महानुभाव ने कभी भ्रष्टाचार को पनपने नहीं दिया। यदि वे चाहते तो अपार अकूत धन-सम्पत्ति अर्जित कर सकते थे परन्तु, लोभलालच से हमेशा किनारा किया। यहाँ तक कि ससुराल की कई सौ बीघा जमीन जायदाद भी जिस पर इनका (इनकी पत्नी का) अधिकार बनता था, को स्वीकार नहीं किया। इस घटना को सुनकर तो स्वामी दयानन्द के जीवन से सम्बन्धी उदयपुर के एकलिङ्ग महादेव मन्दिर की घटना स्मृति-पथ पर आ जाती है। वास्तव में वे ऋषि

के परमभक्त एवं अनुयायी थे। ऋषिवर दयानन्द ने ऋग्वेद (१-४२-३) के भाष्य में लिखा है-

'..........**केचित् प्राड्विवाकाः सन्तो जनान् विवादयित्वा पदार्थान् हरन्ति, केचित् न्यायासने स्थित्वा शुल्कादिकं स्वीकृत्य मित्रभावेन वाऽन्यायं कुर्वन्त्येतदादयस्सर्वे चौरा विज्ञेयाः। एतान् सर्वोपायैर्निवर्त्य मनुष्यैः धर्मेण राज्यं शासनीयमिति।'** अर्थात् राज्य में विविध प्रकार के चोर होते हैं। जिनसे अराजकता उत्पन्न होती है, उनमें लोगों को झूठे मुकदमों में डलवाकर उनका धन ऐंठने वाले वकील और न्याय के आसन पर बैठकर रिश्वत लेकर या मित्रता के कारण अन्याय करने वाले न्यायाधीश भी हैं, इन सब चोरों से निपटकर लोगों को धर्म का राज्य स्थापित करना चाहिए।' जस्टिस साहब ने आजीवन ऋषि के उक्त आदेशानुसार कार्य किया। और यही कारण था कि इस ऋषि-निर्दिष्ट मार्ग पर चलते हुए उन्हें अनेक कष्ट उठाने पड़े।[१] यहां तक कि अन्त में नौएडा में मकान बनाने के लिए अपनी प्यारी मातृभूमि एलम गांव की जमीन भी बेचनी पड़ी।

योगी अरविन्द घोष ने 'आर्य्य' शब्द की परिभाषा इस प्रकार की है- **'आर्य्य शब्द में उदारता, नम्रता, श्रेष्ठता, सरलता, साहस, पवित्रता, दया, निर्बल, संरक्षण, ज्ञान के लिए उत्सुकता, सामाजिक कर्त्तव्यपालन आदि सब उत्तम गुणों का समावेश हो जाता है। मानवीय भाषा में इससे उत्तम और कोई शब्द नहीं है।**[2]

उपर्युक्त परिभाषा के आलोक में यदि न्यायाधीश महावीर सिंह को परखकर देखते हैं तो वे इस पर खरे उतरते हैं। उन्होंने मन, वचन और कर्म से अपने उत्तरदायित्व का वहन करते हुए कभी अनार्योचित आचरण को अपने जीवन में स्थान नहीं दिया। **अतएव मेरी दृष्टि में वे सच्चे अर्थों में आर्य्य थे।**

---

१. न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्, धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये, जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः।।महाभारतम्।।
निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मीस्समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।भर्तृहरिः।।

2. The word Arya expresses a particular ethical and social order of well- governed life, condour, courtesy, nobility, straight dealing courage, gentleness, purity, humanity, compassion, protection of the weak, libarty, observance of social duties, eagerness for knowledge, respect for the wise and the leaved and the social accomplishment . There is no word in human speech that has a nobler history. 'Arya' Vol-I, P. 63

स्व० जस्टिस महावीर सिंह भावी संवैधानिक अभिव्यक्ति के द्रष्टा भी थे। विदेशी भाषा के माध्यम से संवैधानिक विषयों का अध्ययन करने वाले छात्रों का कितना अधिक समय भाषा सीखने में नष्ट होता है यह देखकर जस्टिस साहब को सदा कष्ट होता था। ज्ञान-विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन और प्रसार-प्रस्तार साध्य है और भाषा उसका केवल साधन। यदि साध्य की अपेक्षा साधन की प्राप्ति के लिए अधिक यत्न करना पड़े तो सचमुच चिन्ता की बात है। पर इस तथ्य को समझकर इस कष्ट का निवारण करने की सतत अभिलाषा कितने संविधान-विशारदों में है, जो स्व० जस्टिस महावीर सिंह में थी। स्व० जस्टिस साहब ने भारतीय संविधान की आर्य्यभाषा हिन्दी में प्रामाणिक विस्तृत व्याख्या लिखकर उसे कई भागों में प्रकाशित करवाया। हिन्दी में ही उन्होंने उत्तर प्रदेश के सहकारिता से सम्बन्धित कानूनों की टीकाएं भी छपवाई। कानून के क्षेत्र में राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा इनसे बढ़कर शायद ही किसी ने की हो। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के इतिहास में हिन्दी भाषा में सबसे पहली बार एक केस का निर्णय लिखकर एक उदाहरण प्रस्तुत कर मातृभाषा की उन्नति के लिए जो कार्य किया वह सदैव याद किया जायेगा।

आज से एक वर्ष पूर्व मुझे उनके पैतृकगांव में उनके अन्त्येष्टि संस्कार में सम्मिलित होने का अवसर मिला। उत्तर प्रदेश के एक गांव में जन्मे इस धरती-पुत्र के संस्कार में वर्षा ऋतु में भी इतने मनुष्य होंगे, इसका मुझे अहसास भी नहीं था। परन्तु, अपार जनसंमर्द को देखकर लगा कि वास्तव में यह व्यक्तित्व अपनी धरती के साथ जुड़ा रहा है। लोगों में इनके प्रति आदर और सम्मान था। जस्टिस साहब से अवस्था में कई वर्ष बड़े एक वृद्ध महाशय को मैंने यह कहते हुए देखा कि "महावीर को एक बार तो देख लेने दो पता नहीं फिर किस जन्म में दर्शन होंगे ?" और यह कहते हुए उस वृद्ध की आँखों से अविरल अश्रुधारा बहने लगी। इस दृश्य को देखकर मेरा भी हृदय पिघल गया और मैं भावविभोर होकर सोचने लगा कि-

'कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले,
रज्जुच्छेदे के घटं धारयन्ति।
एवं लोकस्तुल्यधर्मो वनानां,
काले-काले छिद्यते रुह्यते च।।' (भास)

अर्थात् मृत्यु उपस्थित होने पर कोई किसी की रक्षा नहीं कर सकता। जब

रस्सी ही टूट जाये तो घड़ा कैसे धारित हो सकता ? यह समस्त प्राणि संसार वनवृक्षों के समान समय पर नष्ट और उत्पन्न होते रहते हैं।

महाकवि भास का उपुर्युक्त कथन सत्य तो है परन्तु, आर्य्यसमाज में जस्टिस साहब के जाने से जो क्षति हुई है, जो रिक्तता, शून्यता आयी है उसकी पूर्ति होना असंभव है, क्योंकि उन्होंने अनेकों बार न्यायालय से बाहर आर्य्यसमाजी पक्षों में सुलह करवायी और सभाओं के आन्तरिक विवादों को कानूनी प्रक्रियाओं में उलझाने के स्थान पर प्रेमपूर्वक श्रद्धा एवं धार्मिक भावनाओं के आधार पर आपसी सहमति से उन्हें सुलझाने पर बल दिया। आर्य्यसमाजी भाईयों में परस्पर विवाद को देखकर उन्हें बहुत कष्ट होता था।

मानवीय गुणों से ओतप्रोत, ऋषिवर दयानन्द के परमभक्त, भारतभारती के समुपासक, धरतीपुत्र स्व० जस्टिस महावीर सिंह जी की वार्षिकी पर उन्हें मेरी विनत श्रद्धाञ्जलि।

-उपसम्पादक,
गुरुकुल पत्रिका

नीर क्षीर विवेकी आदर्श आर्य नेता श्री महावीर सिंह

निहाल सिंह आर्य, दिल्ली

१९७२ ई० से ही सौरम पंचायत के महामन्त्री वयोवृद्ध चौ० कबूल सिंह ने मुझे एलम ग्राम के निवासी तथा लखनऊ, इलाहाबाद के उच्चन्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश श्री महावीर सिंह जी तथा उनके बड़े भाई गंगाराम जी की सुकीर्ति सुना दी थी। १९७८ ई० में दिल्ली के सी-४, जनकपुरी स्थान में भरत पुर नरेश सूरज मल शिक्षण संस्थान-उद्घाटन के सुअवसर पर भारत के राष्ट्रपति महामहीम संजीव रेड्डी, पूर्व मुख्यमंत्री तथा प्रधान मंत्री चौ० चरण सिंह और इस संस्था के उपप्रधान महावीर सिंह जी न्यायाधीश को देखकर बहुत हर्ष हुआ। महावीर सिंह जी निरन्तर इस संस्था में उपप्रधान पद को सुशोभित करते रहे। तब से ही श्री महावीर सिंह जी से मिल कर हम दोनों का सम्बन्ध निरन्तर बढ़ ही गया। आप कुशल प्रवीण न्यायविद् नेता सौम्य स्वभाव, मिलनसार थे। 'सादा जीवन और उच्च विचारों' की आप सजीव मूर्ति थे। आप दिखावे तथा तड़क-भड़क से कोशों दूर सादगी के देवता थे। आपकी स्मरण शक्ति बहुत तीव्र थी आप ने भारतीय राज विधि विधान पर आंगल भाषा में कई प्रशंसनीय पुस्तकें लिखी हैं। आप प्रत्येक अभियोग का सूक्ष्म अध्ययन मनन करके सत्य निर्णय ही लेते थे। एक अभियोग में आपने कई हजारों रुपयों की रिश्वत ठुकरा कर याथातथ्य सत्य न्याय का ही पक्ष लिया। भारतीय जन समाज, आर्य समाज, तथा राजनीति में आपकी बहुत प्रतिष्ठा थी। आपके नेत्रों में सत्यवीरता का तेज चमकता था। सर्वथा नम्र निरभिमानी निर्लोभी जन सेवक थे।

सर्वखाप पंचायत सौरम के अध्यक्ष- सौरम की पंचायत ८-९ मार्च १९५० ई० से सर्वखाप पंचायत के महासम्मेलन से पुन: प्रकाश में आ गई। इसके प्रथम अध्यक्ष २७ अगस्त १९७९ ई० तक पूर्व सांसद आर्य नेता गुरुकुल कांगड़ी के पूर्व उपकुलपति पं० जगदेव सिंह सिद्धान्ती जी थे। दूसरे १९८१ ई० से १९८३ ई० तक पं० रघुवीर सिंह शास्त्री थे और तीसरे १९८३ से १९९७ ई० तक मेरे इस लेख के नायक आर्य विद्वान् श्री महावीर सिंह जी न्यायाधीश अध्यक्ष रहे। चौ० कबूल सिंह जी के साथ १२ जून १९८३ ई० गोहाना की सर्वखाप पंचायत में हम तीनों साथ थे। महावीर सिंह जी को ही प्रधान बनाया था इन्होंने सर्वखाप पंचायत के संगठन, सदाचार तथा स्वदेश रक्षा पर बल दिया था।

आप गत ४-५ वर्षों से विश्व प्रसिद्ध गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार के सर्वमान्य परिद्रष्टा पद पर शोभायमान रहे। इनकी मधुर स्मृति में गुरुकुल कांगड़ी पत्रिका के माध्यम से मेरी श्रद्धाञ्जलि।

आप सदृश महात्मां को अनेकश: नमन ।।

श्रद्धेय जस्टिस महावीर सिंह

डॉ० सोहनपाल सिंह आर्य

गुरुकुल कांगड़ी वि०वि० के सम्मानित परिदृष्टा जस्टिस महावीर सिंह जी का विगत ११ अगस्त को दिल्ली में निधन हो गया। उनकी पार्थिव देह को अंतिम विदाई देने गुरुकुल परिवार के साथ मैं भी एलम पहुँचा। अपराहन् ३ बजे तक उनका अन्त्येष्टि संस्कार वैदित रीति के अनुसार सम्पन्न भी हो गया। परन्तु शोकाकुल उनके इष्ट-मित्रों एवं शुभचिन्तकों को नहीं लगा कि वे सदा के लिये हमारे बीच से चले गये। वहां सभी लोगों ने जस्टिस साहब के असामयिक निधन से उत्पन्न वेदना एवं रिक्तता को गहराई से अनुभव किया और सचमुच उसे अपनी व्यक्तिगत क्षति माना। जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में शायद ही सम्भव हो।

वस्तुत: सार्वजनिक जीवन में नैतिकता पर मंडराये-गहराये संकट की इस घड़ी में ऐसे निर्भीक व ईमानदार प्रशासक, प्रख्यात कानूनविद् व लेखक, प्रखर राष्ट्रवादी नेता एवं समर्पित आर्य-पुरुष की नितान्त आवश्यकता था, विशेषकर- आर्य समाज, राष्ट्रवादी राजनीति, महिला शिक्षा, ग्रामोत्थान और हिन्दी आन्दोलन से जुड़े लोगों को। यदि स्वार्थवाद की इस वर्तमान आँधी में सत्पथ से हमारे कदम न डिगे, तो यह उस कर्मयोगी के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि हो जायेगी। प्रभु से विनती है कि जस्टिस साहब के पग-चिन्हों पर चलने के लिये वह हमारे भीतर शक्ति एवं साहस का संचार करे।

स्व० जस्टिस साहब स्व निर्मित (Self made) व्यक्तित्व के स्वामी थे। यद्यपि उनकी एलम से इलाहाबाद तक की लम्बी विकास यात्रा अनेक मोड़ों, पड़ावों और संघर्षों से होकर गुजरी; तथापि उसमें कभी ठहराव या भटकाव नहीं आया। देहातों में इसे सुखद आश्चर्य के रूप में देखा गया कि उन्होंने केवल अपनी योग्यता एवं कर्तव्य निष्ठा के बल पर ऐसा सम्मानास्पद पद प्राप्त किया। उन्होंने ग्रामीण मानसिकता के इस मिथक को भी तोड़ा कि राजाश्रय, सिफारिश अथवा रिश्वत के बिना केवल अपनी योग्यता, क्षमता के बल पर अभीष्ट मंजिल तक नहीं पहुँचा जा सकता सही ही, उनसे जुड़े लोग जस्टिस साहब की उपलब्धियों पर गर्व अनुभव करते हैं।

यद्यपि, मुझे उनके निकट सम्पर्क में आकर, उन्हें नजदीक से समझने का सौभाग्य नहीं मिला तथापि, उनके उन्नयनकारी जीवन , विद्वता, जनसेवा और चरित्र की दृढ़ता ने पश्चिमी उ०प्र० में उनकी यश पताका को गाँव-२ में पहुँचाया। बहुत कम लोगों को ज्ञात है कि स्व० जस्टिस साहब किसान यूनियन उ०प्र० के प्रारम्भिक संगठन कर्ताओं में से थे। किन्तु बाद में किसान नेता श्री टिकैत से मत भेदों के चलते उन्होंने यूनियन

के अराजनैतिकवाद को तिलाञ्जलि देकर सक्रिय राजनीति में प्रवेश किया। उन्हें पश्चिमी उ०प्र० भाजपा का प्रभारी बनाया गया। जस्टिस साहब के योगदान और सेवाओं के कारण आर्य समाज-विशेषकर गुरुकुल कांगड़ी वि०वि० तो सदैव उनका ऋणी रहेगा।

स्व० महावीर सिंह जी के विकासमान जीवन का मूल मंत्र था 'सादा जीवन, उच्च विचार'। वे चाहे उ०प्र० हाई कोर्ट के माननीय न्यायाधीश के रूप में हो अथवा भाजपा नेता के रूप में या गुरुकुल वि०वि० के परिदृष्टा के रूप में हो या फिर किसान आन्दोलन के संगठन कर्ता के रूप में- वे सदैव सादगी एवं विद्वता की प्रतिमूर्ति दिखलाई पड़े। परन्तु उसकी सादगी कोई ऊपर से ओढ़ी गयी अभिजात्य ढंग की दिखावा मात्र न होकर उनके अन्दर-बाहर पूर्णत: रची बसी सादगी थी और उस सादगी के भीतर से झाँकती उनकी प्रखर बौद्धिकता एवं विद्वता हर किसी को उनका सम्मान करने के लिये विवश कर देती थी। उन्होंने अपने जीवन में ऊँचाइयों को छू लेने के पश्चात् भी अपने कदम धरती से न डिगने दिये। यही कारण है कि वे अपने क्षणों तक एलम में महिला पॉलिटैक्निकल प्रशिक्षण केन्द्र का संचालन करते रहे। यह उनकी नारी शिक्षा और ग्रामोत्थान के प्रति अटूट अनुराग का ज्वलंत प्रमाण है।

स्व० सिंह साहब सही अर्थो में धरती-पुत्र थे वे खॉटी ग्रामीण जीवन शैली में पले एवं बढ़े भी। किन्तु उच्च वर्ग में अपना सम्मानित स्थान बनाने में उस देहातीपन को कभी अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। इसलिये शहरियों के बीच शहरी होकर रहे भी, आगे बढ़े भी। परन्तु उनका वह शहरीपन देहाती समाज से रिश्ते बनाये रखने में कभी बाधक नहीं हुआ। यह उनकी उत्कृष्ट मानवीय संवेदनाओं और सरोकारों के प्रति अटूट आस्था का परिचायक है। जिसके संस्कार उन्होंने अपने परिवार के अलावा आर्य समाज से पाये थे।

वे उन चन्द व्यक्तियों में से थे, जिन्हें अपना लक्ष्य पाने के लिये कदाचित् ही किसी सभा/संगठन से सहायता मिली अथवा लेनी पड़ी हो। यह भी सच्चाई है कि उनके इर्द गिर्द संगठन खड़ा हो जाता था। जब वे किसी काम को पूरा करने की ठान लेते थे। इसलिये स्व० जस्टिस साहब के बारे में यह कहना अधिक सही होगा उनका व्यक्तित्व प्रसिद्धि के लिये किसी पद का मोहताज न था अपितु, वे जिस पद पर भी आसीन हुये, उनके सरल, शालीन, निष्कलंक प्रबुद्ध और तेजस्वी व्यक्तित्व के कारण उस पद की गरिमा ही बढ़ी। वे अब हमारे बीच नहीं है। किन्तु उनके द्वारा दिखाया मार्ग और आदर्श लम्बे समय तक भावी पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा।

प्रवक्ता
दर्शन विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

देवतुल्य श्री महावीर सिंह जी

सुरेन्द्र सिंह तोमर
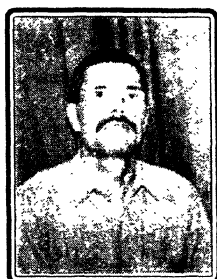
न्यायाधीश चौ० महावीर सिंह हमारे पिताजी के बड़े भाई यानि हमारे ताऊ जी थे। वे सिर्फ नाम के ही महावीर सिंह नहीं बल्कि अपनी कथनी और करनी के भी महावीर थे। मैंने अपनी ट्रेनिंग लखनऊ में ली थी। ताऊ जी कई बार मुझसे मिलने ट्रेनिंग सेन्टर आये। उनके साथ उनकी धर्मपत्नी स्व० श्रीमती होशियारी देवी भी आती थी। जो एक बहुत ही ममतामयी स्त्री थीं। ट्रेनिंग समाप्त होने पर जब मैं ताऊ जी से मिलने गया तो वे बड़े खुश हुए। जब मैंने उन्हें बताया कि मेरा ट्रांसफर दूर हो गया तो वे बोले तुम चिंता मत करो और मेरे साथ चलो। ताऊ जी ने गाड़ी स्टार्ट की। परन्तु गाड़ी स्टार्ट होते ही बंद हो गयी। ताऊ जी चाहते तो गाड़ियों की लाईन लग सकती थी। परन्तु नहीं ताऊ जी ने किसी को परेशान करना उचित नहीं समझा। और कोठी से निकल पड़े। डी०आई०जी० साहब से मुझे मिलवाने के लिए उनके निवास स्थान पर। हालाँकि एक पत्र देकर वे मुझे अकेले को या किसी नौकर को भेज सकते थे या फिर फोन कर सकते थे। परन्तु नहीं, मेरे साथ करीब अढ़ाई किमी० पैदल गये और फिर पैदल आये। ये बात सन् १९८० की है। उस समय वे उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद को सुशोभित कर रहे थे। वैसे तो उनकी हर एक बात अलग थी।

मुझे एक और घटना याद आ रही है। ये सन् १९८५ की बात है। मैं किसी कार्यवश ताऊ जी से मिलने गया। ताऊ जी ने मेरी समस्या बड़े ध्यान से सुनी और उसका निदान किया। फिर कहने लगे कि दो दिनों बाद तुम मेरे साथ चलना। मुझे किसी रिश्तेदारी में जाना है। दो दिनों बाद ताऊ जी ने मुझे लोनी बॉर्डर पर मिलने को कहा। क्योंकि उन्हें कस्बा शामली के पास किसी गांव में जाना था।

शायद आपको विदित होगा कि दिल्ली से सहारनपुर वाली सड़क पर बेहद भीड़ रहती है और उस रोज मानो सारी दिल्ली भाग रही थी और वे भी सहारनपुर वाली सड़क से बसों में भीड़ का बुरा हाल था। हमने एक बस देखी, दो देखी, दस देखी, परन्तु भीड़ घटने के बजाय बढ़ती जा रही थी। फिर ऐसी ही एक भीड़ भरी बस में चढ़ गये। मैंने उनका परिचय देकर किसी सहयात्री से उन्हें सीट दिलाने के लिए कहा। परन्तु उन्होंने सख्त मना कर दिया। और इस भीड़ भरी बस और पसीने से सराबोर शामली बस अड्डे पर उतर गये। वहाँ से दूसरी बस पकड़ कर हम १० किमी० और चले। फिर हमें बस छोड़नी पड़ी। क्योंकि वहां से आगे बस नहीं जाती थी। बस से उतर कर मैं इधर-उधर देखने लगा। ताऊ जी

बोले क्या देख रहे हो ? मैं बड़ी शर्म महसूस कर रहा था। मैंने कहा कोई वाहन देख रहा हूँ। परन्तु मिल नहीं रहा है। वाहन के अभाव में ५ किमी० पैदल चलना पड़ेगा। ताऊ जी मैं तो चला जाऊंगा। परन्तु आप परेशान हो जायेंगे। ताऊ जी ने प्यार भरी झिड़की दी और कहा- अरे! किसान का बेटा हूँ। क्यों नहीं चलूंगा पैदल। जून का महीना था। नीचे तपती हुई रेत और ऊपर से भीषण गर्मी बरसाता सूर्यदेव। ऐसी भयानक गर्मी में हमारे ताऊ जी यानि की उच्चतम न्यायालय से अवकाश प्राप्त न्यायाधीश और सर्वोच्च न्यायालय में सीनियर वकील पैदल चले जा रहे थे और वो भी बिना किसी परेशानी के। रास्ते में एक पेंड़ की छाया देखकर हम थोड़ी देर के लिए वहां रुक गये। वहां दो-चार आदमी और भी बैठे हुए थे। उन्होंने हमारा परिचय पूछा। जब मैंने ताऊ जी का परिचय दिया तो वे सब नतमस्तक हो गये और कहने लगे कि इस जमाने में इस तरह का दूसरा उदाहरण मिलना असम्भव है। एक छोटा सा क्लर्क भी पैदल चलने में अपनी तौहीन मानता है। और कहां जजसाहब जिनके माथे पर शिकन तक नहीं है।

उनकी हर एक बात अनूठी थी। जब कभी उनसे मिलने जाता, उन्हें हमेशा कुछ न कुछ लिखते या पढ़ते हुए पाता। जब कभी मैं उनसे इस बारे में कहता कि आप थकते नहीं हो तो ताऊ जी हंसकर कहते :-

काक चेष्टा बकोध्यानं श्वाननिद्रा तथैव च।
अल्पाहारी, सदाचारी पुरुष पंचलक्षणम्।।

वे हमें भी हमेशा यही सलाह दिया करते थे। जो भी कार्य करो सच्चे मन और लगन से करो। जब ताऊ जी हमारे गाँव आया करते थे तो हमेशा ही जमीन पर बैठकर भोजन किया करते थे। और सभी परिवार वालों के साथ बाहर चबूतरे पर सोया करते थे।

आपको विदित ही होगा कि पहले गांव में घर के अंदर शौचालय नहीं बनाते थे। हमारे ताऊ जी सुबह हाथ में पानी का डिब्बा लेकर दिशा मैदान के लिए खेत में जाया करते थे। और फिर नीम की लकड़ी से दातून किया करते थे। ऐसे थे हमारे ताऊ जी। सादा जीवन उच्च विचार की वे जीवंत मूर्ति थे। अपनी बीमारी की हालत में भी वे किसी पर बोझ नहीं बने। जब कभी मैं या कोई भी उनसे मिलने गया तो उन्होंने बिस्तर पर लेटे-२ ही हंसकर स्वागत किया। और फिर एक दिन काल की वो भयानक घड़ी ताऊ जी को हमसे हमेशा के लिए दूर ले गयी। उनके ब्रह्मलीन होने से मैं अपने जीवन में एक बहुत बड़ा शून्य महसूस करता हूं। और बस आखिर में यही कहूंगा कि :-

पूज्य ताऊ जी हो सके, तो लौट के आना।
आँखें हैं दर्शन की प्यासी, दर्शन दिखाना।

मेरी तरफ से मेरे ताऊ जी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि और शत-२ प्रणाम।

बागपत

एक महान् विभूति

बाबूराम

मनुष्य जीवन के तीन सौभाग्य होते हैं। विद्वानों का यह मानना है कि पहले तो मनुष्य जन्म मिलना ही दुर्लभ है, जीव कर्मों के अनुसार बार-बार जन्म ग्रहण करता है, अर्थात शरीर धारण करता है। जब पूर्व जन्म में जीव बहुत ही अच्छे कार्य करता है तो उसे मनुष्य जीवन प्राप्त होता है फिर उसमें मनुष्य की महानता, तथा महान् पुरुषों की निकटता ये तीनों ही रूप श्री महावीर सिंह जी में साक्षात् रूप में विद्यमान थे।

श्री महावीर सिंह जी सरल स्वभाव एवं मधुर भाषी, सीधी सतर कद की काठी, दृढ़ता से बन्द होठ, चेहरे से टपकती गम्भीरता, तरल आँखें सादगी पूर्ण लिबास, भारतीय संस्कृति में रचा बसा मन, हर नयी चीज को ग्रहण करने को उद्यत मस्तिष्क तथा आँखों को खोलना तथा बन्द करना मानों किसी को तोलने की प्रतिक्रिया था। यह था उनका बाहरी रूप।

इनका जन्म एलम में चौ० जीत सिंह के यहां हुआ था। इनकी माता का नाम हरकौर था जो एक सरल स्वभाव तथा देवी प्रवृत्ति की महिला थी पिता श्री चौ० जीत सिंह जी कट्टर आर्य समाजी, संयमी, समय की पाबन्दी रखने वाले तथा अपने असूलों पर अटल रहने वाले एक महान् व्यक्ति थे। माता-पिता का प्रभाव श्री महावीर सिंह जी पर भी गहरा पड़ा। श्री महावीर सिंह जी में समाज, राष्ट्र, ग्रामीण कृषक, मजदूर तथा माता-पिता की सेवा की भावना जैसी उनमें थी, वैसी अन्यत्र दुर्लभ थी यदि किसी को उनकी कहीं आवश्यकता होती, तो वे चौबीस घन्टे अर्थात् हर समय तैयार रहते थे। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन दूसरों की सेवा, सादगी एवं ईमानदारी के साथ समर्पित कर दिया। उनके संस्मरणों को हम कई भागों में विभाजित कर सकते हैं। जो निम्न प्रकार हैं।

न्यायप्रियता : श्री महावीर सिंह के हृदय में न्याय की भावना कूट-२ कर भरी हुई थी। वे हाई कोर्ट के न्यायमूर्ति तो बने, परन्तु उनके विचारों से यह आभास होता था कि उनका जन्म न्याय के लिये हुआ है। जब वे प्रारम्भ में मुंशीफ चुने गये, तो छुट्टियों में जब वे गांव आते थे अपने गांव तथा आस-पास के विवादों

के फैसले वे पंचायतों के माध्यम से निपटाया करते थे। उन्होंने अपने यहाँ का कोई भी मुकदमा न्यायालय में नहीं छोड़ा। सभी का निपटारा समझा बुझाकर कर दिया।

जब वे जिला जज के रूप में बदायूँ में थे तब उनकी न्यायप्रियता को देखकर उनका अभिनन्दन किया गया। और उन्हें शाहजाहाँ तथा विक्रमादित्य की उपाधि से सम्मानित किया गया। उनके साथ गांव में चण्डीगढ़ हाई कोर्ट के चीफ जस्टिस कच्छावत सहाय आये थे उन्होंने बताया कि श्री महावीर सिंह जी के मुंशीफी से हाईकोर्ट तक उनके निर्णय की अपील, उनके फैसले के अनुसार रही, कभी भी किसी अदालत में तबदील नहीं हुई। कानून के तो वे महान् ज्ञाता थे परन्तु न्यायाधीश होने के साथ-साथ स्वभाव तथा जन्म से न्याय का चौला पहने हुए थे।

समाज सेवा तथा मातृ-पितृ भक्ति की भावना –

जिस समय वे सहारनपुर में मुंशीफ थे माता-पिता की सेवा भावना का ध्यान हृदय में रखते हुये छुट्टियां न करते हुए नित्य गांव आये करते थे तथा माता-पिता का ध्यान अपने आप ही करते थे। उनके परिवार के अन्य सदस्य भी सेवा करने वाले थे जबकि उनकी पत्नी के हृदय में भी मातृ-पितृ भक्ति भावना कूट-२ कर भरी हुई थी। परन्तु इतने वे अपने आप अपने हाथों से स्नान नहीं करा देते थे उनके मन को सन्तोष का आभास नहीं होता था। जिस समय सहारनपुर आये थे तो उसी समय इनकी माता का स्वर्गवास हो गया था। जिस समय जिला रामपुर में जिला जज थे तो उसी समय इनके पिता जी के पैर में फैक्चर हो गया। तो इन्होंने उन्हें दिल्ली हास्पिटल में भर्ती कराया, तथा वहीं बरान्डे में फर्श पर चादर बिछा कर महीनों तक सेवा की। उनके ठीक होने पर अपने साथ लेकर गये। चौ० कन्हैया लाल जी उनके श्वसुर थे उनके भी एक पुत्री थी इन्होंने उनको भी अपने पास रखकर अन्तिम समय तक सेवा की। ऐसी मातृ-पितृ भक्ति की भावना रखने वाले श्रवण कुमार का इतिहास। अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इनके पिता जी ने १०२ वर्ष ही अवस्था में अपना शरीर पूर्ण कर लिया। उनकी शताब्दी सादगी स्वरूप बड़ी धूम धाम से मनायी गयी।

गांव मजदूर एवं कृषक की उनके हृदय में चिन्ता सदा बनी रहती थी। गांव में सन् १९४४ में उन्होंने एक सहकारी सोसायटी बनायी फिर क्षेत्र तथा अन्य गांवों में भी सहकारी सोसायटी बनवायी तथा एक संघ का निर्माण कराया,

जिससे गांव वाले अनभिज्ञ थे। जो आज तक कार्यरत हैं एक छोटी सी पूँजी से बहुत बड़ी सम्पत्ति संघ की बनी। गांव में महीने के प्रथम रविवार को एक मीटिंग रखते थे। तथा उसी में सभी समस्याओं का निदान कर देते थे। गांव में ग्रामवासियों के साथ वे कन्धे से कन्धा मिलाकर चलते थे ग्रामवासियों के साथ घर-२ जाकर चन्दा माँग कर, प्रधानों के माध्यम से फर्श लगवाये। वे हर समय गांव का उत्थान देखना चाहते थे इसलिये उनका कथन भी था कि मेरा पूर्ण सहयोग गांव के लिये रहा है, तथा रहेगा।

शिक्षा के क्षेत्र में योगदान— विद्या एक ऐसा दीपक है जो स्वयं प्रकाशित होता है तथा अपने प्रकाश से दूसरों को भी प्रकाशित करता है। श्री महावीर सिंह जी एक विद्वान् व्यक्ति थे वे विद्या के महत्व को जानते थे तो उन्होंने विद्या रूपी चिराग को जलाने का कार्य सन् १९४४ में मीडिल स्कूल की स्थापना एलम में की तथा उसे सन् १९५० में हाईस्कूल की मान्यता दिलायी। तत्पश्चात् इण्टरमीडिएट की मान्यता दिलाकर शिक्षा के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। इसके अलावा न्याय में जाने से पूर्व उन्होंने एक आदर्श अध्यापक के रूप में वैदिक जनता इन्टर कालेज बड़ौत में कार्य किया।

मुजफ्फरनगर जिले के अनेक कालेजों में तन, मन, धन से पूर्ण सहयोग दिया। गांव में महिला पालिटैकनिक तथा जो बदल कर आई०टी०आई० रूप में, अपना निजि मकान देकर संस्था को मान्यता दिलायी। जो सुचारु रूप से आज भी चल रही है। जो अनेक महिलाओं को दस्तकार बनाकर नौकरी के योग्य बनाती है। वे कई राज्यों में अनेक विद्यालयों के सदस्य भी रहें हैं। १९९२ से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के विजिटर (परिदृष्टा) पद पर अन्तिम समय तक बने रहे।

ईमानदारी - श्री महावीर सिंह जी एक ईमानदार व्यक्ति थे उनकी ईमानदारी को छिपाया नहीं जा सकता। जिस समय उन्होंने अवकाश प्राप्त किया, तो उनकी पास बुक में केवल एक महीने की ही तनखा थी उन्होंने जो नोएडा प्लाट लिया। अपनी गांव की भूमि बेचकर ही, एक साधारण सा मकान अपनी प्रैक्टिस तथा पुस्तक लिखकर उसे बनाया। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन सादगी तथा ईमानदारी में ही व्यतीत किया। लेखक को साथ रहने का अवसर काफी रहा है। सादा जीवन ऊँच विचार के साथ उनका भोजन भी सादा ही था। वे प्रात: काल में नाश्ते में मट्ठे का प्रयोग करते थे। दिन में नित्य एक ही समय भोजन करने की प्रक्रिया थी। मुझे उनका सहवास काफी रहा है।

उनका चरित्र महान् था तथा अनुकरणीय था मैंने भी उनके जीवन से शिक्षा प्राप्त की, तथा जीवन में उतारने का प्रयत्न किया है। वे एक लौह पुरुष थे कभी भी वे किसी कर्म से पीछे नहीं हटे। उन्होंने अपने जीवन में कर्मठता का संकल्प ले रखा था। उन्होंने जो भी लक्ष्य लिया उसे पूर्ण कर दिखाया उन्होंने जीवन में कर्तव्य पालन को ही अपने जीवन का एक अंग मान लिया और अन्तिम समय तक उसी पर चलकर सिद्धि प्राप्त की। यदि कोई समस्या उकने समक्ष आयी तो वे उस समस्या का निदान स्वयं ही सूझ बूझ के द्वारा कर लिया करते थे। महान् व्यक्तियों के चरित्र का वे अनुकरण करते थे। एक बार भारत के प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री जी सन् १९६५ में एक नारा दिया था कि हम भूखे रह सकते हैं लेकिन आत्म सम्मान नहीं बेचेंगे। क्योंकि अमेरिका के राष्ट्रपति आमन्त्रित करके भी उनसे नहीं मिल पाये थे। इसलिये उन्होंने निश्चय किया कि देश का हर वासी सोमवार का एक समय का व्रत रखे तो हमारी पूर्ति अनाज के बिना आयात किये ही हो जायेगी। तभी से श्री महावीर सिंह जी ने सोमवार को व्रत रखकर अन्तिम समय तक एक ही समय भोजन किया।

जहां उन्होंने कानून के ऊपर अनेक पुस्तकें लिखीं वहां भारतीय संविधान का हिन्दी रूपान्तर किया। ग्रामीणों के लिये न्याय पंचायत, चकबन्दी एक्ट जैसी पुस्तकें प्रकाशित कराकर बहुत से व्यक्तियों को नि:शुल्क प्रदान की। आर्य समाज की तथा अन्य पत्रिकायें भी उनके पास आती रहती थी उनका व्यय सहन करने की असीम प्रवृत्ति थी। जबकि मितव्ययता इतनी थी कि आस-पास के गांवों में बिना गाड़ी के पैदल ही चलकर ग्रामीण समस्याओं का निपटारा करते थे। यदि कोई उनसे मिलने आता था तो उसके साथ मुस्कराकर बातचीत करते थे। मिलने वाले को ऐसा आभास होता था कि जज साहब की निकटता तुम्हारे साथ अधिक है। लेकिन बुराई के आगे टस से मस नहीं होते थे। उनकी वाणी धीमी शोर गुल के बीच से निकलकर सुनायी देती थी। ऐसे थे न्यायमूर्ति श्री महावीर सिंह जी।

-एलम
(मु० नगर)

स्व० न्यायाधीश महावीर सिंह
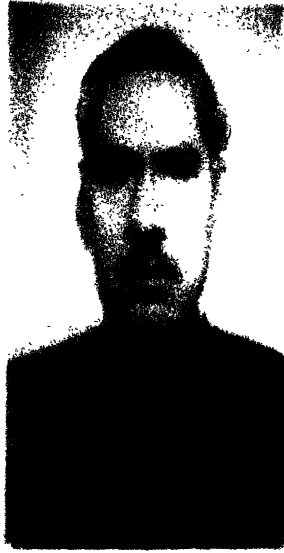
आविर्भाव - १७ अक्टूबर १६१६ तिरोभाव-११ अगस्त १६६७

जस्टिस साहब से सम्बन्धित मेरे कुछ संस्मरण

-प्रो. डी.वी. सिंह राणा
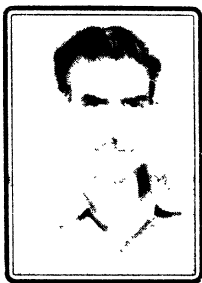
श्री महावीर सिंह जी के बड़े भाई स्वं रणवीर सिंह जी असिस्टेंट कलेक्टर (केन्द्रीय आबकारी) से सेवा-निवृत हुए, जो मेरे साढू थे। यह भी सौभाग्य की बात है कि मेरा विवाह आदर्श नंगला के संस्थापक और छपरोली विकास खण्ड के प्रमुख श्री मनीराम जी की बहन से भूतपूर्व कुलपति एंव सासंद स्व. श्री रघुवीर सिंह शास्त्री ने पुरोहित के रूप में सम्पन्न कराया था एंव पृथ्वी सिंह बेधड़क उस शुभ अवसर पर उपस्थित थे। उस समय स्व. महावीर सिंह जी न्यायिक सेवा में मुन्सिफ के रूप में कार्यरत थे। एक बार उनके बड़े भ्राता ने बताया था कि श्री महावीर सिंह जी ने १९४१ की आई.सी.एस. की लिखित परीक्षा में भारत में चौथा स्थान प्राप्त किया था, किन्तु साक्षात्कार के समय एक मुस्लिम सदस्य ने उनसे 'पाकिस्तान की अवधारणा' के सम्बध में प्रश्न पूछ डाला एक सच्चे राष्ट्रवादी के रूप में उन्होंने इस विचार की धज्जियां उखाड़ दी जिससे खिन्न होकर उनको साक्षात्कार में सफल नहीं होने दिया गया।

जिन दिनों उनके पिता स्व. श्री अजीत सिंह ९२ वर्ष की अवस्था में कूल्हे की हड्डी उतरने पर भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान दिल्ली में भरती थे तो श्री महावीर सिंह जी रामपुर में जिलाधीश थे। उनकी सेवा के लिए आप स्वयं एक-दो माह की छुट्टी लेकर दिल्ली अस्पताल में उनकी चारपाई के पास दरी बिछा कर ....ही दिन-रात रहते थे। मैं प्राय: कई बार उनके पास उनके पिता की (अपने ताऊ जी) के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी लेने गया। एक बार मैंने पूछा कि आप महीनों से छुट्टी लेकर यहां रह रहे है, कोई नौकर भी छोड़ सकते थे तो उन्होंने उत्तर दिया कि 'पिता की सेवा तो हर स्थिति में मुझे ही करनी है चाहे मेंकिसी भी पद पर रहूं। यह कार्य नौकर नहीं कर सकता 'मैंने देखा कि हमारे ताऊ जी अब भी बार-बार आवाज देते 'महावीर, महावीर तो वे भाग कर आते और उनको उठा कर बैठाते। पितृ -भक्ति एवं सेवा का यह एक साक्षात अनूठा नमूना मैंने उनको उठा महीनों से छुट्टी लेकर यहां रह रहे हो, कोई नौकर भी छोड़ सकते थे तो उन्होने उत्तर दिया कि पिता की सेवा तो हर स्थिति तें मुझे ही करनी

है चाहे मैं किसी भी पद पर रहूं। यह कार्य नौकर नहीं कर सकता मैने देखा कि हमारे ताऊ जी जब भी बार-बार आवाज देते-महावीर, महावीर तो वे भाग कर आते और उनको उठा कर बैठाते। पितृ-भक्ति एंव सेवा का यह एक साक्षात अनूठा नमूना मैंने स्वयं उनमें देखा है जिसका निर्वाह वे बड़ी निष्ठा एंव कर्त्तव्य -परायणता और बिना किसी कृत्रिमता के कर रहे थे।

एक और घटना इस समय की है जब उनकी धर्म-पत्नि श्री मती होशियारी देवी गम्भीर,बीमारी से पीड़ित सैनिक अस्पताल दिल्ली में भरती थी। उन्हीं दिनों उनके बड़े पुत्रा भूपेन्द्र सेना में मेजर थें। उनके स्वास्थ्य का पता लेने के बाद जब मैंने श्री महावीर सिंह से अलग से पूछा भाई साहब आपने जीवन में सदैव सद्कार्य नहीं किए, पितृ-सेवा का नमूना मैंने स्वयं देखा है और कभी भी जीवन में कोई ऐसा किया जिससे किसी के साथ कोई अन्याय हुआ हो, परन्तु ईश्वर फिर भी आपको इस रूप में कष्ट दे रहा है तो उनका उत्तर था स्वामी दयानन्द महाराज ने भी सदैव मानुओं परि सद्कार्य किए है, किन्तु उनके जीवन को भी कई बार कष्ट पहुंचा है और महापुरूषों ने भी सदैव इन कष्टों को सहर्ष वहन किया है, मैं तो उनकी तुलना में एक तुच्छ मानव है।

इसी प्रकार अनेक अवसारों पर ये कुछ हंसी-मजाक की घटनाएं भी सुनाते रहते थे जब भी वे बडौत से गुजरते थे तो देहली-रोड़ पर मेरे मकान के सामने अवश्य रूकते औा केवल भट्ठा(छाकू) मक्खन डाल कर ही लेते थे। एक बार वे श्री हेमवती नन्दन बहुगुणा को लेकर ३-४ घंटे भीषण गर्मी के समय दोपहरी भर यहीं मेरे पास रहे। इस समय भी उन्होंने केवल आम का जूस ही लिया था। शेष उनके चरित्रा की बाह्य बातें तो सर्व-विदित ही है।

ये कुछ उपरोक्त संस्मरण है जो मैं आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ। हिन्दी भाषा के ऊपर जो प्रभुत्व आप लोगों का है उसकी तुलना में, मैं समक्ष नहीं हूँ, फिर भी यह तुच्छ प्रयास किया है। अत:आप वाक्य-विन्यास सम्बंधी जो संशोधन करना चाहें अपनी इच्छानुकूल कर सकते है। इस सराहनीय कथन के लिए आपका बहुत बहुत धन्यवाद।

- ८४ सुभाषनगर
बड़ौत - मेरठ २५० ६११

महाप्राण जस्टिस महावीर सिंह

–इन्द्रपाल सिंह, एलम

हे श्रेष्ठ पुरुषों ! आप हमें दुःखों से बचाने के लिए अधिकार पूर्वक उत्तम उमदेश सुनाओ। हे विद्वानों ! हम दुःख अथवा दुर्गति में जब पड़ें तब आप दुखियों की सच्ची टेर सुनने वाले हमारे दुःख सुनकर हमारा त्राण करो। अपनी रक्षा और कल्याण के लिए हम दुःखी जन आपको पुकारते हैं।

साधारण जन सारे जीवन तुच्छ स्वार्थों एवं निरर्थक विवादों में ही फंसे रहकर अपनी शक्तियां नष्ट कर देते हैं। उनके जीवन में कभी चमक नहीं आती और अन्ततः काल-कवलित होने पर लोक में सदा के लिए विस्मृत हो जाते हैं। उनके मरणोपरान्त उनकी कोई चर्चा नहीं होती, उनके लिए कोई गीत नहीं गाये जाते, उनका उल्लेख भी कहीं नहीं होता। बरसात की रात में असंख्य कीट पतंगे न जाने कहाँ से आकर पृथ्वी पर छा जाते हैं और प्रातःकाल सूर्योदय होते ही सब धराशायी होकर मिट्टी में मिलने पर पैरों तले रौंद दिये जाते हैं। किन्तु इसके विपरीत महापुरुष स्वार्थों से ऊपर उठकर तथा भौतिक सुख, पद, प्रतिष्ठा, सत्ता, यश, धन आदि के प्रलोभन से अछूते रहकर आदर्शों, सिद्धान्तों एवं मूल्यों के लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर देते हैं और मानवता के लिए प्रकाश दीप बन कर सदा के लिए अमर हो जाते हैं। जो सदुद्देश्य के लिए संघर्ष करते हैं, इतिहास उनके नाम और यश को स्वर्णिम अक्षरों में सुरक्षित रखता है। इतिहास मानव संघर्ष की ही कहानी है। जिसके जीवन में किसी उत्तम उद्देश्य की पूर्ति के लिए संघर्ष नहीं है, उसमें विशेषता ही क्या है ? जय-पराजय से ऊपर उठकर सत्य और न्याय के लिए संघर्ष करने वाला व्यक्ति ही कुछ उपलब्धि प्राप्त करता है। सीधे सपाट मैदान में चलते चलते उकताहट तथा ऊब हो जाती है। उबड़-खाबड़ तथा ऊँचे-नीचे पहाड़ पर गिरकर और उठकर चलने का उल्लास अद्भुत होता है। नदी की गति में बाधक पत्थर ही उसके प्रवाह में संगीत उत्पन्न करते हैं। सत्य और न्याय के पक्ष में संघर्ष करने वाला व्यक्ति ही दूसरों को प्रेरणा दे सकता है। स्वार्थ लोलुप व्यक्ति के लिए संघर्ष कष्टदायक होता है किन्तु आदर्श महापुरुष के लिए आदर्शों एवं मूल्यों की प्रस्थापना हेतु संघर्ष करना सहज तथा सुखद होता है। भले ही उसे पग-पग पर कठोर विषमताओं का सामना करना पड़े।

ऐसे ही संघर्षशील महापुरुष जस्टिस महावीर सिंह का आचरण सब काल में प्रेरणादायक एवं अनुकरणीय है। उनके संघर्षमय जीवन में कहीं अधीरता अथवा क्षोभ नहीं है। वे सहज, शान्त, धीर और गंभीर है।

उत्तर प्रदेश के जिला मुजफ्फरनगर के अन्तर्गत ग्राम एलम में जन्मे चौ. हरनाम सिंह एक अच्छे सम्मानित व्यक्ति थे। उनके दो पुत्र हुए- चौ. हरकेश और चौ. जीत सिंह। चौ. जीत सिंह सब कुछ बड़े हुए तो उन्हें ग्राम एलम ही में स्थित पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजा गया। वे बहुत तेज-तर्रार और कुशाग्र बुद्धि थे। वे अपनी कक्षाओं में प्रथम आने लगे। उन्होंने कक्षा ४ व ५ एक ही साथ पास कर दी। तब उन्हें ग्राम एलम से करीब ६ मील दूर कांधला पढ़ने के लिए भेजा गया जहां से उन्होंने मिडिल पास किया। फिर कुछ समय अपने गाँव में ही शिक्षण कार्य किया। थोड़े समय बाद ही वे कोटबुंदी रियासत में जाकर अध्यापन कार्य करने लगे। इसी दौरान उन्होंने वन विभाग में इंस्पेक्टर पद के लिए परीक्षा दी, जिसमें उन्हें सफलता मिली। उनकी नियुक्ति वन विभाग में इंसपेक्टर के रूप में हो गयी। उनका विवाह ग्राम कासिमपुर खेड़ी जिला मेरठ (बागपत) निवासी चौ. मानसिंह की पुत्री से हुआ। चौ. जीत सिंह के यहां ५ पुत्र-पुत्रियॉ हुए जिनमें दो पुत्र, चौ. रणवीर सिंह सबसे बड़े तथा चौ. महावीर सिंह सबसे छोटे थे। पूरा परिवार उस समय गाँव में ही था। कुछ समय तक बच्चों ने ग्राम एलम के स्कूल में ही शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात् वे लोग रियासत कोटा चले गये। रणबीर सिंह कक्षा ४ और महावीर सिंह कक्षा २ तक गाँव के स्कूल में पढ़ते थे। पुत्रियां भी उनके साथ ही पढ़ती थी। बड़े भाई रणवीर सिंह ने बी.ए. पास करने के उपरान्त एल.एल.बी. की। महावीर सिंह को कक्षा ७ से ही आगरा के एक छात्रावासीय स्कूल में पढ़ने के लिए छोड़ दिया गया था। उन्होंने इस स्कूल से इण्टर कक्षा पास करके इलाहाबाद से बी.ए. कक्षा उत्तीर्ण की। इसके उपरान्त उन्होंने बड़ोत स्थित जाट कॉलेज में अर्थाशास्त्र के अध्यापक के रूप में कार्य करना आरम्भ कर दिया। इसी दौरान उनका विवाह ग्राम भगान जिला रोहतक निवासी चौ. कन्हैया सिंह की सुपुत्री होशियारी देवी से सम्पन्न हुआ। उनके घर में दो पुत्र और तीन पुत्रियों ने जन्म लिया। बड़े पुत्र का नाम भूपेन्द्र कुमार और छोटे का योगेन्द्र रखा गया। पुत्रियों के नाम क्रमश: विजय लक्ष्मी, निर्मल और रीतू रखे गये। २ वर्ष अध्यापन करने के बाद उन्होंने अपना अध्ययन कार्यक्रम जारी रखते हुए एम.ए. और एल.एल.बी. पास की जिसमें उन्होंने उत्तर प्रदेश में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उस दौरान चोकर हेड़ी निवासी बाबू बलवन्त सिंह मुजफ्फरनगर में वकालत करते थे। चौ. महावीर सिंह ने उन्हीं के पास रहकर वकालत शुरु कर दी। कुछ समय पश्चात महावीर सिंह ने मुन्सिफ की

परीक्षा दी किन्तु दो पेपर देकर ही वे अस्वस्थ हो गये। परिणाम स्वरूप वे शेष पेपर नहीं दे सके। लेकिन जब संकल्प दृढ़ होता है तो बाधाएँ भी अधिक समय तक प्रतीकार नहीं कर पाती। अगले ही वर्ष उन्होंने मुन्सिफ के लिए पुन: परीक्षा दी और उसे उत्तीर्ण कर मुन्सिफ के पद पर नियुक्त हो गये। इस पद पर उन्होंने गाजियाबाद, कानपुर, शाहजहाँपुर और नगीना में कार्य किया। सादा जीवन और उच्च विचार के सिद्धान्त पर चलते हुए वे इस समय में भी अपने कार्य साईकिल पर ही कर लिया करते थे। इसके उपरान्त उनकी नियुक्ति सहारनपुर में सेसन जज के रूप में हुई। इसी पद पर वे क्रमश: बिजनौर, इलाहाबाद और अलीगढ़ में कार्यरत रहे। इसके पश्चात वे बदायूँ औ रामपुर के डिस्ट्रिक्ट जज रहे। तत्पश्चात उन्हें लखनऊ हाईकोर्ट में जज बनाया गया। सन् १९८२ में उन्होंने सेवा से अवकाश ग्रहण कर लिया।

यूँ तो उनसे मेरा सम्बन्ध जन्म से ही था चूँकि हमारा कुटुम्ब एक ही है। जस्टिस महावीर सिह के पिता चौ. जीत सिंह मेरे ताऊजी थे। इस प्रकार हम दोनों में परस्पर भाई का रिश्ता था। महावीर सिंह मुझसे करीब तीन-चार साल आयु में बड़े थे। वे गाँव में जब गर्मियों की छुट्टियों में आते थे तो पूरे परिवार में घुल मिलकर रहते थे। वे मुझसे सचमुच अगाध स्नेह करते थे। उस समय मेरी आयु करीब १९ वर्ष रही होगी, मैं बदायूँ में उनके पास गया और तीन-चार माह ठहरा। तब से तो ताऊजी और जज साहब का मुझसे और भी ज्यादा लगाव हो गया। उस समय बड़ा पुत्र भूपेन्द्र सेना में कैप्टन के पद पर कार्यरत था और छोटा योगेन्द्र जवाहर लाल यूनिवर्सिटी, दिल्ली में अध्ययनरत था। उनके पास उनकी धर्मपत्नी, दो पुत्रियां और पिताजी रहते थे।

उसी समय बदायूँ में कत्ल हुआ जो कदाचित् तुच्छ राजनीति से सम्बन्धित था। इस मामले में मुकदमा चला जिसकी सुनवाई जज साहब ही कर रहे थे। दण्डारय को उचित दण्ड देना न्याय की मांग है। अत: घोर अपराध सिद्ध होते ही जज साहब ने दो विकट अपराधियों के कठोरतम दण्ड फांसी की सजा निश्यित की। फिर तो जज साहब पर निर्णय में शिथिलता के लिए चहुँ ओर से दबाव पड़ने लगे। कहीं से विशद् धन का लालच दिया गया तो कहीं से भयंकर परिणामों की चेतावनी। अनेक बड़े-बड़े अधिकारी, राजनेता और यहां तक कि राज्य सरकार और केन्द्र सरकार के मंत्री भी विविध प्रकार के दबाव डालने लगे। लेकिन उनके निश्चय को कोई तिल मात्र भी हिला न सका। यहाँ यह उल्लेख करना अति आवश्यक है कि श्रीराम अरूणकुमार (पुलिस महानिदेशक, लखनऊ) उस समय बदायूँ में उप-पुलिस अधीक्षक थे और इस केस में मुख्य गवाह थे।

उन्होंने न जाने कितने दबाव झेले किन्तु सच्ची गवाही दी। क्षुद्र राजनीति के चलते उन्हें पुलिस विभाग से हटाकर होमगार्डस् में भेज दिया गया किन्तु उन्होंने सत् कर्तव्य का मार्ग नहीं छोड़ा। सचमुच हम हृदय से उनके ऋणी हैं। जज साहब के इस ऐतिहासिक फैसले को जब उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई तो वहां भी उनके इस फैसले को सर्वथा उचित ठहराया गया और उसका अनुमोदन किया गया।

बदायूँ से जज साहब का स्थानान्तरण रामपुर में हुआ। दो वर्ष बाद ही उनके पिताजी के पैर की हड्डी टूट गयी अत: उन्हें लखनऊ मेडिकल कालेज में भर्ती कराना पड़ा। जज साहब ने इस समय में एक माह का अवकाश लिया। गाँव से मुझे भी बुला लिया गया। हम दोनों भाई मेडिकल कालेज में ही रहे। जज साहब की पितृ-भक्ति वस्तुत: अनुकरणीय है। वे अपनी पूर्ण लगन से पिताजी की सेवा कर रहे थे। आधी रात तक वे स्वयं जागते थे और फिर मैं जागता था। अपने पिता का अनुसरण करते हुए बड़ा पुत्र भी ४० दिन की छुट्टी लेकर अपने दादा जी की सेवा में जा पहुँचा। वृद्धावस्था तो अपने आप में ही एक बड़ी बिमारी है तिस पर हड्डी टूट जाना और भी कष्टकारी है। लेटे-लेटे पिताजी को अन्य बिमारियां भी होने लगी। पेशाब भी बन्द हो गया जिससे तबियत और भी बिगड़ गयी। लखनऊ मेडिकल कालेज से उन्हें दिल्ली में आल इण्डिया मेडिकल इंस्टीच्यूट के लिए रेफर कर दिया गया। जज साहब ने पुन: एक माह की और छुट्टी ली। बड़े भाई रणवीर सिंह जो तब तक कस्टम कलेक्टर के पद से अवकाश प्राप्त कर चुके थे, वे भी वहीं पहुँच गये। हमने पिताजी की बराबर में ही अपना बिस्तर लगा रखा था। जब पिताजी किसी को भी आवाज लगाते थे तो महावीर सिंह झट से उठ जाते थे। करीब दो महीने लगे। अनेक दिक्कतें आई। काफी कष्ट हुआ। लेकिन जिसे संघर्ष में भी उत्कर्ष ढूंढ़ने का अभ्यास हो उसे आगे बढ़ने से कोई कष्ट भला क्या रोक सकता है। ऐसे विकट समय में भी जस्टिस महावीर ने कलम को रूकने नहीं दिया। उन्होंने वहीं रहते-रहते भारतीय दण्ड संहिता पर पुस्तक लिख डाली। रामपुर में अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए उन्होंने अनेक अपराधियों को आजीवन कारावास की सजा दी। इसके उपरान्त उन्होंने लखनऊ में हाईकोर्ट के जज का पद ग्रहण किया। छोटे पुत्र ने इनकी पसन्द के अनुसार आई.एफ.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण कर 'अ' श्रेणी का पद प्राप्त किया। बड़ा पुत्र भी कैप्टन से कर्नल बन गया। पुत्र-पुत्रियों का विवाह भी हो गया था। चारों ओर हर्षोल्लास का वातावरण था। वे जहाँ रहते थे, समस्त परिचित, रिश्तेदार और आस-पास के निवासी उनके पास परामर्श के लिए आते रहते थे। वे अत्यन्त व्यवहार-कुशल थे किन्तु किसी की सिफारिश इत्यादि नहीं

करते थे। इसी कारण कुछ परिचित तो उनसे नाराज भी हो गये थे। यहां तक कि आना-जाना भी बन्द कर दिया था, लेकिन विनम्रता की प्रतिमूर्ति जज साहब स्वयं उनके यहां चले जाया करते थे। जज साहब ने चपरासियों से सभी घरेलू कार्य नहीं कराया। गाँव से हमेशा सम्पर्क बनाये रखते थे। वे पशुओं का चारा-पानी स्वयं करते थे। यहां तक कि चारा मशीन भी स्वयं ही चलाते थे। इस कार्य में उनकी पत्नी भी भरपूर सहयोग करती थी। लखनऊ में रहते-रहते उन्होंने मेरे पुत्र के पैरों का इलाज भी कराया। इस कार्य में उन्होंने बड़ी भाग-दौड़ की। उस समय मेरी माँ भी वहीं रही। वे तो बस हमेशा जज साहब की चर्चा ही करती रहती थी। जज साहब ने माँ को जो सम्मान दिया, वह वस्तुत: उनके सदाचार की मिसाल है। सन् १९८२ में जज साहब ने सेवा से अवकाश प्राप्त कर लिया और नोएडा में सैक्टर १४ में आकर रहने लगे। जज साहब के श्वसुर रामपुर से ही उनके साथ में रहने लगे थे। उनकी केवल एक ही पुत्री थी, पुत्र नहीं था। लेकिन जज साहब ने धर्म-पुत्र होकर पुत्र के समस्त दायित्वों को प्यार और विनम्रता से निभाया। नोएडा में उनके साथ उनकी धर्मपत्नी, पिताजी, श्वसुर, मैं और एक नौकर रहते थे। छोटा लड़का, जो विदेश विभाग में था, दिल्ली में ही रहता था। अवकाश प्राप्त कर लेने पर निठल्ले होकर बैठना उन्हें स्वीकार्य नहीं हो सकता था। नोएडा में आने के दो माह बाद ही उन्होंने सुप्रीम कोर्ट में वकालत शुरु कर दी। मैंने उन्हें टोकते हुए कहा भी कि "भाई साहब ! आपने तो फिर से वही मामला कर दिया।" उन्होंने बड़े सरल स्वभाव से मुझे समझाते हुए बताया कि भाई जिस दिन मैं रिटायर हुआ तो मेरे पास कुल ५००० रुपये थे। अब तुम्हीं बताओ कि काम कैसे चलेगा। अभी फण्ड भी नहीं मिला। पेंशन मिलने में भी देरी लगेगी।

उनकी विद्वत्ता का लोहा सभी मानते थे। शीघ्र ही वकालत अच्छी चलने लगी। लेकिन अभी एक वर्ष भी पूरा नहीं हुआ था कि उनके श्वसुर का निधन हो गया। कुछ ही समय बाद उनकी धर्मपत्नी श्रीमती होशियारी देवी अचानक बीमार हो गयी। उन्हें पक्षाघात हो गया। ऐसे समय में क्या किया जाये, कोई रास्ता सूझ नहीं रहा था। पहले एक्यूपंक्चर पद्धति से चिकित्सा की गयी किन्तु कोई लाभ होता दिखाई नहीं दिया। उस समय में पत्नी भी वहीं रहती थी। बड़े पुत्र को खबर की गयी तो वे तुरन्त छुट्टी लेकर आ गये। उनके आते ही उनको मिल्ट्री हास्पीटल में भर्ती कराया गया। छोटी पुत्री ने अस्पताल में रहकर माँ कि बड़ी सेवा-सुश्रुषा की। एक महीने के इलाज के बाद भी उनकी स्थिति में सुधार नहीं हुआ और उनका स्वर्गवास हो गया। तब तो मानो कष्ट का पहाड़ ही टूट पड़ा। निश्चित ही जज साहब को कष्टों के इस झंझावात ने झकझोर कर रख

दिया। किन्तु जज साहब धैर्य की सजीव मूर्ति थे। वे स्वयं को संवारते और दूसरों को धीरज बंधाते थे। ऐसे समय में ही छोटे पुत्र का स्थानान्तरण इंग्लैण्ड में हो गया। इसके छः माह उपरान्त ही पिताजी भी चल बसे। वे उस समय १०२ वर्ष के थे। वे अपने समय के कट्टर आर्य समाजी थे। जज साहब उनकी देख-रेख स्वयं किया करते थे। छोटी पुत्री की अभी शादी नहीं हुई थी। जज साहब ने उसकी शादी गुड़गांव में कर दी। बस घर सूना-सूना सा हो गया। तब बड़ा पुत्र नौकरी छोड़कर अपने पिता जी की सेवा में आ गया। एक दिन जज साहब ने बताया कि मुझे न्यूजीलैण्ड से एक प्रस्ताव आया है। वहां की एक कम्पनी ने सलाहकार के रूप में २०००० रुपये प्रतिमाह देना स्वीकार किया है लेकिन मैंने मना कर दी। जब मैंने इसका कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि २० हजार रुपये के लिए मैं अपने देश को नहीं छोड़ सकता। वे लोकदल आज इण्डिया के कानूनी सलाहकार और फिर अध्यक्ष मनोनीत किये गये। उन्हें सूरजमल इंस्टीच्यूट का उपाध्यक्ष बनाया गया। वहां वे प्रकाशन कार्य के अन्तर्गत सम्पादकीय लिखा करते थे। वे नेफेड, आल इण्डिया जाट महासभा तथा सर्व खाप पंचायत के अध्यक्ष रहे। उन्हें भारतीय किसान यूनियन में ससम्मान आमंत्रित किया गया जिसमें उन्होंने कई उल्लेखनीय कार्य किये। उनके प्रयासों से संगठन में अपूर्व शक्ति का संचार हुआ। फलस्वरूप उन्हें कार्यकारिणी का अध्यक्ष बना दिया गया। इसके पश्चात उन्होंने राजनीति में सक्रिय योगदान किया। चौ. अजीत सिंह ने उन्हें अपनी पार्टी से रामपुर के लिए टिकट दिया। भारी जुलूस के साथ पर्चा भरा गया लेकिन भारतीय जनता पार्टी से समझौता हो जाने के कारण उनको वहाँ से बुला लिया गया। यह एक राजनैतिक भूल थी, यद्यपि इसमें उनका कोई कसूर नहीं था। इसी भूल के कारण वे कैराना विधान सभा में निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में सफल नहीं हो पाये। इसके पश्चात वे भारतीय जनता पार्टी में शामिल हो गये। उनका पार्टी में गर्मजोशी से स्वागत किया गया और पश्चिमी उत्तर प्रदेश का अध्यक्ष मनोनीत किया गया। इस समय तक वे राजनीति में भी काफी उभर चुके थे। इन सब क्रिया-कलापों के चलते-चलते वे अपनी धर्मपत्नी की स्मृति में भारत का संविधान लिखते रहे। इसी दौरान चुनाव भी हुए। जिसमें उन्होंने पार्टी के लिए अथक प्रयास किये। इस समय तक उन्होंने अपना आवास बना लिया था और अब मकान नं० १९ए के बजाए ७६ ए में रहने लगे थे। मैं हमेशा उनके साथ ही रहा। उन्हें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का परिद्रष्टा बनाया गया। आर्यो की सर्वोच्च सभा 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के कार्यो में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान किया। वे इस सभा के अध्यक्ष मनोनित किये गये।

जज साहब ने लेखन कार्य अनवरत जारी रखा। वे अधिकांश लेखन

हिन्दी में करते थे। उन्होंने अलीगढ़ में रहते हुए चकबन्दी अधिनियम पर तथा शाहजहाँपुर में न्याय पंचायत पर लेखन कार्य किया। रामपुर में रहते समय दण्ड संहिता प्रक्रिया पर लिखा तथा लखनऊ में सहकारिता अधिनियम १९५६ पर विशद् विवेचन किया। नोएडा में भारत का संविधान पर पुस्तक लिखी। उल्लेखनीय लेखन कार्य के लिए उन्हें तीन बार अधिकार-शुल्क (रायल्टी) क्रमशः दस हजार, पांच हजार और पन्द्रह हजार रुपये भी प्राप्त हुए।

महापुरुषों को चारित्रिक उपलब्धियों के लिए सम्मानसूचक उपाधियों से विभूषित करना आर्य संस्कृति की परम्परा रही है। गुणीजनों के गुणों के समादर करने से समाज में गुणों की प्रस्थापना एवं वृद्धि होती है। इन्हीं कारणों से जज साहब को मदन मोहन मालवीय मानक उपाधि तथा शाहजहाँ मानक उपाधि से विभूषित किया गया।

जो अपने उत्तम आचरणों से माता-पिता को तृप्त कर दे वास्तव में पुत्र कहलाने का अधिकारी वही है। सदाचार के धनी जस्टिस साहब ने अपने माता पिता की काफी सेवा की। लोग जस्टिस साहब को श्रवण कुमार पुकारते थे।

वे अपने सुचरित्र से न केवल माता पिता अपितु समस्त देश को तृप्त करना चाहते थे। त्याग सबसे कठिन कार्य है। परन्तु कुछ भाग्यशाली इस संसार की वस्तुओं को जीते जी त्याग देते हैं। वे महान हैं, बहुत महान। हम उन्हें नमन करते हैं।

जहाँ लोगों को बड़ी-बड़ी कोठियाँ, कई-कई कारें, कई-कई नौकर-चाकर, एयरकन्डीशनर में रहना देखने को मिलता है, वहाँ जज साहब का उदाहरण दृष्टव्य है। मैं किसी की आलोचना करना नहीं चाहता किन्तु तुलनात्मक टिप्पणी के लिए समान श्रेणी के लोगों को दृष्टिगत रखना वांछित हैं, जज साहब के अनुसार जीवन निर्वाह के लिए सर पर छत अवश्य ही चाहिए। उनके पास उनकी श्रेणी के लोगों की भांति कोई बड़ा बंगला नहीं था अपितु मात्र तीन कमरों का एक आवास था। वे जब तक डिस्ट्रिक्ट जज रहे, तब तक साईकिल पर ही कचहरी जाया-आया करते थे। बदायूँ के एक केस में एक बार उन्हें प्रचुर धन का लालच दिया गया जिसको उन्होंने कठोरता से ठोकर मार दी। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने उन्हें जनरल एडवोकेट, सुप्रीम कोर्ट बनाने के लिए आमंत्रित किया लेकिन उन्होंने यह कहकर इन्कार कर दिया कि इस पर अनेक प्रकार के दबाव कायम करके प्रायः गलत कार्य कराये जाते हैं और मैं किसी दबाव में नहीं रहूँगा। कैप्टन सतीश शर्मा जो पेट्रोल एवं गैस मन्त्री थे, उन्होंने अपने विभाग

में चेयरमैन के पद पर नियुक्त करने के लिए जज साहब को प्रस्ताव भेजा। लेकिन जब मन्त्री महोदय ने कमीशन की बात की तो जज साहब ने दृढ़ता से उसका विरोध किया और प्रस्ताव को अस्वीकारन कर दिया। रिटायर होने के बाद घासीपुर गाँव के एक कत्ल के केस का फैसला जज साहब को सौंप दिया गया। फैसला हो जाने के बाद विजयी पक्ष ने जज साहब से कुछ धन देने की इच्छा व्यक्त की। जज साहब ने कहा कि धन मुझे नहीं चाहिये। यदि आप खुशी में कुछ करना चाहते हैं तो किसी स्कूल को दान दे दो। उन्होंने जज साहब की आज्ञा को शिरोधार्य करके एलम में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (आई.टी.आई.) को २० हजार रुपये दान में दे दिये। जज साहब इस प्रकार के प्रलोभनों में कभी नहीं आये और उन्हें मिट्टी समझ कर त्यागते रहे।

विद्वान् लोग तप के दो अर्थ करते हैं- तपो द्वन्द्वसहनम् तथा धर्मरावर्तेतं तप:। अर्थात् हानि-लाभ, सदी-गर्मी, भूख-प्यास, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों का सहना तथा अनेक कष्ट सहकर भी धर्म के मार्ग को न छोड़ना तप कहलाता है। कुछ लोग जंगलों में रहकर शीत-तापादि को सहते हैं। वे भी प्रशंसा के पात्र हैं। किन्तु जंगल में जन समुदाय से दूर रहने के कारण वे प्राय: जनता की श्रद्धा को ही जान पाते हैं। परीक्षा तो तभी होती है जबकि कभी लोग अश्रद्धा दिखाएं जैसे गाली दें, धूल फैंके इत्यादि और तब भी तपस्वी विचलित न हो। किसी ने अपने अन्तर्मन पर कितना वशीकरण किया है, यह तो तभी पता चल सकता है, जबकि उनसे कोई असभ्य व्यवहार करे। जहाँ तक शारीरिक तप की बात है, कितनी भी सर्दी या गर्मी हो, लोगों ने महावीर सिंह जी कभी कम्बल या शाल ओढ़े हुए नहीं देखा। गर्मी में जबकि लू चलती हुई हो, वे भरी दोपहरी में १२-१ बजे पैदल चल लेते थे। वे छाता भी नहीं रखते थे, चाहे बरसात ही क्यों न हो। प्रात: तीन से चार बजे के बीच स्नान कर लेते थे। प्राय: बस द्वारा सफलर करते थे। बिजली चले जाने पर भी उनके कार्य रुकते नहीं थे। बिजली के पंखे, कूलर आदि का प्रयोग बहुत कम करते थे। जब यूनिवर्सिटी में पढ़ते थे तो विद्यार्थी तथा प्रोफेसर भी उन्हें ब्रह्मचारी कहकर पुकारते थे। वे सोते भी बहुत कम थे। पांच-पांच छ:-छ: घण्टे तक लिखते रहते थे। लिखते-लिखते बीच-बीच में १५-२० मिनट के लिए सो लिया करते थे। वे प्राय: हर वक्त कार्य करते रहते थे। विश्राम का कहीं स्थान था ही नहीं। नित्यप्रति योगासन तथा प्राणायाम किया करते थे। निन्दा, अपमान, मिथ्यारोप, विपुल धन-सम्पदा का लोभ, ये सब उन्हें धर्म मार्ग से विचलित न कर सके। कौन करे इतना तप ? "इदं धर्माय इदन्नमम" कहकर आत्म बलिदान देने वाले संसार में कितने मिलेंगे। शारीरिक तप को देखो या धर्मपालन कष्ट सहकर भी धर्म में अडिग रहना दोनों में जस्टिस महावीर सिंह

उच्च कोटि के महापुरुष मिलते हैं।

जस्टिस महावीर उच्च कोटि के समाज सुधारक भी थे। उन्होंने समाज सुधार के अनेक प्रशंसनीय कार्य किये। वे विवाहादि में दहेज न देने की सहमति देते थे। अगर उन्हें कोई शादी में आमंत्रित करता था तो वे यह कहा करते थे कि अगर आपने बिना दहेज के शादी तय की है तो मैं आऊँगा अन्यथा नहीं। और इसमें वे सफल भी हुए। इन्होंने इस सिद्धान्त का स्वयं भी पालन किया। अपने पुत्रों की शादी में न तो दहेज लिया और न ही पुत्रियों की शादी में दहेज दिया। जिस किसी भी शादी में जाते तो सामर्थ्यानुसार विद्या-दान अवश्य कर जाया करते थे। उन्होंने दहेज के विषय में ग्राम सौरम, जिला मुजफ्फरनगर में सन् १९५२ में एक पंचायत का उत्कृष्ट आयोजन किया गया। इस पंचायत में अनेक जज भी शामिल हुए। उनकी प्रेरणा से ग्राम एलम में इण्टर कालेज की स्थापना मं महाराजा सूरजमल ने काफी योगदान दिया। गाँव हो या शहर, उन्होंने अनेक मुकदमों का फैसला परस्पर वार्तालाप और मिल-बैठकर ही सम्पन्न करा दिया। इस प्रकार के फैसलों में घासीपुर वालों का केस, हरियाणा में प्रियव्रत-केस तथा रामपुर में महाशय समेसिंह केस इत्यादि उल्लेखनीय हैं। जस्टिस साहब किसी की मृत्यु के बाद मिठाई, लड्डू आदि बांटने के सख्त खिलाफ थे। यदि उन्हें ऐसी किसी जगह बुलाया जाता था तो वे कहते थे कि यदि मिठाई और लड्डू बनाये गये तो मैं नहीं आऊँगा और इस बारे में अपना लिखित विरोध भी ज्ञापित करते थे। इस सिद्धान्त का पालन करते हुए उन्होंने अपने पिताजी के मृत्यु पर भी साधारण भोजन ही बनवाया। बहन की मृत्यु होने पर लड्डू आदि बने हुए थे। उन्होंने भोजन नहीं किया और नाराज होकर चले गये। समाज सुधार की श्रृंखला में वे महिलाओं के लिए आई.टी.आई. गाँव में ही अपना मकान देकर अपने खर्चे से चला रहे थे जो बाद में उनके पुत्र यथावत् चला रहे हैं। वे बहुत जोर देकर कहते थे कि "परनिन्दा से बचो। समाज के दोषों का ढोल बजाकर तथा व्यक्तियों पर कीचड़ उछाल कर हम समाज में गन्दगी ही फैलाते हैं। इससे किसी का सुध ार नहीं होता। यदि समाज में सुधार करना चाहते हैं तो पहले आत्म-सुधार प्रारम्भ करें। आत्म-सुधार करना मानव वृक्ष को सींचना है। नीतिज्ञ, वेदज्ञ, शास्त्रज्ञ और ब्रह्मज्ञ होना सुलभ है। किन्तु अपने अज्ञान को जानने वाले तथा स्वदोष दर्शन करने वाले बिरले ही होते हैं। अपनी सच्चरित्रता का उदाहरण प्रस्तुत करना ही जन-सुधार का श्रेष्ठ उपाय है। स्वयं अपने लिए अथवा किसी अन्य के लिए क्रोध अथवा भय दिखाकर दूसरों को पीड़ा पहुँचाने वाला असत्य वचन हमें न तो स्वयं बोलना चाहिए और न ही दूसरों से बुलवाना चाहिये। निन्दा के पृष्ठ में द्वेष तथा स्वस्थ समालोचना के पृष्ठ में हित भावना होती है।"

जीवन में विविध कार्यों के सम्पादन के लिए विविध प्रकार की शक्तियों के उपचय की आवश्यकता होती है। किन्तु उनके उपयोग का कोई सुदूर संस्थित उद्देश्य भी होना चाहिए। दुष्ट प्रकृति के लोग पर-पीड़न ही में सुख का अनुभव करते हैं तथा सत्पुरुष अपनी पूरी शक्तियों को जुटाकर परहित करने में अपने जीवन की सार्थकता मानते हैं।

समाज व्यवस्था के हित में दण्ड के द्वारा दमन की आवश्यकता होती है और एतदर्थ शक्ति का उपयोग करना एक कर्तव्य हो जाता है। सत्ता की प्रतिष्ठा के संदर्भ में दण्ड और कोप के प्रदर्शन का विशेष महत्व है। जस्टिस महावीर सिंह इस पर अधिक बल देते थे। उनके अनुसार कोप और क्षमा का सन्तुलन तराजू के दो पलड़ों की भांति ठीक रहना चाहिए क्योंकि व्यवहारिक जगत में किसी एक का भी अतिरेकत होना समाज-हित की घोर हानि कर सकता है। इसका उदाहरण हमें बदायूँ के एक कत्ल के केस में देखने को मिलता हैं। जिसमें उन्होंने फांसी की सजा दी थी। उनके इस निर्णय को हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों ने भी न केवल माना अपितु उसकी प्रशंसा भी की। इस केस में उन्हें बड़ी धमकियाँ दी गई, धन का लालच इत्यादि तरह-तरह के प्रयोग किये गये किन्तु इस विषम स्थिति में भी उन्होंने धर्म-मार्ग से पलायन नहीं किया बल्कि डटकर मुकाबला किया।

जीना भी एक कला है। कुछ लोग सब कुछ होने पर भी रोते हैं तथा कुछ लोग कमी होने पर भी हँसते रहते हैं। श्री महावीर सिंह जीने की कला जानते थे। वे विचित्र थे। पराई आग में जलना प्रभु ने उन्हें न जाने कैसे सिखा दिया था। वे अपने दु:खों में हंसते थे तथा पराये दु:खों में रोते थे। एक बार किसी काम से हमें रुड़की होते हुए सहारनपुर जाना था। रास्ते में सहारनपुर से कुछ पहले कार में पानी डालना पड़ा। जस्टिस साहब खुद कार चला रहे थे। मैं एक नल से पानी लेने गया तो एक बूढ़ी महिला अपनी पुत्रवधू, जो कि कष्ट से कराह रही थी, के साथ बैठी बस का इन्तजार कर रही थी। मैंने उनकी हालत देखकर पूछा कि क्या बात है ? तुम्हें क्या कष्ट है ? बूढ़ी महिला ने बताया कि बेटा बहू की तबियत खराब है और हमें अस्पताल जाना है। मैंने जज साहब से सब कुछ बताया तो उन्होंने कहा कि उन्हें तुरन्त बुला लाओ। हमने उन्हें गाड़ी में बैठा लिया। करीब ५ मील ही चले होंगे कि वृद्धा ने कहा कि कार रोको और हमें उतार दो। पूछने पर वृद्धा बोली कि बेटा हमारी बहू को बच्चा हुआ है। महिला अत्यधिक भयाकुल सी थी। गाड़ी रोकी गई। जज साहब दूर जाकर खड़े हो गये ताकि महिला स्थिति को सँवार सके और मुझे उनके पास भेज दिया।

साथ ही ये भी कहा कि ये बिल्कुल परेशान न हों, हम इन्हें आराम से अस्पताल पहुँचायेंगे। कुछ समय बाद हम उन्हें लेकर अस्पताल पहुँचे और भर्ती कराया। इसके उपरान्त गाड़ी की सफाई इत्यादि भी करवाई। इस कार्य में काफी समय लग गया था। वहाँ से चलते समय जज साहब मुझसे बोले की यहां से जाकर ये बात किसी को मत कहना।

एक बार एक लड़के का चाबियों का गुच्छा गहरे जल में गिर गया। वह रोने लगा। जज साहब ने उसे देखा तो बोले कि रोओ मत, चाबी का गुच्छा मैं अभी निकाल देता हूँ। जज साहब ने कहा कि जब मैं रस्सी हिलाऊँगा तो तुम मुझे ऊपर खींच लेना। इतना कहकर वे रस्सी के सहारे जल में उतर गये। उन्होंने चाबी उठा ली और रस्सी हिलायी तो उस लड़के ने रस्सी छोड़ दी। तब तो बड़ी मशक्कत के बाद जज साहब स्वयं बाहर आ पाये। वे लगभग मूर्छित हो गये थे। होश आते ही उन्होंने उस छात्र को दण्ड-स्वरूप एक चांटा मारा।

जब वे जिला जज थे तो एक बार रेल में यात्रा करने के लिए स्टेशन पर खड़े थे तो गाड़ी चल दी। एक यात्री का सामान स्टेशन पर छूट गया था, जज साहब उसकी सहायता में लग गये और उसका सारा सामान रेल में चढ़वा दिया। इस कारण वे स्वयं रेल में ठीक से चढ़ नहीं पाये और ऐसी खिड़की पर लटक गये जिसका दरवाजा बन्द था। पूरा सफर पायदान पर ही करना पड़ा। ऐसी अनेक घटनाएँ उनके जीवन से जुड़ी थी। मैं उन्हें जितना देखता गया, वे उतने ही ऊँचे पाते गये।

कितना व्यस्त था उनका जीवन। रात्रि में तीन बजे उठकर टहलना, ईश्वर की आराधना, लेखन, मुकदमों की सुनवाई करना, फैसले सुनाना, शाम को खेलना। टेनिस अच्छा खेलते थे। वे एक कुशल तैराक भी थे। तैराकी में उन्होंने पुरस्कार भी प्राप्त किये थे। समझ नहीं आता कि वे इतने कार्यों के लिए समय कहां से लाते होंगे। साधारण व्यक्ति झंझटों से झुंझलाता रहता है, रक्तचाप तक बढ़ जाता है। और एक जस्टिस महावीर थे कि इतनी व्यस्त दिनचर्या के चलते कभी अधीर नहीं होते थे। सुबह-शाम उनके परिचित व मित्रादि सलाह आदि लेने के लिए उन्हें घेरे रखते थे। वे किसी को निराश नहीं करते थे। वो ऐसे स्रोत थे जिसके किनारे से कोई भी पिपासु प्यास-मुक्त होकर ही वापस लौटता था। व्यस्त जीवन था किन्तु मुख-चन्द्र पर हमेशा प्रफूल्लित हास्यपूर्ण छटा विराजमान रहती थी। एक दिन सुबह के समय वे घर पर ही टहल रहे थे। शनिवार का दिन था। एक व्यक्ति गेट पर आकर खड़ा हो गया। जज साहब टहलते-टहलते उसके पास जा पहुँचे और पूछा कि क्या काम है ? वह

व्यक्ति बोला कि मैं शनिचर उतारने आया हूँ, कुछ दान-दक्षिणा दो। जज साहब बोले कि पहले अपना शनिचर उतार लो और फिर अन्दर आकर हंसने लगे तथा गंभीर होकर बोले कि वाह रे भारत देश ! तेरी ये दशा ! उनका साा जीवन ही जीवन-कला का साक्षात् दर्शन है। उपरोक्त कथाएँ तो उसका संकेत-मात्र हैं।

जस्टिस महावीर सिंह आर्य के धुरन्धर विद्वान् थे और स्वामी दयानन्द के परम भक्त थे। वे समय-समय पर स्वामी जी के उद्धरण दिया करते थे और उनसे रोजमर्रा की समस्याओं का समाधान खोज लिया करते थे। आर्य समाज, दिल्ली ने जस्टिस साहब का ७६वाँ जन्मदिन बड़ी धूम-धाम से मनाया जिसमें आर्य समाज के उच्च कोटि के विद्वानों ने भाग लिया। ये सब कार्यक्रम गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति डा. धर्मपाल के देख-रेख में सम्पन्न हुए। जन्म दिन का कार्यक्रम ग्राम एलम में भी आयोजित किया गया। जज साहब आर्य समाज के प्राय: सभी जलसों में जाते थे। उन्होंने मुझे बताया कि जब वे हाईस्कूल में थे तो सत्यार्थ प्रकाश खूब पढ़ते थे। उसी समय योगासन, प्राणायामादि भी थोड़ा-थोड़ा सीख लिया था। उनका कहना था कि "इससे मुझे बहुत लाभ हुआ। आज तक के मेरे जीवन में यही शक्ति कार्य करती रही। ये सब कुछ मुझे पिताजी से प्राप्त हुआ क्योंकि पिताजी आर्य समाज के समर्थक थे और उसी के सिद्धान्तों का पालन करते थे। मुझ पर पिताजी की दिनचर्या का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जब मैं मुन्सिफ बना तो एक बार मैंने योगी बनने की सोची थी। एक बहुत बड़े योगी से भी मिला। मुझे उनका नाम पता नहीं था। लेकिन कुछ तो योगी जी ने ही इन्कार-सा कर दिया और कुछ परिस्थितियों के चलते योगी न बन सका।" पिताजी आर्यसमाज में अंशदान आदि भी करते रहते थे। समय-समय पर स्वामी विन्ध्यानन्द विदेह को भी आमंत्रित करते रहते थे। प्राय: घर पर आर्य समाज की ओर से पत्र जैसे आर्य मर्यादा, आर्य मित्र, आर्य परोपकार आदि आते रहते थे। एक बार जज साहब एक पार्टी में गये। वहाँ गोश्त भी बना हुआ। जज साहब ने वहाँ कुछ नहीं खाया और लौट आये। तत्पश्चात उन्होंने पत्र द्वारा पार्टी आयोजकों को घनी फ़टकार लगाई। जज साहब दिन में एक ही बार भोजन करते थे। वे अल्पाहारी थे तथा भोजन में मट्ठा, दही, सब्जी, दूध और घी से बनी चीजें बहुत पसन्त करते थे। वे सोमवार, अमावस्या तथा पूर्णिमा का उपवास रखते थे। उपवास के दिन बिल्कुल कुछ नहीं खाते थे। वर्ष में नौ दिन तक केवल पानी के सहारे ही रहते थे। सभी के सुख-दुख में सहभागी होते थे। शायद ही ऐसा कोई राज्य हो जहां उनका कोई परिचित न हो।

श्रेष्ठ महावीर सिंह जी कभी भी अपने द्वारा किये गये कार्यों का बखान

नहीं करते थे बल्कि अन्य जनों द्वारा प्रशंसा किये जाने पर संकोच का ही अनुभव करते थे। उनके व्यवहार सौष्ठव का रहस्य उनके स्वभाव के माधुर्य में निहित था। महावीर सिंह शीलसिंधु, सोमदर्शन थे। उनका स्वभाव सभी को सुख देता था। विरोधी भी उनकी प्रशंसा करते थे। उनका बोलना, विनयपूर्वक मिलना सभी का मन हर लेता था। वे जब बोलते थे तो उनके मुखारबिन्द से अमृत स्रवित होता था। जब किसी से मिलते थे तो उनके सौख्य सौन्दर्य और माधुर्य से सभी मुग्ध हो जाते थे। सभी लोग उनके विनयी व्यवहार के वशीभूत थे। जब वे कहीं जाते थे तो वहां सभी लोगों से मिलते थे। श्री महावीर सिंह स्वयं न्यायाधीश थे किन्तु उनके न्याय का सौन्दर्य उनकी निरभिमानता एवं विनयशीलता में सन्निहित था।

जस्टिस महावीर सिंह को हिन्दी बहुत प्रिय थी। वे सब कार्य हिन्दी में ही करते थे। अपने निर्णय भी हिन्दी में लिखते थे। उन्होंने कई पुस्तकें लिखी जैसे ग्राम न्याय पंचायत, चकबन्दी अधिनियम, भारतीय दण्ड संहिता, सहकारिता अधि ानियम, भारत का संविधान इत्यादि। उन्होंने अपनी ही प्रेस लगाकर पत्रिका के माध्यम से सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों का हिन्दी अनुवाद का कार्य किया। इस हेतु उन्होंने एक समति गठित की थी जो इस कार्य में सहयोग कर रही थी। डा. मोती बाबू, जिला जज के सहयोग से उन्होंने एक कानून पत्रिका 'इलाहाबाद दण्ड निर्णय' भी निकाली। वे प्रायः हिन्दी के अखबार लिया करते थे। उनके कार्यालय में कानून की पुस्तकों के अतिरिक्त आर्य ग्रन्थों का सारा साहित्य उपलब्ध था।

यह निर्विवाद है कि उच्च नैतिकता के अभाव में लोकतन्त्र के आधारभूत गुणों जैसे समानता, स्वतन्त्रता, बन्धुत्व और परस्पर सहयोग का उदय कदापि नहीं हो सकता। राजनैतिक साम्यवाद समाज को भौतिक स्तर पर ऊँचा उठाना चाहता है किन्तु व्यक्ति की मानो उपेक्षा ही करता है। क्योंकि उसके साम्य-सिद्धान्त भले ही कुछ भी हों लेकिन व्यावहारिक धरातल पर व्यक्ति समाज के लिए ही होता है। रिटायर होने के कुछ समय बाद जज साहब राजनीति में आये। पहले लोकदल में लीगल एडवाईजर बने लेकिन वहाँ उपेक्षा होने से कांग्रेस में गये और फिर भारतीय जनता पार्टी में राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य बने। चुनाव के दौरान वे दिन में काफी भागदौड़ में रहते थे। मिलने वालों का तांता लगा रहता था। रात्रि में लेखन कार्य करते थे। इसी दौरान उन्होंने एक दिन आपने आफिस में लेखन कार्य करते-करते मुझे दो पन्ने पढ़ने को दिये। उस वक्त मैं उनके आफिस में ही बैठा पढ़ रहा था। मैंने उन पन्नों को पढ़ा। उनमें स्वामी दयानन्द की मृतयु के सम्बन्ध में लिखा था। हम इसी विषय पर चर्चा करने लगे। उसमें

संख्या, सीसा, पारा आदि का वर्णन था। जज साहब को उस समय अतिश्रम के कारण बुखार सा रहने लगा था। मैंने कहा कि भाई साहब आप चुनाव में कहीं-कहीं घूमते हैं। कहीं-कहीं खाना भी पड़ जाता है। यदि कोई आपको खाने में कुद मिलाकर दे दे तो ? वे चुप हो गये, कुछ नहीं बोले। वैसे प्राय: घर से चलते समय उनकी पुत्रवधू उनके साथ पानी और खाने का सामान इत्यादि गाड़ी में रख देती थी। तीन-चार दिन बाद ही उन्हें एक सूचना मिली कि गाजियाबाद में संविधान के ऊपर भाषण देना है। उन्होंने दवाई ली और गाजियाबाद चले गये। उन्होंने वहां एक घण्टा भाषण दिया। आने-जाने का प्रबन्ध बालेश्वर त्यागी, जो मन्त्री भी हैं, ने किया था। जज साहब रात्रि में वापस आये और सो गये। सुबह उनके पैर में काफी दर्द होने लगा। डाक्टर को बुलाया गया। डाक्टर के कहने पर अस्पताल में भर्ती करा दिया गया। छ: दिन तक जांच होती रही। जांच के बाद पता चला कि कैंसर है। उनको बड़े पुत्र और पुत्रवधू बम्बई स्थित टाटा हास्पीटल में ले गये। वहाँ कोई लाभ न होता देख उन्हें वापिस ले आये। उनकी हालत बिगड़ती जा रही थी। उनके बिमार होने की खबर तेजी से फैलने लगी। अस्वस्थता की खबर सुनकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० धर्मपाल जी उनसे मिलने आये। उन्हें जब जज साहब की बिमारी के बारे में पता चला तो अत्यधिक दु:खी और चिन्तित हुए। छ: सात दिन बाद प्रो. शेर सिंह जी भी आये। प्रो. शेर सिंह जी ने गुरुकुल झज्झर में स्वामी ओमानन्द को यह खबर दी। वे तुरन्त जज साहब को देखने के लिए मकान पर पहुँचे। उन्होंने उन्हें अपनी औषधी दी। जिससे एक-दो दिन बाद ही आराम होने लगा। ५ महीने दवा खायी। इस अवधि में तबियत में काफी सुधार हुआ। लेकिन मर्ज फिर से बढ़ने लगा। मिलने वालों को तांता लगा रहता था। दूर-दूर से लोग उनसे मिलने के लिए आने लगे। इसी बीच एक दिन जज साहब स्वयं उठकर सुप्रीम कोर्ट पहुँच गये और वहां सबसे मिलकर आये। इसके पश्चात उनकी जांच-रिपोर्टश अमेरिका और बेल्जियम भेजी गयी। वहाँ भी हड्डी का कैंसर बताया गया और रेडियेशन से इलाज बताया गया। हालत ठीक नहीं हुई। यद्यपि दर्द कुछ कम जरूर था। छोटा पुत्र भी छुट्टी लेकर आ गया। सभी जज साहब की सेवा में लगे थे। जज साहब को कितना भी कष्ट था लेकिन चेहरे पर वही आभा विद्यमान थी। देखने में बीमार लगते ही नहीं थे। कुलपति जी किसी योगी को दिखाना चाह रहे थे। लेकिन समय नहीं मिला। होम्योपैथिक उपचार भी दिया गया किन्तु कोई लाभ नजर नहीं आ रहा था। धर्मशीला अस्पताल में रेडियेशन होता था। छोटी पुत्री तो हमेशा उनके साथ ही रहती थी। फिर एक दिन हालत खराब हो गयी। शाम को धर्मशीला अस्पताल में दाखिल किया गया। आक्सीजन लगायी गयी। रात्रि दो

बजे हालत में कुछ सुधार दिखाई दिया किन्तु सुबह हालत फिर खराब हो गयी। सुबह के नौ बजे थे। मैं और उनका बड़ा पुत्र उन्हीं के पास में थे। उनकी पौत्री दवाई आदि लाने में भागदौड़ में लगी थी। मैंने पूछा "तबियत कैसी है ?" वे "ठीक है! तुमने खाना खा लिया ?" मैंने कहा "जी हाँ और आपने ?" "मेरा उपवास है" उनका उत्तर था। अन्त में मृत्यु भिक्षुक बनकर आया और जज साहब से याचना करने लगी कि मुझे अपना पुराना चोला दे दो। जज साहब ने कभी किसी को रीते हाथ नहीं लौटाया तो मृत्यु को भी उसका मांगा दे दिया। वे मुस्काये और मुख पर अमिट आभा तैर आई। माँ की गोद में जाने पर बालक के चेहरे पर जो आभा होती है ऐसी ही शान्ति की अनुपम आभा जगत् माता की गोद में जाते समय जस्टिस महावीर सिंह के मुख पर छा गयी थी। मौत के आदेश को मानते हुए आज जस्टिस महावीर उस उन्नत पथ पर चल दिये जहां न सुख है न दुख। भिक्षुक को निर्मल चादर सौंपकर और कई बुझते दीपों को प्रज्वलित कर जस्टिस साहब जीवन-यात्रा को पूरी कर गये।

● ● ●

मुजफ्फरनगर की धरती के शलाका पुरुष-"जस्टिस महावीर सिंह"

-गजेन्द्र पाल

बहुत ऊँचे गये दैरो हरम को पूजने वाले,
मैं जहां था वहीं की खाक़ लेकर चूमली मैंने।

जनता वैदिक कालेज बड़ौत में अर्थशास्त्र प्रवक्ता के रूप में १९४४ से सेवा जीवन प्रारम्भ कर, १९४६ में मुंसिफ परीक्षा में चयनित होकर न्यायिक क्षेत्र में पदार्पण और समयबद्ध प्रोन्नतियों का सोपान चढ़ते हुए १९७७ में उच्च न्यायालय के दुर्लभ सम्मानित पद न्यायमूर्ति से सुशोभित होने वाले "न्यायमूर्ति महावीर सिंह" को गांव एलम की मिट्टी से माँ जैसा प्यार, लगाव सदैव रहा।

गुलाम भारत में न्याय की कुर्सी पर किसी हिन्दुस्तानी का बैठना क्या आसान बात थी ? १९४६ से एक लम्बा सफल कानून की राह क़ा आरम्भ हुआ। अपनी योग्यता एवं स्वच्छ छवि व लगन के कारण मुंसिफ से न्यायमूर्ति तक पहुँचने में किसी का सहारा, सिफारिश या कृपा नहीं, स्वत: शक्ति से यात्रा की। मुजफ्फरनगर जनपद के वे प्रथम व्यक्ति थे उच्च न्यायालय के जस्टिस पद से सम्मानित होने वाले, जनपद को गौरव प्रदान करने वाले।

लगभग प्रति वर्ष (जस्टिस बनने के बाद भी) वे कोर्ट के ग्रीष्मावकाश में १५-२० दिन के लिए सपरिवार एलम अवश्य आते थे। सम्बन्धी, मित्रगण, क्षेत्र के सभी वर्ग जाति के लोग मिलने आते। सबके साथ अति-आत्मीयता। किसी के साथ कोई दूरी नहीं, लाट साहबि नहीं। उनका आवास कुछ दिन के लिए "चौपाल" बना रहा। आत्मीयता से बातें, ऐसे करते मानो "बस जज साहब मेरें ही हों।"

गांव में खादी का कुर्ता पायजामा, सादी चप्पल सादगी से ही कंघा किए बाल, उन्नत माथा, मुखमण्डल पर स्थायी सौम्यता का भाव, नयनों में चिन्तन की गहराई, वाणी में विद्वत्ता और कभी कभी नि:संकोच हल्की मुस्कान। इस सम्पूर्ण व्यक्तित्व का नाम था- जस्टिस महावीर सिंह।

अपने गांव प्रवास में मिलने जुलने के अतिरिक्त एक योजना लेकर वे रहते थे। श्रमदान के द्वारा नीचे गलियारों का भराव, खडंजा लगवाना, गांव के प्राण पनघट का जीर्णोद्धार, प्राइमरी पाठशाला के विकास व रख-रखाव की व्यवस्था आदि ऐसे सार्वजनिक कार्य थे जिन्हें ग्रामवासियों के सहयोग व उत्साह से वे पूर्ण कराकर जाते। अपने सेवा काल में आप गाजियाबाद, बिजनौर, सहारनपुर, बदायूं, आगरा, कानपुर शाहजहांपुर, अलीगढ़, रामपुर, इलाहाबाद और लखनऊ में अपनी ईमानदारी, निष्पक्षता और सहृदयता की छाप छोड़ते चलते रहे-सबके बीच एलम की धरती एलम के गली कूचे अपने प्रियजन सदैव उन्हें अपने से जोड़े रखते। १९४५ में प्रथम सहकारी समिति की स्थापना एलम में की, जिसने १९४७ में लाभ दृष्टि से उ०प्र० में प्रथम स्थान पाया।

आप कठोर सिद्धान्त पालक, उदारमना सहयोगी प्रवृत्ति के अद्‌भुत व्यक्ति थे। जीवन में किसी की कभी सिफारिश की नहीं, किसी की मानी नहीं, फिर सहयोग कैसे हो ? एक रहस्यपूर्ण सच्चाई जो किसी साधना से, तपस्या से कम नहीं। सम्बन्धित व्यक्ति (कोई भी हो) को कहते "फाइल मुझे दे दो, मेरे साथ तीन घण्टे की यात्रा तक चलो।" रेल या बस में बैठ कर फाईल के पन्ने पन्ने का गहन अध्ययन करने लगते। तीन घण्टे बाद दिल्ली या सहारनपुर (जो भी गन्तव्य हो) पहुँच कर कहते "मैंने उन बिन्दुओं को छांट कर लिख दिया है, जिन पर तुम्हारा वकील बहस करे। भरोसा रखो तुम केस जीतोगे, अब वापस जाओ।" यह थी उनकी अनोखी कार्य शैली- समय और धन की बचत, सिद्धान्त की रक्षा भी और वांछित सहायता भी। ऐसे अनगिन प्रकरण हमने देखे हैं। यह कौन अनुभव करेगा कि इस कार्य में शरीर और मस्तिष्क की कितनी कठोर साधना रहती थी।

उनके बंगले का एक कमरा सदैव हास्पिटल वार्ड बना रहता था। गांव से, रिश्तेदारियों से या मित्रों से कोई न कोई बीमार आता रहता (या आती) और उसकी पूरी देखभाल व चिकित्सा सहायता का भार परिवार उठाता। इसमें साक्षात् ममता की मूर्ति आदरणीय चाची जी तथा बाद में कर्नल बी०के० सिंह (बड़े पुत्र) की पत्नी भाभी शकुन का विशेष सहयोग रहता। मुझे बीस रोगी याद है जिन्हें समय-२ पर समुचित उपचार प्रदान करा कर इस परिवार ने जीवन का अवसर प्रदान किया। भैया योगेन्द्र **IFS** (छोटे पुत्र) में भी समर्पित सेवाभाव था। न्यायिक क्षेत्र के अधिकारी प्राय: जनसम्पर्क से दूर रहते हैं। परन्तु जस्टिस सिंह "जनता के आदमी" **(Man of People)** रूप में ही लोक प्रिय हुए। १९८३ में आप सर्व खाप पंचायत उ०प्र० के शोरों सम्मेलन में अध्यक्ष चुने गये। दहेज,

फिजूलखर्ची और दिखावे की कुरीतियों के विरुद्ध प्रबल प्रचार किया। १९८५ से जुलाई १९९७ तक सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा की न्याय समिति के अध्यक्ष पद का गरिमायुक्त वहन किया। १९८४ से १९८९ तक भारतीय किसान यूनियन की कार्यकारिणी में विधि सलाहकार रहे। अनन्तर चौ० महेन्द्र सिंह टिकैत (अध्यक्ष) की राजनीतिक मुखरता तथा कुछ नासमझ तत्वों के अनुचित हस्तक्षेप से खिन्न होकर यूनियन से त्यागपत्र दे दिया। बाद में चौधरी टिकैत ने स्वीकार भी किया कि "जब साहब की मूल्यवान् सलाहों से यूनियन को बड़ी शक्ति मिली, उनके जाने से नुकसान हुआ है।"

आपने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा (विजीटर) पद पर मई १९९३ से जुलाई १९९७ तक अपनी अमिट छाप छोड़ी। वहां के शैक्षिक वातावरण, आपसी सौहार्द तथा एकाउन्ट दशाओं में प्रत्यक्ष सुधार आया। आज भी विश्व विद्यालय स्टाफ उनकी कार्य प्रणाली को आदर्श रूप मे स्मरण करता है।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आपके मन में गहरा प्रेम और अभिलाषा थी। उच्च न्यायालय के अपने **40%** निर्णय हिन्दी में लिख कर सहयोगियों को प्रेरणा दी। न्याय पंचायत कानून (तीन खण्ड) चकबन्दी कानून (तीन खण्ड) तथा भारतीय संविधान पर टीका व अन्य अनेक पुस्तकें हिन्दी में लिखीं जो एक कीर्तिमान है। इस राष्ट्रीय भावना के फलस्वरूप उत्तर प्रदेश तथा तत्पश्चात् भारत सरकार ने क्रमशः राज्य व राष्ट्र का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया। १९९० में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने "संविधान-टीका" पर विधि वाचस्पति (पी०एच-डी०) से सम्मानित किया। आप १९७८ से १९८२ तक "अखिल भारतीय हिन्दी विधि प्रतिष्ठान" लखनऊ के वरिष्ठ उपाध्यक्ष पद पर रहे। यूँ कहिए "जस्टिस महावीर सिंह न्यायालयों की दहजीज पर राष्ट्र भाषा हिन्दी के ज्योति-कलश बन कर चमके। सुश्री महादेवी वर्मा, डा० ब्रजेन्द्र अवस्थी तथा गोपालदास नीरज जैसे साहित्य मनीषियों से आपका पारिवारिक सम्पर्क रहा।

अपनी ईमानदारी निष्पक्ष न्याय कुशलता एवं योग्यता के कारण आपको चौ० चरण सिंह जी (पूर्व प्रधानमंत्री) तथा नारायण दत्त तिवारी (पूर्व मुख्य मन्त्री, उ०प्र०) का निकट सम्पर्क सदैव प्राप्त रहा। सामाजिक कार्यो में आपको राष्ट्रीय सन्त पद्मश्री स्वामी कल्याण देव जी महाराज का आशीष-सहयोग प्राप्त रहा। पाँच वर्ष पूर्व जज साहब के ७५ वें जन्म "अमृत महोत्सव" आयोजन में एलम पहुँच कर स्वामी जी ने ग्रामीण परम्परा से "पान-बताशा व पुष्प" देकर अपनी हार्दिक शुभकामना उन्हें दी थी। ग्राम व क्षेत्र वासियों की भारी भीड़ का

यह नागरिक समारोह ऐतिहासिक बन गया। स्वामी जी की अध्यक्षता में इसके मुख्य वक्ता जनप्रिय आदर्श राजनेता वीरेन्द्र वर्मा थे।

अगस्त १९८२ को सम्मानपूर्वक न्यायमूर्ति पद से अवकाश लिया। परन्तु समाज सेवा कर व्रत और सुदृढ़ हो गया। गांव के आवास भवन में निजि खर्चे पर महिला पोलिटेक्नीक की स्थापना कर दी। बालिकाओं के लिए डिग्री कालेज की योजना प्रस्तुत की। दिल्ली उच्चतम न्यायालय में सीनियर एडवोकेट बने। परन्तु महानगर में आवास कहां। ईमानदारी और सादगी ने सम्मान प्रतिष्ठा तो भरपूर दी पर जेब खाली रही। फिर एक कठोर निर्णय लिया। अदालत का नहीं, अपने जीवन का निर्णय। गांव की कृषि भूमि बेच कर नोएडा में एक छोटा-सा सुन्दर नीड "होशियारी भवन" (स्व० चाची जी के नाम से) बनाया। अब निश्चित हो कर प्रेक्टिस में कम और सामाजिक कार्यों में अधिक व्यस्त हो गये। न तन की चिन्ता, न खान पान का समय, न सोना बैठना।बढ़ती आयु घटती शरीर ऊर्जा और गहराती थकान। कैसा आश्चर्य कि रिटायर्ड जस्टिस, सीनियर एडवोकेट बस में रेल में या पैदल सफल करता हो। मन तो थका नहीं, तन ने साथ देना बन्द कर दिया। शैय्या पर पूर्ण विश्राम अनिवार्य कर दिया गया। कर्नल ब्री०के० सिंह और शकुन भाभी सेवा-उपचार में जुटे रहे। २२ जुलाई १९९७ को मैं अपना "राज्य शिक्षक पुरस्कार" लेकर आशीर्वाद प्राप्त करने नोएडा गया। हर्ष से गद्‌गद् हुए जज साहब की आँखें जीवन में पहली बार मैंने डबडबाते देखीं। मैं चरण-स्पर्श कर मौन आशंका मन से वापस चला। अब जीवन कि गिनती वर्षों में नहीं महीनों में सिमट गयी है।

११ अगस्त ९७ को इस यशस्वी पुरुष रत्न ने संसार से विदा ली। अन्तिम इच्छा के तहत गांव की जन्म भूमि में ही अन्तिम संस्कार किया गया। मातृभूमि तो सारा देश है, जन्मभूमि की गोद में जन्म और मृत्यु मिलना दुर्लभ वरदान ही है।

इस प्रकार एलम गॉव के देशभक्त पुरुष रत्नों (स्वतन्त्रता सेनानियों, साहित्यकारों, शिक्षाविदों सहित) में जस्टिस सिंह ने न्यायपालिका को, समाज को एक पवित्र स्वर्ण नाम प्रदान किया। उनका सम्पूर्ण जीवन निष्कलंक रहा। वे हम सबके आदर्श प्रेरणा पुरुष रूप में सदैव अमर रहेंगे।

"बड़े ग़ौर से सुन रहा था जमाना, तुम्हीं सो गये दासताँ क़हते कहते।"

कल्याणकारी कॉलेज
बघरा (उ०प्र०)

❑ ❑ ❑

"स्मृतियों के वातायन से"

कर्नल भूपेन्द्र सिंह

सबसे पहली यादों में बचपन की जो बात मुझे याद आती है वह नगीना बिजनौर की एक शाम की बात है जबकि माता जी रोने को हैं और पिताजी घर नहीं पहुँचे। कुछ कर्फ्यू लगने की बात चल रही थी। कर्फ्यू क्या होता है, यह तो बाद में समझ आया लेकिन उस रात मेरी छोटी सी समझ के हिसाब से बहुत समय गुज़र जाने के बाद रात 9.30 बजे एक पुलिस जीप से पिता जी घर पहुँचते है। सबकी जान में जान आती है मगर मुन्सिफ साहब यानी पिता जी अपने आप में पूरी तरह से नियन्त्रित और गम्भीर हैं। भय या चिन्ता की कोई शिकन मुँह पर नहीं है। माता जी को सान्त्वना देते हैं। उनकी यही छवि मेरे मन और हृदय में सदा रही है। यह घटना सन् 1949 की है।

एलम् जिला मुजफ्फरनगर में जन्मे चौ. जीत सिंह की सबसे छोटी संतान थे पिता जी। माता पिता ने पता नहीं क्या सोच कर महावीर का नाम दिया क्योंकि शारीरिक कद काठी से तो बड़े होकर भी औसत भारतीय पुरुष (लम्बाई में 5'-6" और वजन में 55-60 किलो) ही नजर आते थे। लेकिन शायद इस छोटे से शरीर में इतनी आध्यात्मिक, शारीरिक और मानसिक शक्ति उन्होंने संचित कर ली थी कि वे वाकई में महावीर बन गये थे। उनसे बड़ी तीन बहनें और फिर सबसे बड़े भाई श्री रणवीर सिंह, कस्टम कलेक्टर थे। वे एक अत्यन्त सीधे और कट्टर आर्य समाजी थे। पिताजी के लिए दादा जी सदा पूज्य रहे। दादाजी बूंदी स्टेट में जंगलात में इन्सपेक्टर रहे। चौ. जीत सिंह जी शताब्दियों के बदलाव के समय विद्यायापन कर घर से जीविकोपार्जन के लिए निकले। वाक्पटुता के धनी दृढ़ निश्चयी, अत्यन्त ईमानदार, परिश्रमी व यति थे। सरस्वती का वरदान था उन्हें। वह ऐसे कथाकार थे कि जब रामायण या महाभारत या कोई और महालया सुनाना शुरू करते थे तो ऐसा प्रतीत होता था कि समय ठहर गया है। मन के बाइस्कोप में घटनाओं की फिल्म सी दिखा देते थे। माँ हरकौर वात्सल्य की प्रतिमा थी और मानव मात्र से प्रेम भाव शायद उन्हीं की देन थी। प्रारम्भिक शिक्षा बून्दी रियासत में हुई। लेकिन पाँचवी कक्षा से कोटा में होस्टल में जाना पड़ा। उन्होंने बताया कि छात्रावस्था में एक बार उन्हें उपन्यास पढ़ने का शौक हो गया। जब मैट्रिक में थे तो चन्द्रकान्ता नाम का तिलिस्मी उपन्यास पढ़ रहे थे। लेकिन पढ़ाई का कार्य पूर्ण करने और पाठयक्रम पर पूरा अधिकार कर लेने के बाद ही उपन्यास पढ़ते थे। शौक इतना परवान

(१) पारिवारिक चित्र
श्रीमती शकुन्तला (पुत्रवधु) गीतिका (पौत्री) ज० महावीर सिंह, निवेदिता (पौत्री)
भूपेन्द्र सिंह, बीच में पौत्र राजीव

(२) पारिवारिक चित्र

नीचे बैठे : श्रीमती शकुन्तला और श्रीमती इंदिरा कुमार (पुत्रवधु)
बीच में : श्रीमति विजय लक्ष्मी (पुत्री) कर्नल भूपेन्द्र सिंह (पुत्र), श्री महावीर सिंह,
श्री योगेन्द्र कुमार सिंह (पुत्र)
पीछे : श्री राजेन्द्र राठी (दामाद) श्रीमती रीतू राठी (पुत्री)
कर्नल राज सांगवान (दामाद) श्रीमति निर्मल सांगवान (पुत्री)

चढ़ा कि परीक्षा भवन में जाते-जाते भी चन्द्रकान्ता का कुछ अंश पढ़ लेते थे। गजब का आत्मविश्वास था उनमें। एक आचार्य के मना करने पर उन्होंने यह आदत छोड़ दी। बाबा जी की आदत गर्मी की छुट्टियां गाँव में बिताने की थी सो गाँव से संबंध हर साल का रहा। वे बड़ों की सेवा करके आनन्द महसूस करते थे। दिन में समय निकालकर छुट्टियों का होमवर्क पूरा करना और रात में घेर में 2.00 बजे तक हुक्का गुड़गुड़ाना उनकी दिनचर्या का अंग बन गया था। साल में 10 महीने का समय कोटा और बून्दी के बीच व्यतीत होता था। पढ़ाई में अव्वल आने के साथ-साथ उन्होंने अपने सर्वमुखी व्यक्तित्व का विकास किया। कोटा से इण्टरमीडिएट करने के बाद इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और वहाँ के साधारण से जैन हॉस्टल में रहे। नियमित जीवन शैली के अनुरूप प्रातः 4 बजे उठना, व्यायाम करना, भागदौड़ (जॉगिंग) करना, पढ़ना, विश्वविद्यालय में कक्षाओं में जाना, शाम को खेलना, रात को पढ़ने के उपरान्त 10 बजे तक सो जाना एक नियमित जीवन की आधार शिला उन्होंने रखी जो अन्त तक उनके जीवन में रही। यहाँ का एक किस्सा वे सुनाया करते थे। एक बार वार्षिक स्पोर्ट्स के दौरान क्रास कन्ट्री रेस में उन्होंने भाग लिया ओर उस रेस में दूसरे स्थान पर आये। पहले स्थान पर एक प्रदेश स्तर का चैम्पियन था। बस फिर क्या था, जैन हॉस्टल का नाम हो गया जो उसके इतिहास की एक बड़ी बात थी। अगली रेस में तो पूरा हॉस्टल उनके पीछे पड़ गया कि पहले नम्बर पर ही आना है। वे हंसकर बताते है कि ज्यादा दूरी की इस रेस में वो आखिर तक आगे रहे पर स्टेडियम के गेट तक जाकर गिर पड़े और फिर उठ नहीं पाये और दूसरा स्थान भी खो दिया। बाद में जब वे इलाहबाद में पोस्टेड थे तो उन्हें वह स्थान दिखवाया गया। उनका कहना था कि अगर रेंस भी लेता तो द्वितीय स्थान जरूर प्राप्त कर लेता। बी.ए. करते समय ही दादा जी रिटायर गये थे। जब एम.ए. का प्रश्न आया और वंहा पर दो साल में एम.ए. और एल.एल.बी. दोनों होते थे जबकि इलाहाबाद में तीन साल लगते थे। पिताजी के विद्यार्थी जीवन की सर्वाधिक उपलब्धियां इसी काल की है। एम.ए. अर्थशास्त्र में प्रथम श्रेणी तथा द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इस कक्षा में ग्यारह साल बाद प्रथम श्रेणी दो विद्यार्थियों को मिली। पिताजी बताते थे कि उस समय हैड ऑफ डिपार्टमेंट पर गृह मंत्रालय का इतना दबाव आया कि उन्हें बीवी के रिश्तेदार के प्रथम डिवीजन देनी पड़ी तो वे बोले कि इसके लिए सबसे योग्य महावीर सिंह है और उन्हें यह डिवीजन जरूर दी जयेगी। इसके साथ-साथ उन्होंने एल.एल.बी. में भी प्रथम और द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इसके बाद जिमनास्टिक में विश्वविद्यालय टीम के कैप्टन रहे। गोमती नदी में नौका-चालन में उनके द्वारा

बनाये गये रिकार्ड दसों साल तक नहीं टूटे। विश्वविद्यालय हाकी टीम जब लखनऊ में खेलती थी तो ये उसमें लेफ्ट आउट (तेज भागने के कारण) पर खेलते थे। पढ़ाई की वजह से टीम के साथ खेलने के लिए बाहर जाने को उन्होंने मना कर दिया था। विश्वविद्यालय ने उनका रहस्य पूछने पर वे हंसकर बताया करते थे कि नियमित जीवन ही उपलब्धि के गर्भ में है। छात्रावास के अतिथि के अनुसार देसी घी का हलवा उन्हें विशेष प्रिय हुआ करता था।

इसके बाद शुरू हुई उनकी जिन्दगी की संघर्ष की कहानी। शिक्षा के क्षेत्र में रूचि होने के कारण वे अध्यापन को अपना कार्यक्षेत्र बनाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने दिल्ली और लाहौर की उस समय जानी मानी संस्थाओं में प्रवक्ता बनने के प्रयास किये परन्तु सफलता नहीं मिली। कहीं भाई–भतीजावाद आड़े आया तो कहीं अनैतिक अभ्यास। लाहौर में तो शर्त ही रख दी कि वेतन आधा मिलेगा और रसीद पूरे धन की हस्ताक्षर करनी पड़ेगी। इससे उनका मन दुखी हुआ और साक्षात्कार के उपरान्त वापस लौट आये। कुछ दिन जाट कालेज, बड़ौत में प्रवक्ता का कार्य किया। कुछ कारणों से वहां से भी कार्य छोड़ना पड़ा। फिर बाबू बलवंत सिंह एड्वोकेट के जूनियर बनकर लीगल प्रैक्टिस सीखनी शुरू कर दी। दो तीन प्रतियोगिताओं में भी बैठे मगर पेपर्स के दौरान ही बीमार होने से सफलता प्राप्त नहीं कर सके। यू.पी. जूडिशियल सर्विसेज कम्पीटीशन का आखिरी अवसर था। अपने पिताजी के दबाव में भरे मन से फीस और फार्म बिल्कुल ऐन वक्त पर आखिरी समय में भेजा ताकि वो निरस्त ही हो जाये। परन्तु ऐसा नहीं हुआ और फार्म स्वीकृत कर लिया गया। उन्होंने अपने सीनियर एडवोकेट को वचन दिया था कि कम्पीटीशन में नहीं बैठेंगे अतः ज्यादा तैयारी नहीं कर पा रहे थे। सीनियर एड्वोकेट को इसी बीच किसी से पता चला कि महावीर सिंह भी कम्पीटीशन में बैठ रहे है तो उन्होंने उनको बुलाकर डांटा लेकिन बाकी का समय तैयारी के लिए मिल ही गया। पेपर्स के समय वे फिर बीमार हो गये किन्तु शायद दो–तीन बार का किया हुआ अध्ययन काम आ गया और वे परीक्षा में उत्त्तीर्ण हो गये। सन् 1946 में उनकी पहली नियुक्ति बिजनौर में मुन्सिफ के पद पर हुई।

इसी वर्ष उनका विवाह श्रीमती होशियारी देवी सुपुत्री चौ. कन्हैया सिंह, ग्राम भगान जिला सोनीपत से सम्पन्न हो गया। माताजी अपने मातापिता की अकेली संतान थी और यही कारण था कि नानाजी अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में पिताजी के पास ही रहे। अपनी शादी का क़िस्सा सुनाते हुए वे कहते थे कि नानाजी के बड़े भाई मिलाई के समय परम्परा के अनुसार घड़ी देने लगे तो पिताजी ने कहा कि घड़ी तो उनके पास है। फिर साईकिल देने लगे तो बोले कि

साईकिल भी है। तो उन्होंने कहा कि बटेऊ कुछ कमजोर है, एक गाय दे देते है। ग्रहस्थ जीवन में पदार्पण और जीवन के संघर्ष का फल उसे मिला जब वे मुंसफी में आ गये और बिजनौर में पहली नियुक्ति हुई।

कार्य के प्रति शुरू से समर्पित रहने की आदत ओर निरन्तर परिश्रम उनकी सदैव शक्ति बने रहे। मुंसिफ को जयादातर दीवानी केस लॉ का कार्य करना होता है तो जटिल और काफी परिश्रम मांगता है। इस क्षेत्र में उन्होंने पूर्ण सफलता प्राप्त की। वे केस वर्क निपटाने में सदा अग्रणी रहे। उस समय के जूडिशियल प्रणाली में कोर्ट ठीक समय लगकर चार बजे उठता था। पिताजी आवश्यकता के अनुसार अपने आपको ढालते थे। कोर्ट से आकर अैनिस, बैडमिंटन और टेबिल-टेनिस आदि खेलने का उन्हें सदा ही शौक रहा। उन्होंने ब्रिज (ताश का खेल) भी सीखा किन्तु खेला नहीं चूँकि पैसे के साथ खेलना उन्हें मंजूर नहीं था। अन्य जूडिशियल आफीसर्स की तरह रिक्शा में न चलकर वे साईकिल पर ही चला करते थे। प्रातःकाल में सैर, नहा-धोकर केस वर्क करना (उन दिनों फैसले अपने हाथ से लिखने पड़ते थे), कोर्ट जाना, वहाँ से 8.30 बजे सायं तक वापस आकर चाय आदि पीकर खेलने के लिए क्लब जाना, फिर वहाँ से आकर भोजन करके सोने से पहले मामलों का अध्ययन करना उनका दैनिक कार्य था। वे हमेशा सोने से पहले मामलों का अध्ययन करना उनका दैनिक कार्य था। वे हमेशा सामाजिक कार्यक्रमों के प्रति जागरूक रहते थे। मई-जून में दो महीने के करीब कोर्ट बन्द रहा करते थे तो वे शहर के आराम छोड़कर सपरिवार गांव चले आते थे। गांव में सदैव कुछ न कुछ सामाजिक कार्य में अपने आपको लगाये रखते थे। सबसे पहले पाठशाला स्थापित करवायी जो आज इण्टर कालेज है। फिर कोआपरेटिव सोसाइटी स्थापित की जिसके तहत एक भट्टा और एक फेयर प्राइस शॉप को चलाया। आज भी ये सोसाइटी गांव को लाभान्वित कर रही है। इसके अलावा कोई भी परेशान व्यक्ति कानूनी सलाह ले सकता था। उन्होंने बहुत सारे मामलों में पार्टियों के बीच समझौता करवाया।

सन् 1950 में स्थानान्तरण होने पर वे बिजनौर से नगीना और नगीना से रायबरेली पहुँचे। यहॉ पर तीन साल रहे। इसी बीच उनकी सबसे बड़ी बहन जो निनाना जिला बागपत में है, का निधन हो गया और फिर उनके जीजाजी जो सेना में कप्तान थे, कश्मीर में युद्ध में दुश्मनों की गोलाबारी में शहीद हो गये। रायबरेली का समय मेरे लिए (लेखक) बहुत महत्वपूर्ण रहा। यहॉ से मेरी शिक्षा शुरू हुई थी। हमारे दादाजी, दादी जी आदि हमारे साथ ही रहते थे। पिताजी और दादाजी जैसा कि उस समय वातावरण था, पूरी तरह से स्वदेशी भावना से

ओत–प्रोत थे। इस कारण कान्वेन्ट शिक्षा जो उस समय भी कुछ खास तबके में फैशन बन चुकी थी, में मुझे पढ़ाने के बजाए सामान्य सरकारी प्राइमरी स्कूल में और राजकीय विद्यालय रायबरेली पढ़ाया गया। कैप्टेन भगवान सिंह जी उन दिनों रायबरेली के कलेक्टर थे और बाद में भारत के मशहूर ब्यूरोकेट बने तथा राजदूतों में रहे, उनकी पिताजी से दोस्ती हो गयी। ये दोस्ती सन् 90 तक चली। फौज के शब्दों में स्पिट–दी–कोर को बढ़ाने के लिए कैप्टन साहब प्रशासन के अधिकारियों आदि के साथ शिकार और पिकनिक आदि का अक्सर आयोजन करते थे। पिताजी को एक बोर की बन्दूक भी खरीदवायी थी जिसका इस्तेमाल शिकार में होते हुए हमने कभी नहीं देखा। इसके बाद पिताजी का स्थानान्तरण रायबरेली से गाजियाबाद हो गया। वहां थोडे ही दिन रह पाये थे कि सिविल जज की पदोन्नति पर उन्हें सन् 1945 में सहारनपुर स्थानान्तरित कर दिया गया। स्कूल के हिसाब से सत्र का मध्य होने से मुझे और मुझसे छोटी एक बहन को गांव की पाठशाला में छोड़ दिया गया। दुर्भाग्य से अचानक छोटी बहन बीमार हुई और इससे पहले कि कुछ समझ आता, वो चल बसी। बाबा जी और पिताजी को हमेशा इसका गहरा मलाल रहा। सहारनपुर का वास दो बातों से महत्वपूर्ण रहा। एक तो पिताजी को दिन में दो–तीन बार हुक्का पीने की जो आदत थी, वो वहां के मशहूर डाक्टर बागले ने प्रतिबंधित करके छुड़वा दी। दूसरे सहारनपुर में यमुना के खादर में जमींदार घरानें में हमारी एक बुआ जी थीं उनके बीसियों मुकद्में दीवानी और फौजदारी के थें उनमें से बहुत सारे आपस में सुलह के द्वारा ही निपटा दिये गये। रिश्तेदारों को लेकर सिफारिश करने आने वालों से निपटना बाबा जी का काम था। उनके रौद्र रूप और कठोर वाणी ने थोड़े दिनों में ही रिश्तेदारियों मे हमारी प्रतिष्ठा का स्तर शून्य पर पहुँचा दिया। यह सिलसिला पिताजी के हाईकोर्ट से सन् 1982 में रिटायर होने तक चलता रहा। किन्तु बाबा जी की वजह से पिताजी इस विषय में निश्चित रहे। हालांकि बाद में सबकों समझ आ गया कि महावीर सिंह न तो सिफारिश सुनेंगे और न ही करेंगे। हाँ कानूनी सलाह देने में उन्होंने कभी भी न संकोच नहीं किया। सहारनपुर का समय एक ओर प्रकार से मेरे लिए विशेष रूप से स्मरणीय है कि एक तो मैंने पहला हिल स्टेशन इसी दौरान देखा तथा दूसरे लक्ष्मणझूला, ऋषिकेश, हरिद्वार के भ्रमण के दौरान दो–तीन दिन गुरूकुल में, जहाँ पर तम्बू आदि की उचित व्यवस्था थी, रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस समय की रमणीयता, वातावरण और ब्रह्मचारियों का सानिध्य मुझे प्राप्त हुआ। उस समय भारत में जनसंख्या भी कम थी और हरिद्वार तथा आस–पास का क्षेत्र आधुनिकता और विकास से दूर था। हर चीज उस समय मानों प्रकृति की गोद में आराम कर रही थी। सन् 1955

में हम लोग सहारनपुर से फैजाबाद आ गये। पिताजी फैजाबाद तथा इससे अगले स्टेशन इलाहाबाद के इवक्यू प्रोपर्टी के जज थे जिससे आवागमन आदि काफी करना पड़ता था। दोनों ही जगह आवास व कार्यालय एक ही होने से बड़ा आनन्द रहा। फैजाबाद में घर के पास एक जिम्नास्टिक का क्लब था। वहाँ बुआ जी के लड़के के साथ में हम भी कभी-कभी चले जाते थे। पिताजी कोक अपना पुराना शौक चढ़ आया। वे पैरेलल बार और हॉरिजोन्टल बार 35 साल की उम्र में परफेक्ट डेमोंस्ट्रेशन करते थे। उन्हें देखकर वहाँ के प्रशिक्षक भी चकित हो जाते थे। उन्हें लांग-टेनिस, बैडमिन्टन और टेबल-टेनिस खेलते हुए और क्लब टूर्नामेंट जीतते हुए तो पहले भी देखा था टेबिल-टेनिस खेलते हुए और क्लब टूर्नामेन्ट्स जीतते हुए तो पहले भी देखा था लेकिन ये एक नया ही पहलू था। सन् 1955 के आस-पास ही पहली बार चकबन्दी शुरू हुई। गर्मी की छुट्टियाँ गांव मे बिताते हुए पिताजी ने महसूस किया कि किसानों को चकबन्दी के बारे में ज्ञान कम है और इस कारण उनका शोषण किया जा रहा है। यह सोचकर उन्होंने उत्तर प्रदेश में चकबन्दी पर हिन्दी में एक छोटी सी व्यावहारिक जानकारियों से पूर्ण किताब लिखी जो बड़ी पापुलर रही। जहाँ तक मुझे याद आता है, उनके द्वारा लिखी गयी यह तीन किताबें इस विषय पर पहली थी। जैसे-जैसे कानून व्यवहारिक बनाने के लिए बदलाव किये गये, वैसे -वैसे इन पुस्तकों में समायोजन करने का प्रयास किया गया। मेरे विचार से पिताजी का कार्यकाल इलाहाबाद में काफी अच्छा रहा। वहां की यूनिवर्सिटी में चूँकि पिताजी पहले ही पढ़ चुके थे। वहां से काफी छात्रों और अधिकारियों निरन्तर सम्पर्क होता रहता था। जूडीशियरी का मक्का होने की वजह से भी वहाँ पिताजी अपने आपको काफी व्यस्त पाते थे। उस स्थान पर आर्य समाज की गतिविधियाँ भी काफी प्रगति पर थी। मुझे याद है कि मेरी धार्मिक शिक्षा एक तरह से यहीं पर हुई। पिताजी के साथ के कारण आर्य समाज के सम्मानित और जाति के बहुत से गौरव पुरूषों का आशीर्वाद, जो घर के अन्य सदस्यों के साथ-साथ मुझे भी मिला, उसके लिए मैं अपने आपको धन्य समझता हूँ। सिटी ए.वी. इण्टर कालेज से मैंने 1959 में हाईस्कूल की परीक्षा पास की । इसी दौरान पिताजी को पदोन्नत कर सेशन जज के पद पर शाहजहाँपुर स्थानान्तरित कर दिया गया। जूडीशियल जीवन में अब तक तो निर्णयों का असर मानव पर अप्रत्यक्ष रूप से ही पड़ता था, लेकिन अब सीधा पड़ने लगा। सुबह घूमने जाते तो अपने सीनियर से विवेचना करते और शाम का बाबा जी के साथ जीवन के उन पहलुओं पर विचार करते जो मानव की विभिन्न मानसिकताओं से जुड़े हुए है। इसके पश्चात वे स्वयं मनन करते और तब जाकर अपना निर्णय लिखते थे।

किसी – किसी केस में जब अभियुक्त दया का पात्र होता था तो काफी विचलित रहते थे लेकिन कभी भी कानून की लक्ष्मण रेखा का नहीं लांघा। हमेशा इन्साफ किया और उनको इसका यश भी मिला। यहां से वे धीरे – धीरे न्याय करने वाले, निर्भीक, सिफारिश न सुनने वाले जज के रूप में मशहूर होना शुरू हो गये। शाम को टेनिस, बैडमिन्टन इत्यादि नियमित रूप से चलता रहा। साथ में काफी बड़ा बंगला मिला तो एक भैंस रख ली थी। वे उसका काम करने में हमेशा एक भैंस रख ली थी। वे उसका काम करने में हमेशा एक खुशी महसूस करते थे। आर्य समाज (रामप्रसाद बिस्मिल) में लगाव और बढ़ा। सन् 1961 में मैंने इण्टर पास किया और कुछ दिनों के लिए इलाहबाद यूनिवर्सिटी में पढ़ने गया, लेकिन नेशनल डिफेंस अकादमी, खड़कवासला में मेरा चयन हो गया और 2 जनवरी 1962 में मैंने अकादमी ज्वाइन कर ली। अब तो छः माह में एक बार ही मेरा घर पर आ पाना सीमित हो गया। जून 1962 में पिताजी का स्थानान्तरण कानपुर हो गया। गर्मियों में गांव चले जाना अभी तक भी जारी था। इस दौरान मैंने महसूस किया कि उनका परिचितों और मित्रों का दायरा धीरे – धीरे बढ़ रहा था किन्तु वे अपने कार्यों से बिलकुल समझौता नहीं करते थे। उनसे सहज व्यवहार करने वाले सीमित लोग ही थे। पद का कोई अभिमान उनमें नहीं था। बार से, क्लब से, समाज से और जूडीशियरी/अधिकारियों से उनका दायरा बढ. ही रहा था। कई महत्पूर्ण केस करने से उनकी ख्याति पूरे जिले में फेल गयी थी। उस समय नेशनल इन्ट्रीगेशन के तहत एक स्कीम में उन्होंने तेलगू सीखी और कानपुर के तेलगू भाषियों के प्रिय बन गये। उनकी अगली नियुक्ति सन् 1965 में अलीगढ़ में हुई तो अलीगढ़ विश्वविद्यालय का सानिध्य होने से शोध की तरफ रूझान हुआ। यही कारण था कि रिटायर होने के बाद उन्होंने जानी मानी हस्ती जस्टिस इकबाल पर एक किताब लिखी। ये पुस्तक मेन्यूस्क्रिप्ट खो जाने के कारण प्रकाशित नहीं हो सकी। इस बात का उन्हें दुख भी होता था। दिसम्बर,1965 में 25 तारीख को मुझे कोर आफ ई.एम.ई. में देहरादून में कमीशन मिला। इस अवसर पर पूरा परिवार देहरादून आया था। परेड़ से पहली रात करीब 8 बजे सब लोग मिलने जब भारतीय रक्षा अकादमी में आये तो उन्हें गेट पर रोक लिया गया। संतरी ने पूछा कि किसके पास जाना है तो पिताजी ने कहा मेरे बेटे का कमीशन मिल रहा है, उससे मिलना है। उसे इस बात का यकीन ही नहीं हुआ। उससे कहा कि आप तो खुद लड़के से लग रहे है। तब किसी ने मुझे खबर दी जब मैं जाकर उन्हें गेट से लेकर आया। पतला किन्तु पुष्ट शरीर, चुस्त चाल, काले बाल, कोई झुर्री नहीं, ऐसा था पिताजी का व्यक्तित्व। बिना काले किए उनके बाल 62 साल की उम्र में जबकि वे रिटायर

हुए काले थे। अलीगढ़ में ही छोटी बहन विजय का विवाह बागडौली के चौ. शिवचरण सिंह के ज्येष्ठ पुत्र श्री नरेन्द्र पाल जी (निवासी सोकत, मेरठ) से जून 1966 में हुआ।

अलीगढ़ से पिताजी का स्थानान्तरण इलाहाबाद हुआ जहां पर उन्हें हाईकोर्ट में बहुत समय से लम्बित मामलों के शीघ्र निपटान का कार्य सौपा गया। उसमें अच्छी प्रगति चल रही थी कि किन्हीं कारणवश उनका स्थानान्तरण फिर से आगरा में जज सेल्स टैक्स (रिविजन) पर कर दिया गया। इस तरह से परिवार को इलाहाबाद में स्थापित होते-होते आगरा की तरफ प्रस्थान करना पड़ा। परिवार की ओर से आगरा का समय भी ठीक ही रहा। उस समय रिश्तेदार और दोस्तों का ताजमहल देखने के लिए आना जाना एक आम सी बात थी। 23 साल की न्यायाधीश की जिन्दगी साईकिल पर कोर्ट आने-जाने में गुजारने के बाद सरकारी ऋण लेकर पिताजी ने एक कार खरीदी जो छोटे बहन-भाईयों के लिए एक बहुत आनन्द की बात रही। यह कार अगले बीस साल तक परिवार के साथ रही। सन् 1971 में उन्हें पदोन्नति कर बदायूँ जिले का जिला जज बनाकर भेज दिया गया। 12 सोल सेशन जज का दायित्व निभाने के बाद एक केस में उन पर जोर डालने के लिए जान से मारने की धमकी मिली। जिसको उन्होंने जीवन की रफ्तार में बाधा नहीं समझा। लेकिन ऐसे ही एक राजनैतिक हत्या के केस में उन्हें अनेक मानसिक यातनाएँ झेलनी पड़ी। मृतक् उस समय के प्रदेशीय शासन के सबसे शक्तिशाली परिवार से जुड़ा था और उनकी इच्छा थी कि असली हत्यारे के साथ-साथ तीन-चार व्यक्ति और भी दण्डित हों। परन्तु पिताजी को तो न्याय करना था सो किया और सिर्फ कातिल को मृत्युदंड दिया। इस तरह शुरू हुई आदर्शों और व्यावहारिकता की रस्साकसी। जो भी कारण हों, हाईकोर्ट ने पिताजी का निर्णय पर पहली बार उच्च न्यायालय द्वारा एक गम्भीर कथन जारी किये गये स्वाभाविक रूप से केस की अपील उच्चतम न्यायालय में की गयी। पिताजी का स्थानान्तरण दण्ड-स्वरूप रामपुर कर दिया गया। उन्हें दो तीन छोटी मोटी अनियमितताओं का भी सामना करना पड़ा जो कि उच्च न्यायालय की जांच में निराधार पाये गये। पिताजी के लिए यह समय एक परीक्षा की घड़ी थी जब उनके जीवन भर की कमाई और जीवन का साथ ना दॉव पर लग गयी थी। और फिर वह समय भी आया जबकि उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को खारिज करते हुए पिताजी के निर्णय को ही पुनः लागू कर दिया। इसके साथ ही उनका मान सम्मान जूडीशियन क्षेत्र पुर्नस्थापित हुआ। रामपुर तबादले का दूसरा पहलू एक तरह से राजनैतिक षडयन्त्र था। रामपुर पूर्व में स्टेट होने के कारण रामपुर राजघराने का अधिकारी

वर्ग पर एक अप्रत्यक्ष दबाव था। अधिकारी जो नवाब को नमन नहीं कर पाते थे, वे टिक नहीं पाते थे। ऐसे में सोचा गया कि महावीर सिंह जैसे सीधे-साधे आदमी की तो दुर्गति हो ही जायेगी। लेकिन हुआ उल्टा। कुछ ही दिनों में अपनी सच्चाई, निष्पक्षता, मेहनत और मृदु व्यवहार से रामपुर में वो जगह बनाई कि उनके चले जाने के बाद अभी तक लोग उन्हें याद करते हैं। अराजनैतिक रहने के कारण नवाब साहब और सबसे अधिक समय तक लोकसभा सदस्य रहे मिकी मियां आदि से उनके घनिष्ठ सम्बन्ध रहे। रामपुर में पिताजी ने पांच साल से ऊपर की पारी खेली। इस बीच फरवरी 73 में मेरी शादी दिल्ली के औचन्दी के एक बहुत पुराने और विख्यात परिवार के डा. लक्ष्मण सिंह लौहचव की पुत्री शकुन्तला से हुई। रामपुर में उस शादी का समारोह हुआ। ऐसा लग रहा था कि रामपुर उठकर आ गया है। इस समय तक उनका सामाजिक दायरा बहुत बड़ा हो गया था। 1975 से 1977 में आपात्काल के दौरान भी पिता जी ने प्रायः निर्भीक फैसले लिए और शासन की हर बात से आंख नीची कर हां नहीं जतायी। टाडा और लैंड सीलिंग एक्ट के उन्होंने निर्भीक निर्णय दिये। 1975 में 93 साल की उम्र में दादाजी के कूल्हे की हड्डी टूट गयी। उन्हें इलाज के लिए डा0 मिनी गोयल के पास लखनऊ मेडिकल कालेज में ले जाया गया। आपरेशन तो ठीक हो गया परन्तु वी.टी.आई. इन्फेक्शन की वजह से स्थिति खतरनाक हो गयी। दादाजी मरते-मरते बचे। पिताजी ने दिन-रात अस्पताल में रहकर उनकी सेवा-सुश्रूषा की। इसका हम सब पर बड़ा असर पड़ा और शायद यही बात आगे चल कर दोहरायी गयी। कुछ समय बाद बाबा जी लखनऊ से पुनः दिल्ली के भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में प्रोस्टेट आपरेशन के लिए वापस आ गये। डाक्टर ने आयु व अवस्था को देखते हुए आपरेशन से मना कर दिया तो बाबा जी ने विभागाध्यक्ष से कहा कि मेरे पेट में से आपरेशन करके पेशाब की नली निकाल दें। मैं गारण्टी देता हूं कि आपरेशन टेबल पर मरूंगा नहीं। खैर किसी प्रकार विभागाध्यक्ष मान गये और बाबा जी का आपरेशन सफलता पूर्वक सम्पन्न हो गया। संस्थान में इन सब कारणों से काफी समय लग गया और पिताजी जिला जज के अपने दायित्वों का निर्वाह करने में रामपुर और दिल्ली के बीच चक्कर काटने पर विवश थे। 4 बजे कोर्ट छोड़कर सीधे रामपुर से दिल्ली स्थित आयुर्विज्ञान संस्थान पहुँचते थे। रात-2 भर जागकर बाबा जी की सेवा की। उन दिनों राहजनी की घटनाओं को देखते हुए रात को गाड़ियों के कारवाँ लगते थे किन्तु पिताजी ने कभी उनकी परवाह नहीं की और अकेले ही देर रात में चलकर सुबह रामपुर पहुँचते थे। मैं भी छुट्टी लेकर उस समय आया हुआ था। उनकी इस रामपुर और दिल्ली की भागदौड़ में कभी भी मुँह पर

शिकन नहीं आयी। चिढ़े हुये बाबा जी की डांट भी वे बड़े आराम से सुन लेते थे। बाबा जी को पूरी तरह से ठीक होने में साल से ज्यादा लग गया। इस बिमारी के बाद वे बैशाखी लेकर चल पाये और इसको उन्होंने अपने अभ्यास में शामिल कर लिया।

इसी बीच सन् 1973 में छोटे भाई ने एम.ए. (आनर्स) इतिहास में करके कालेज आफ वोकेशनल स्टडीज दिल्ली में प्रवक्ता पद पर कार्य करना शुरू कर दिया। बाद में सेल्स टैक्स की सेवा मिली जो ज्वाइन नहीं किया। अगले साल रेलवे में नौकरी मिली तो किसी तरह से पिताजी व पारिवारिक सदस्यों के समझाने पर ज्वाइन कर ली। वह भी कुछ पसन्द नहीं आयी तो तीन महीने की छुट्टी लेकर रामपुर आ गया और फिर से आई.ए.एस. की तैयारी की। इस बार बहुत मेहनत करके आई.एफ.एस. में सेवा प्रारम्भ कर दी।

1977 में ही पिताजी का तबादला इण्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल में लखनऊ में हो गया। वहाँ से नवम्बर में हाईकोर्ट जज के लिए शपथ ली। हमारी जाति से इलाहाबाद हाईकोर्ट जो उत्तर प्रदेश और उत्तर भारत में ऐतिहासिक है, के प्रथम न्यायाधीश बने। इसका हम सबको सदैव गौरव रहा। जाति से प्रथम हाईकोर्ट के जज बनने का गौरव श्री तेवतिया को हरियाणा से रहा है और वे चीफ जस्टिस बंगाल हाईकोर्ट में भी रहे। सन् 1977 के दिसम्बर में छोटे भाई की शादी भी दिल्ली में इन्द्रा सुपुत्री डा. जीत सिंह वर्मा जो गाजियाबाद जिले के निवासी और नोसिल जैसे प्रसिद्ध कम्पनी के वाइस प्रेसिडेन्ट थे से हुई। इस तरह से 1977 पिताजी के लिये पेशे तथा पारिवारिक दृष्टि से एक अच्छा वर्ष साबित हुआ। एलिवेट (उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में जज बनने पर इस शब्द का प्रयोग किया जाता है) होने पर पिताजी को लखनऊ बेंच में नियुक्त कर दिया गया और उन्होंने अपना पाँच साल का कार्यकाल यहीं सम्पन्न किया।

सन् 1977 से 1982 का समय पिताजी के जीवन में और अधिक उपलब्धि और कार्यों का समय रहा जबकि उन्होंने एक पेशेवर व्यक्ति की हैसियत से अपने न्यायिक जीवन का यश अर्जित किया। साथ ही साथ इलाहाबाद उच्च न्यायालय के इतिहास में 40 प्रतिशत फैसले हिन्दी में करने वाले प्रथम न्यायाधीश होने का गौरव प्राप्त किया। इसी बीच दिल्ली में स्थापित होने वाली सूरजमल एजूकेशन सोसाइटी के फाउन्डर मेम्बर और 1975 से ही सर्वाधिक क्रियाशील मेम्बर बने। अपने दायित्वों के बीच महीने में दो-तीन बार द्वितीय श्रेणी से लखनऊ से दिल्ली के लिए (प्रायः शुक्रवार को) शाम को चलते थे। संस्थान का काम करके सोमवार को सुबह वापस लखनऊ पहुँच जाते थे। इस तरह उन्होंने अपना जीवन एक कर्मयोगी के रूप में स्थापित कर लिया था। वे जो भी

सामाजिक कार्य करते थे, उसका असर पेशे के कार्य अथवा उसके लिए वांछित समय पर नहीं पड़ने देते थे। इसी दौरान पिताजी की तिसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि उनका हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए राज्य और राष्ट्र स्तर के संस्थानों से जुड़कर कार्य करना रहा। न्यायाधीश का कार्य बड़ा संवेदनशील होता है, तिस पर समाज में घुल-मिल कर सामाजिक कार्यों को आगे बढ़ाना एक कठिन कार्य है। प्रायः इस तरह के व्यक्ति एक साथ दोनों कार्य करने से बचते हैं। लेकिन पिताजी ने इन दोनों पहलुओं के बीच एक ऐसी दीवार खींच ली थी जो कभी टूटी नहीं और उन पर न्यायिक प्रक्रिया में कभी अनैतिकता का लांछन नहीं लगा। इसी दौरान 1981 में मझली बहन निर्मल की शादी श्री राज के. सागवान सुपुत्र कैप्टन सागवान निवासी गुड़गांव से सम्पन्न हुयी जो आजकल भारतीय सेना में कर्नल हैं। इस समय उनका सामाजिक सम्पर्क लखनऊ और प्रदेश में काफी बढ़ता रहा तथा जीवन और अधिक व्यस्त होता गया। आर्य समाज की गतिविधियों में उनकी शिरकत बढ़ी। इन सब व्यस्तताओं के बावजूद वे अपनी जन्मभूमि और गाँव को नहीं भूले तथा गर्मियों की छुट्टियों में वहां जाने का समय अवश्य निकाल लेते थे।

लगभग चार दशक की न्यायिक सेवा के बाद अगस्त 1982 में पिताजी ने सेवा से अवकाश ग्रहण कर दिया। तन और मन से युवा, 18 घण्टे लगातार कार्य करते रहने में सक्षम, प्रायः सभी काले बाल, कहीं भी साधारण भारतीय की तरह से साधारण साधनों से यात्रा करने में सक्षम पिताजी ने अगली दृष्टि उच्चतम न्यायालय पर डाली। सेक्टर 14, नोएडा में एक किराये के मकान में आवास बनाया और बाबाजी, नानाजी और सबसे छोटी बहन के साथ वहीं डंट गये। सेक्टर 15ए में गांव की जमीन बेचकर एक भूखण्ड लिया था किन्तु उसमें भी घर नहीं बना पाये थे। यह ईमानदारी की ताकत थी या कमजोरी- दोनों तरह से सोचा जा सकता है। फरवरी, सन् 1983 में पिताजी ने बाबाजी की 100वीं वर्षगांठ धूमधाम से मनाई। इस घटना की तूती अमेरिका तक में बोली। अगस्त, सन् 1983 में मेरी पोस्टिंग पहली बार घर के पास दिल्ली केंट में हुई। लेकिन बिमारी के कारण माताजी का स्वर्गवास हो गया। मानो सारी खुशियां गम में बदल गयी। दुर्भाग्य ने जैसे आक्रमण ही कर दिया। मां की बिमारी के दौरान ही नानाजी, जो पिताजी के साथ ही रहते थे, भी चल बसे। माँ की मृत्यु के बाद बाबा जी का मन इतना खिन्न हुआ कि उन्होंने जीने की सब इच्छाएं छोड़ दी। जब से मुझे याद है, बाबा जी हमेशा हमारे साथ रहे और इस दौरान माँ की सेवाओं पर इतना आश्रित हो गये थे कि माँ के जाने से उनका सारा हौंसला पस्त हो गया। पिताजी और इन्द्रपाल ने उन्हें समझाने की बहुत कोशिश की लेकिन

उनकी मनोदशा नहीं सुधरी और मई, 1984 में 101 वर्ष की आयु में इस लोक से विदा हो गये। साल भर पहले तक कई जाने-माने वैद्य, जो उनकी नाड़ी की जांच करते रहते थे, कहा करते थे कि अभी दस साल तक इन्हें कुछ नहीं हो सकता।

6-7 महीनों के अन्दर-अन्दर पिता, श्वसुर और पत्नी को खोकर पिताजी बिल्कुल अकेले से हो गये। उस समय मैं जनकपुरी- दिल्ली कैंट में रहा करता था और छोटा भाई अपने परिवार के साथ कर्जन रोड पर रहता था। हमारे सामने तो उन्होंने कभी व्यक्त नहीं किया किनतु अपने आपको जीवन कर्म में पूरी तरह झोंक दिया। उच्चतम न्यायालय में सीनियर एडवोकेट का कार्य करते हुए उन्होंने सामाजिक गतिविधियों में राजनीति का समावेश कर लिया और जनता दल से जुड़ गये। लीगल प्रेक्टिस में वे गरीब की व्यथा से पिघल जाते थे। अक्सर कोर्ट फीस और कागजों का पैसा भी अपनी जेब से दे देते थे। सही मायनों वे वे विधि के ज्ञाता होने पर भी स्वयं को एक व्यवसायी नहीं बना पाये। उनके जीवन में पैसा कभी भी उद्देश्य नहीं बन पाया। वे तो एक जरूरत की चीज थी और उनकी जरूरतों के लिए शायद पैसों की कमी नहीं पड़ी। 15 अगस्त 1986 को गाँव वासियों को विश्वास में लेकर अपने गाँव के घर में ग्रामीण अंचल की कन्याओं के लिए एक तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की। इसमें लड़कियों को सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, पाचन-विद्या, पेंटिंग आदि का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। कुछ दिनों पश्चात इस कार्य में कनाडा की एक संस्था की मदद से दिल्ली पालेटैक्निक के माध्यम से सहायता मिलना आरम्भ हुई किन्तु कुछ ही समय बाद वह बन्द हो गयी। फिर पिताजी ने अपने खर्चे पर इसे चलाया। उस समय इसमें नाम मात्र की फीस ली जाती थी।

सन् 1986 में ही एच.डी.एफ.सी. के ऋण और पेंशन एरियर आदि लगाकर एक छोटा सा अपना घर सेक्टर 15ए में बनाया और दिसम्बर, 86 से इसमें रहने लगे। सन् 1982 में रिटायर होने के बाद तो पिताजी का कार्यक्षेत्र उ0प्र0 की सीमाओं को पार करता हुआ दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और मध्य प्रदेश तक फैल गया। सन् 1983 में वे सर्वखाप पंचायत के अध्यक्ष बने जो ग्रामीण अंचल में गाँवों के समूह की संस्था है। 1984 में श्री टिकैत के साथ किसान यनियन में कार्य करना शुरू कर दिया। सोमवार में शुक्रवार तक उच्चतम न्यायालय के दिन थे, तो शनिवार व रविवार ग्रामीण अंचल और आस-पास में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक गतिविधियों के। इस समय में सफल भी खूब किया। वे बसों में व रेल में साधारण श्रेणी में कई-कई घण्टे खड़े होकर सफर कर लेते थे। इन सब गतिविधियों में समय मिलता तो वे अपनी विधि की किताबें लिखते या

उनका पुनर्गठन करते थे। वे कभी खाली नहीं बैठे। 1985–86 में वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय सभा के अध्यक्ष भी बनाये गये। 1985 से 1995 के दशक में उन्होंने एक समझौताकार का कार्य भी किया। इसमें कुछ कार्य तो सरकारी था किन्तु कुछ परिचितों में बंटवारे आदि के मामलों में उत्पन्न हुए गहन तनाव का था। जब समझौताकार से सभी लोगों की अपेक्षाएं बहुत अधिक होती हैं, तो यह कार्य अत्यन्त जटिल हो जाता है। दोनों पक्षों को एक फैसले पर लाना बहुत ही टेढ़ी खीर है। पिताजी सीधे–साधे होते हुए भी यह इसलिए कर पाये चूँकि विधि के क्षेत्र में उनकी पकड़ असाधारण थी। जैसा की प्रायः होता ही है, इस प्रकार के फैसले करने में यद्यपि कुछ रिश्तों में खटास भी आया किन्तु मेरा मानना है कि उन परिवारों के लिए पिताजी का यह प्रयास कल्याणकारी ही होगा।

1982 में रिटायरमेंट से लेकर 1997 में अपने महाप्रयाण तक के बीच के समय में लगभग 15 साल उनके जीवन का व्यस्तमय समय रहा। इस समय के बारे में संक्षिप्त विवरण देना मेरी क्षमता के बाहर है। लीगल प्रेक्टिस, सूरजमल सोसाइटी, महिला पालिटेक्निक एलम, लोकदल–जनतादल–भारतीय जनता पार्टी की राजनीति, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की गतिविधिया, एन.ए. आई.ई.डी. यूनियन, भारतीय किसान यूनियन, प्रतिमंच नोएडा, हिन्दी साहित्य सभा लखनऊ, नोएडा, सांस्कृतिक मंच, बार एसोसिएशन, विधि साहित्य प्रकाशन, हिन्दी और अंग्रेज़ी में विधि पुस्तकों का सृजन/पुनर्गठन, कोन्सटीच्यूशन क्लब आफ इण्डिया, एन.एच.आर.सी. आदि–कार्यों/गतिविधियों में अपने आपको व्यस्त रखते थे।

सन् 1988 में सबसे छोटी बहन रितु की शादी श्री राजेन्द्र कु0 राठी सुपुत्र चौ. रणधीर सिंह निवासी रोहतक से हुई। बोट क्लब पर किसान यूनियन का धरना और बाद में नारायण दत्त तिवारी, मुख्यमंत्री उ0प्र0 से किसानों की मांगों पर समझौता करने में उनकी विशेष भूमिका रही। 1989 में उन्होंने यूनियन से त्यागपत्र दे दिया ताकि सक्रिय राजनीति में भाग ले सकें। 1989 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने "भारतीय संविधान की टीका" पर उन्हें "विधि वाचस्पति" (पी–एच.डी. की मानद उपाधि) प्रदान की। 1988 में छोटी बहन की शादी के बाद पिताज़ी बिल्कुल अकेले पड़ गये। कुछ अन्य कारणों से मैंने 1989 में पत्नी तथा बच्चों को उनके पास छोड़ दिया। उससे घर की व्यवस्था सुचारू हो गयी। इन्हीं दिनों मैंने देखा कि पिताजी अपने श्रेष्ठतम मानसिक व शारीरिक क्षमता से कार्य कर रहे थे। सप्ताहान्त आप रविवार को रात में घर लौटने के समय बस/स्कूटर आदि नहीं मिलने पर दो–दो बजे तक 7–8 किमी. का रास्ता

पैदल चलकर घर पहुँच जाते थे। दो–एक घण्टे विश्राम कर प्रातः 4–5 बजे उठकर सप्ताह भर के कार्य तय करके फिर से व्यस्त हो जाते थे। कोई थकान था नींद उन्हें तंग नहीं करती थी। सामान्यतः 5–6 बजे के बीच उठना, स्वयं चाय बनाना, ठीक 6 बजे आकाशवाणी पर "सुजलाम सुफलाम" का संगीत सुनना, नित्यक्रिया से निवृत्त होकर योगाभ्यास करना फिर अपना केस का कार्य करना, 9 बजे के करीब स्नान, सन्ध्या दूध तथा ब्रेड व केले का नाश्ता करना, कोर्ट जाना, दोपहर के खाने के नाम पर फल और जूस लेना, चार बजे कोर्ट से लौटकर थोड़ी सी सब्जी और चाय लेना तथा आधे घण्टे के आराम के पश्चात पुनः मेज पर अपने केस या किताबों में खो जाना, 8 बजे भोजन करना तथा थोड़ा टहलकर 10–11 बजे तक सो जाना, प्रायः यही उनकी दिनचर्या थी। छुट्टी का ख्याल उन्हें कभी आया ही नहीं। वे अपने आपको हर समय किसी न किसी कार्य में लगा कर रखते थे। उन्हें लोगों से मिलने का बड़ा शौक रहा। इसी बीच कुछ कारणों से मैंने भी सेना से समय से करीब पाँच वर्ष पूर्व ही अवकाश ग्रहण कर लिया और पिताजी के सानिध्य में रहने लगा।

मई 1993 में पिताजी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा बने। गुरुकुल से उनका संबंध हमेशा से ही रहा। परिद्रष्टा बनने पर तो यह सम्बन्ध और भी प्रगाढ़ हो गया। उनकी मृत्यु तक यह सम्बन्ध कायम रहा।

1993 में पिताजी भारतीय जनता पार्टी के सदस्य बने और उ0प्र0 विधान सभा चुनावों में पार्टी के लिए कार्य किया। भारतीय जनता पार्टी ने उन्हें काफी सम्मान दिया। 1993 से 96 तक वे राष्ट्रीय कार्यकारिणी में विशेष आमंत्रित सदस्य रहे। 1996 में क्षेत्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पश्चिमी उ0प्र0 की क्षेत्रीय समिति का अध्यक्ष मनोनीत किया गया। 1995–96 में ही भगवान महावीर के पवित्र स्थल, जो रांची में हैं, पर चल रहे विवाद में श्वेताम्बर जैनियों के ट्रस्ट की तरफ से उन्होंने रांची उच्च न्यायालय में अत्यधिक कार्य किया। उस दौरान रांची और बम्बई के बीच उन्होंने पचासों बार यात्रा की। 1996 में जब वह केस समाप्ति की ओर था तभी विधान सभा के चुनाव थे। अक्टूबर के शुरू में ही चुनाव सम्पन्न हुए। 25 अक्टूबर, 1996 को हृदय–गति तेज होने पर उन्हें कैलाश हास्पीटल, नोएडा में भर्ती कराया गया। हमें क्या पता था कि इस भर्ती से एक घातक बिमारी पता चलेगी। विधि की विडम्बना थी कि उन्हें पौरुष ग्रन्थि का कैंसर निकला और वो भी अन्तिम अवस्था में। पिताजी का इलाज पहले टाटा, बम्बई और धर्मशिला कैंसर हास्पिटल, दिल्ली में चला। दोनों अस्पतालों के सम्मानित और अनुभवी विशेषज्ञों ने मात्र 4–6 सप्ताह के जीवन की सम्भावना व्यक्त की। पिताजी ने इस असाध्य बिमारी से जूझते हुए मृत्यु

को 10 माह तक अपने पास नहीं लगने दिया। महाप्रयाण से एक–दो दिन पूर्व उन्होंने कहा कि मेरी शक्ति समाप्त हो गयी है, लगता है कि अब चलना ही पड़ेगा। सारी जिन्दगी हम उनसे कुछ न कुछ सीखते ही रहे। मरते–मरते भी वे हमें जिन्दगी सिखा गये। बाबाजी की बिमारी तो हमने देखी थी, उनकी सेवा भी की थी किन्तु पिताजी की बिमारी बिल्कुल अलग थी। पिताजी का शरीर व शक्ति तिल–तिलकर कर होती गयी। उन्हें न जाने कितनी पीड़ा रही होगी जो उन्होंने बड़े संयम से सही। एलोपेथी पर कम विश्वास करने वाले पिता जी को इस बिमारी में बहुत सी गोलियों और कैप्सूल लेने पड़े जो उनके लिए बहुत ही कठिन कार्य था। फिर भी उन्होंने दवाईयां खायी। भोजन नियमित परहेज के आधार पर जैसा बताया गया था, वैसा ही लिया। उन्होंने जीवन में नियमितता को कभी भी नहीं त्यागा। इस दौरान भी वे कई बार गांव जाने की जिद करते थे। परन्तु चिकित्सकों की राय से हम बाध्य थे और अन्त में उनका पार्थिव शरीर ही इस यात्रा को पूरी कर सका। अपने सादे स्वभाव में इस अन्तिम यात्रा के लिए उन्होंने हमें अनेक निर्देश दिये, जिन्हें हमने पूरा करने का यथासम्भव प्रयत्न किया। अपने जीवन के अनितम दिनों में उन्हें सिर्फ एक ही चिन्ता थी कि गांव में लड़कियों का संस्थान कैसे चलेगा, उसको स्थायी रूप कैसे दिया जाये। भाई राजेन्द्र पंवार ने अपने चाचाजी के इस स्वप्न को साकार करने में स्मरणीय सहयोग किया है।

पिताजी 78 साल की अपनी जीवन यात्रा पूरी करके चले गये। प्रायः इस पर विश्वास नहीं होता। पिताजी का जीवन कर्मठता से भरा हुआ था, जिसमें आलस नाम मात्र को नहीं था। वे काम से कभी आराम नहीं करते थे। उन्होंने कभी इस बात का भान नहीं होने दिया कि वे "जीवेम् शरदः शतम्" का अनुकरण नहीं करेंगे। मृत्यु से कुछ ही दिनों पूर्व की बात है कि बस में यात्रा करते हुए किसी युवा ने उन्हें बाबा कह कर पुकार दिया। उन्होंने घर आकर मेरी पत्नी से पूछा कि क्या मैं वाकई बूढ़ा हो गया हूँ ? जवानों से ज्यादा कर्मशील और मजबूत उनकी हिम्मत देखकर हमें भी शर्म आ जाती थी। इसे देखते हुए तो लगता है कि वे समय से पहले ही चले गये। वे निश्चित ही कम से कम दस–पन्द्रह साल समाज के लिए और देने में सक्षम थे।

उनके जीवन–कृत को संक्षेप में सरलता से लेखनी द्वारा समेटा नहीं जा सकता। कदाचित् मेरी योग्यता भी उसे पूर्ण रूप से उद्धृत करने में असमर्थ है अतः ईश्वर से यह विनती करते हुए कि उन्हें अपने चरणों में शान्तिमय वास दे तथा हमें शक्ति दे ताकि हम उनके द्वारा निर्दिष्ट कार्यों को सम्पन्न कर सकें, मैं अपनी लेखनी को विराम देता हूँ।

नोएडा, गाजियाबाद

अन्तिम-विदा

स्वर्गवास के बाद हमने छोटे पुत्र और अमेरिका में उनके बड़े भाई के पुत्र को सूचना भेजी। थोड़ी देर बार ही डॉ० धर्मपाल, कुलपति आये। जस्टिस साहब के महाप्रयाण का समाचार पाते ही वे अपने आपको नहीं रोक पाये और उनकी आंखों से अश्रुधारा बह निकली। लेकिन उन्होंने धैर्य को संजोते हुए सभी को ढाढस बंधाया। परिवार बहुत व्याकुल था। जिसे भी पता लगा वह उस ओर ही दौड़ पड़ा। देखते-देखते उनके परिचितों का वहाँ एक बड़ा जन-समूह एकत्रित हो गया। जस्टिस साहब का शरीर कैलाश हास्पीटल में फ्रिज में रखा गया था। दूसरे दिन की शात तक डॉ० धर्मपाल लगातार वहीं रहे और सभी को धैर्य बंधाते रहे। सुबह आने के लिए कहकर वे शाम को चले गये और अगले दिन सुबह होती ही पहुँच गये। दूर-दूर से लोग आने लगे। दाह-संस्कार के विषय में सभी ने मिल-बैठकर निश्चय किया कि दाह-संस्कार उनके पैतृक गाँव एलम में वैदिक पद्धति से ही सम्पन्न किया जाये। जस्टिस साहब की यही इच्छा थी। गाँव में सूचना भेजी गयी। इसके उपरान्त डॉ० धर्मपाल हरिद्वार लौट गये। दोपहर बाद उनका छोटा पुत्र आ गया। रात में अमेरिका से उनके बड़े भाई का पुत्र राजेन्द्र भी आ गया। कई अन्य रिश्तेदार भी पहुँच गये। तीसरे दिन सुबह हम सभी लोग जज साहब के शरीर को कैलाश हास्पीटल से आवास पर ले आये। अनेक लोगों ने श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। लखनऊ से उनके परम मित्र जस्टिस एस. एन. सहाय भी तब तक पहुँच गये थे। इसके पश्चात उनके पार्थिव शरीर को लेकर बीस-पच्चीस कारों का काफिला ग्राम एलम की ओर चल दिया। ये काफिला लगभग ११.०० बजे एलम स्टेशन पर पहुँच गया। रेलवे स्टेशन व बस स्टैण्ड पर भी काफी संख्या में लोग वहाँ पहुँच चुके थे। सबक आंखों में आँसू थे। वहाँ से पार्थिव शरीर को लेकर विशाल जुलूस पैदल-पैदल चल दिया। पार्थिव शरीर को उनके पैतृक-निवास पर लोगों के अन्तिम दर्शनार्थ रखा गया। सभी लोगों ने उन्हें पुष्प अर्पित कर अपनी श्रद्धाञ्जलि दी। कलकत्ता से उनकी पुत्री निर्मल १.०० बजे आयी। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से एक बस तथा कुछ कारें आ पहुँची। अन्तिम यात्रा में शामिल होने के लिए डॉ० धर्मपाल के साथ विश्वविद्यालय के सभी आचार्य एवं अन्य अधिकारी तथा अनेक ब्रह्मचारी आ गये। कुलाधिपति श्री सूर्यदेव भी आ चुके थे। पुत्र-पौत्रों ने जस्टिस साहब को कन्धी दी। कन्धी देने वालों में डॉ० धर्मपाल के साथ विश्वविद्यालय के सभी आचार्य एवं अन्य अधिकारी तथा अनेक ब्रह्मचारी आ गये। कुलाधिपति श्री

सूर्यदेव भी आ चुके थे। पुत्र-पौत्रों ने जस्टिस साहब को कन्धी दी। कन्धी देने वालों में डॉ० धर्मपाल भी थे। चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था। शमशान स्थल पहुँचकर वैदिक मन्त्रों के बीच उनके पार्थिव शरीर को मुखाग्नि दी गयी और उनका शरीर पंचतत्वों में विलीन हो गया। दाह-संस्कार के पश्चात सभी लोग वापस लौट गये। तीसरे दिन अस्थि संचय हुआ। हम लोग अस्थियां लेकर हरिद्वार पहुँचे। अस्थियों को पहले गुरुकुल ले जाया गया। विश्वविद्यालय के सभी विद्वान पहले से ही सीनेट हाल पर मौजूद थे। सभी ने अस्थियों पर पुष्प अर्पित कर श्रद्धाञ्जलि दीं। इसके उपरान्त पतित पावनी गंगा के तट पर जाकर अस्थियां जल में प्रवाहित कर दी गयी। अस्थियां प्रवाहित करने के बाद गंगातट से हम लोग वापस गुरुकुल कांगड़ी पहुँचे जहाँ हमारे लिए तेरहवीं वाले दिन ग्राम एलम में लोगों का हुजूम जुड़ गया। दूर-दूर से लोग आये। दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री साहिब सिंह वर्मा भी आये। शोक-सभा हुई। नोएडा में भी एक शोक सभा हुई। वहां भी बड़ी संख्या में लोग इकट्ठा हुए। इस सभा का संचालन डॉ० ध र्मपाल ने किया।

हम मृत्यु को कैसे स्वीकार करते हैं, इससे हमारे ज्ञान, व्यक्तित्व और जीवन साधना की परीक्षा होती है। मृत्यु एक प्राकृतिक घटना है जो प्रत्येक शरीरधारी के साथ घटित्त होती है। मृत्यु को सहज-भाव से स्वीकार किया जाना चाहिए। किन्तु फिर भी मनुष्य मृत्यु से ऐसे डरते हैं जैसे बालक अंधकार में प्रवेश करने से डरते हैं। मृत्यु तो ऐसे ही है जैसे कहीं से उड़ता हुआ पक्षी एक प्रकाशपूर्ण कमरे में प्रवेश करके थोड़ी देर वहां उड़ते हुए उसमें से निकलकर फिर कहीं बाहर अंधकार में लुप्त हो जाता है। मृत्यु भी ऐसा ही क्षणभंगुर प्रतीत होता हैं ऐहिक जीवन में मनुष्य मृत्यु में विलीन होने के भय से भयभीत रहता हैं। संसार में कोई, किसी प्रकार का भय मृत्यु से बढ़कर नहीं होता। जिसने मृत्यु के भय को जीत लिया है, उसने सब भयों पर विजय प्राप्त कर ली है। जिसने मृत्यु को मित्र समझ लिया हो उसने अखिल जीवन को ही मित्र बना लिया। जीवन और मृत्यु का रहस्य समझ लेने पर मन से भय निरस्त हो जाता है। मृत्यु का सम्यक् स्मरण विवेकशील मनुष्य को पुण्य की ओर प्रवृत करता है। उसे भय-त्रस्त नहीं करता है। भय के स्थान पर उत्साह आ जाने पर मृत्यु एक महोत्सव बन जाता है। यदि स्वस्थ, सुखी जीवन-यापन करना एक कला है तो मृत्यु से सुखद आलिंगन करना भी एक कला है। वही आनन्दपूर्वक जी सकता है जिसने सुखपूर्वक मरना सीख लिया है। श्रेष्ठ सिद्धान्तों व आदर्शों पर चलते हुए जीवन को सुखमय बनाने वाला व्यक्ति ही आदर्शों के लिए मरना जानता है। आदर्शों के

लिए जीने वाले और आदर्शों के लिए मरने वाले मनुष्य की जीवन-यात्रा धन्य होती है तथा ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों के लिए मृत्यु एक महोत्सव होता है।

मोह पूर्वक वस्तुओं का अनावश्यक परिग्रहण न केवल जीवनकाल में चिन्ता एवं भय का कारण होता है अपितु मृत्यु के सन्निकट होने पर शान्तिपूर्वक प्राण छूटने में भी बाधक होता है। सर्वाधिक वस्तुओं का परिग्रह मनुष्यों के लिए विशेष दुखदायी होता हैं अकिञ्चन व्यक्ति (वस्तुओं का स्वामी होकर भी विरक्त व्यक्ति) अनन्त सुख पाता है। हम तनिक देखें और सोचें कि मित्र तथा कुटुम्बी तो श्मशान तक ही साथ देते हैं। और मृत व्यक्ति की देह को भस्मीभूत करके अपने-अपने कार्यों में संलग्न हो जाते हैं। मृत्यु होने पर धन-भूमि में गड़ा रह जाता है, पशु गोष्ठ में रह जाते हैं, नारी घर के द्वार तक जाती है, मित्र श्मशान तक जाते हैं और देह चिता में भस्म हो जाती है। जीव कर्मफल के साथ अकेला ही जाता है। इस जीवनकाल में किये हुए सत्कर्म अथवा दुष्कर्म बनकर जीवात्मा के आगामी जीवन में प्रारब्ध के रूप में उसके साथ रहते हैं।

प्राणी प्रतिदिन मृत्यु को प्राप्त होते हैं किन्तु फिर भी मनुष्य स्थिरता चाहते हैं और ऐसा अभिमान-पूर्ण आचरण करते हैं मानों उन्हें सदैव यहीं रहना हो। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या हो सकता है। अनेक सन्त शरीर के जर्जर होने पर और चिकित्सा की विफलता देखकर औषधि सेवन का त्याग कर देते हैं तथा केवल गंगाजल का पान करते-करते प्राणों का विसर्जन कर देते हैं। मरणावस्था होने पर अनेक जैन साधु सल्लेखना ग्रहण कर भोजन, औषधि, जल आदि का पूर्ण परित्याग करके मृत्यु का सहर्ष आलिंगन करते हैं। सन्तों के लिए मृत्यु एक महोत्सव है।

प्राणोत्सर्ग के समय मनुष्य को संसार के सभी विषयों से तथा मित्रगण एवं कुटुम्बीजन से मोह-नाता छोड़कर प्रभु का स्मरण, नामजप तथा ध्यान करना चाहिए। शान्त रस में निमग्न होकर शारीरिक एवं मानसिक सुख-दुख से ऊपर उठकर तथा प्रभुभाव से विभोर होकर सहर्ष मृत्यु का आलिंगन कर लेना चाहिए। सुकरात ने विषपान करते हुए मृत्यु के समय कहा "ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो" और अन्त समय तक घोर कष्ट में भी शान्त रहे। गान्धी जी ने गोली लगने पर भी "हे राम" कहा। स्वामी रामकृष्ण परमहंस तथा महर्षि रमण की मृत्यु भी कैंसर के घोर कष्ट में हुई किनतु वे शरीर की यातना को तटस्थ दृष्टि से देखते रहे और अन्त तक पूर्ण शान्त रहे। मरणासन्न होने पर मोह छोड़कर

परमात्मा के नाम का सहारा लेना ही सर्वाधिक शान्ति-प्रदायक होता है।

श्रद्धाञ्जलि देते हुए डॉ० धर्मपाल ने कहा "मृत्यु एक भयानक विजेता शत्रु के रूप में आती है चूँकि हम प्रिय अतिथि की भाँति इसका सत्कार एवं स्वागत करने की कला को भूल गये हैं।"

किसी मनुष्य को मृत्यु से डरने की आवश्यकता नहीं है। उसे इस बात से अवश्य डरना चाहिये कि कहीं वह अपनी सबसे बड़ी शक्ति को जाने बिना ही मर जाये। जो मनुष्य दूसरों के लिए अपना जीवन उत्सर्ग करने की प्रबल इच्छा शक्ति अपनी सामर्थ्य के अनुरूप उपलब्ध कर लेता है तथा जिसके मन में जीवन के प्रति गहरी आस्था होती है उसके हृदय से मृत्यु का भय निकल जाता है तथा जीवन में सरसता आ जाती है। उपलब्धियों की स्मृति सन्निकट आने पर संतोष प्रदान करती है। मृत्यु समय के सुयश को नहीं खा सकती, उसकी उपलब्धियों को धूमिल कर सकती। सत्य तो यह है कि संसार में मिलना-बिछुड़ना इत्यादि सभी कर्मवश ही होते हैं।

इन्द्रपाल सिंह
एलम (मुजफ्फरनगर)

दिवङ्गतो न्यायाधीशो महावीर सिंहः काले काले सुजनानां संस्मरणीय एव।।

प्रो. वेदप्रकाश शास्त्री
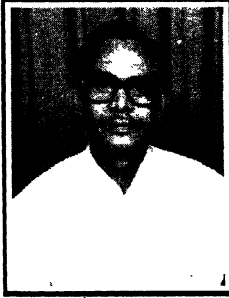
संसारे जन्मावसरे समप्रवृत्तयो भवन्ति। यथा यथा ते वृद्धिमुपयन्ति तथा तथा मातृपितृसंस्कारवशात् स्वसंस्कार वशात् परिकरसन्निधि ।वशाच्च प्रवृत्तिभिन्नतोद्भवति। केचन जना न केवलं मानवगुणानपितु देवगुणानपि कामयन्ते केचन जना उत्तरोत्तरं गुणैर्विहीना सन्तो निम्नतां प्रयान्ति। केचन शरीरं यावत् जीवितं वहन्ति केचन तु गुणवत्तया शरीरं यावत् प्रतिष्ठां लभन्त एव परं नष्टेऽपि भौतिके शरीरे स्वयशःशरीरेण ते लोके चिरं जीवन्ति, तेषां स्मरणमात्रेणानन्दमनुभवन्तो जनाः पुलकिता भवन्ति। स्वनामधन्यो न्यायाधीशो श्रीमहावीर सिंहो दयावतां धर्मवतां पुण्यवतां दिव्यगुणगणान्वितानां यशोवतां विदुषां प्रथम आसीत्। अद्य तेषां पार्थिवं शरीरं नावतरतिदृक्पथं परं तेषां गुणा अद्यापि प्रायशः सामाजिक क्षेत्रे नयक्षेत्रे न्यायक्षेत्रे सेवाक्षेत्रे शिक्षाक्षेत्रे च स्मर्यन्ते समुद्गीयन्ते च जनैः।

न्यायमूर्त्तीनां स्वाध्यायप्रियता-स्वाध्यायस्तेषां जीवनस्य प्रथममङ्गमासीत्। ते केवलं विधि शास्त्रस्य ग्रन्थानेव नापितु धर्मशास्त्रास्यर्थशास्त्रस्य समाजशास्त्रस्य राजनीतिशास्त्रस्य च ग्रन्थान् पठन्ति स्म। गम्भीराध्ययनान्तरं बुद्धिमतां कश्चिद् विशेषः संजायते प्रतिभोन्मेषः। ये कविबुद्धयो भवन्ति ते स्वकं प्रातिभं शब्दज्योतिषा प्रकाशयन्ति नाशयन्ति चाज्ञानतमः। न्यायाधीशेन श्रीमता महावीरसिंहेन विधिपरम्परां निष्कल्मषां कर्त्तुं न्यायविदां विशेषावबोध ाय केचन ग्रन्था प्रणीताः। येषां विद्वद्भिः सुतरामभिशंसा कृता।

न्यायमूर्तीनां जीवनेधर्मप्रवेश :- न्यायाधीशा महावीर सिंहा धर्ममूर्तय आसन्। तेषामखिलमपिकर्मजातं धर्मप्रधानमेव। धार्मिकं पुरुषं कश्चिदपि लोभेन भयेन कामेनार्थेन वा स्ववृत्तात स्खलयितुं न क्षमते। धर्मानुष्ठानसम्पादनासुप्तमानसानां निर्मलचरितानां पवित्रंवृत्तं मलीमसं कर्त्तुं कृतप्रयत्ना अपि जनाः साफल्यं नाधिजग्मुः। अस्मिन् विकरालेकाले कण्टककीलिते दुर्गमेऽपिमार्गे न्यायमूर्तिना विपज्जातं कष्टमपाकर्त्तुं धर्मे मित्रभावः प्रकल्पितः।

अग्निसोमयोः समन्वय :- न्यायाधीश महावीर सिंहस्य जीवनमग्निषोमा त्कमासीत्। यथा अग्निः प्रचण्डेन तेजसा दोषान् दग्धुं प्रभवति सोमश्च शीतलेन संस्पर्शेन तापं परिहरति

तथैव महावीर सिंहे दुर्जातविनाश अग्निरिव प्रचण्ड:, मित्रप्रसङ्गे चन्द्र इव शीतल: । योऽपि परिजन: स्वमनासि मित्रभावं निवेश्य महावीरसिंहमुपयाति स्म स पूर्णाश एव ततो निवर्तते स्म ।

न्यायमूर्तेरतिसूक्ष्मा दृष्टि : निगद्यते यन्नेत्रे स्थूले भवत: परं तृतीयं नेत्रमतीवसूक्ष्मं भवति। मनुष्या द्वाभ्यां स्थूलाभ्यां नेत्राभ्यां स्थूलं जगत्पश्यन्ति। तृतीयं नेत्रं ज्ञाननेत्रमिति प्रोच्यते ज्ञाननेत्रेणैव जगत: स्थूलतां पश्यन्नपि सूक्ष्मतां पश्यति। यस्य दृष्टिर्यावती सूक्ष्मा भवति तद्दर्शनशक्तिरपि तावती सूक्ष्मैव। सामान्यजना: केवलं स्थूलेनेत्रे लब्ध्वा नेत्रवन्तमात्मानं मन्यन्ते। परं ये महान्तो जनास्ते तु ज्ञानचक्षुषा जगतो बाह्यं रूपं आन्तरिकं रूपं प्रश्यन्ति। न्यायमूर्तिना निखिलं जगत् यथा स्थूलदृष्ट्या दृष्टं तथैव सूक्ष्मदृष्ट्यापि दृष्टम्। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य शिष्ट परिषदा सर्वोच्चेन परिद्रष्ट्रपदेन सम्मानिता:। न्यायमूर्तिना परिद्रष्ट्रकाले गुरुकुलस्य महत्सूक्ष्ममध्ययनमकारि। अकाले ते बन्धुबान्धवान् गुरुकुलम् आर्यजगच्च शोकसागरे निपात्य दिवंगता:।

न्याय मूर्तीनां निखिलमपि पवित्रमासीत् , तेषा जीवनं वेदमन्त्रभासा संस्कृतश्लोककान्त्या च प्रकाशते।

सोमा: पवन्त इन्दवो अस्मभ्यं गातुवित्तमा: ।
मित्रा: स्वाना अरेपस: स्वाध्य: स्वविर्द: ।। (सामवेद)

शास्त्रेषुनिष्ठा सहजश्च बोध: प्रागल्भ्यमस्तगुणा च वाणी,
कालानुरोध: प्रतिभानवत्वमेते गुणा: कामदुघा: क्रियासु ।। (कालिदास:)

यश:शरीरेण चिरं स्थास्यन्ति जगत्यां ।
न्यायमूर्तय: श्रीमहावीर सिंहा: ।। (वेदप्रकाश:)

आचार्योकुलपतिश्च
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य

न्यायमूर्तयः श्री महावीर सिंहा अद्यापि सतां हृदिस्थिता :

डॉ0 धर्मपालः
कुलपतिः
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य

चित्रकारस्य विधातुः सृष्टिरियं विचित्रा। अत्र दिने दिने जना यथा जायन्ते तथैव म्रियन्ते। परं केचन जना सकृज्जन्म लब्ध्वा न कदापि मृता भवन्ति ते तु शरीरं त्यक्त्वा यशसा लोके सर्वदैव तिष्ठन्ति। स्वनामधन्या न्यायमूर्तयः श्रीमह्मवीर सिंहाः सम्प्रति देहेन जगति न सन्ति परं अक्षीयमाणेन यशः शरीरेण ते सतां सुहृदां न्यायकृतां च मनसि रमन्ते। उत्तरप्रदेशस्थ मुजफ्फरनगर जनपदान्तर्गतं एलम पद वाच्यं ग्रामपदं न्यायमूर्तिना स्वजन्मना समलंकृतम्। तत्र ग्रामे जनसमूहस्य मान्यो विशिष्टो वरिष्ठश्चौधरी हरनाम सिंहो महावीर सिंह वात्सल्यरसवर्षिणि स्वक्रोडे संस्थाप्य स्वपौत्र स्पर्शसुखं चिरमवाप तथैव चौ० जीत सिंहो महावीरं स्वपुत्रं महावीरमिव मत्वा मुहुर्मुहुराश्लिष्य सुतस्पर्शसुखं ततान। पितुर्जीतसिंहस्य प्रयत्नातिशयेन परिवर्ध्यमानोऽयं पुत्रो महावीरसिंहो देहेन धिया मनसा वाचा च पूर्णतां प्रपेदे। एलमग्रामे प्रारम्भिक शिक्षामवाप्य आगरास्थिते छात्रावासीय विद्यालये माध्यमिक शिक्षां परिपूर्य इलाहाबादविश्वविद्यालयतः स्नातकोपाधिर्गृहीतः। अध्यापनाभिलाषोदयात् श्री महावीर सिंहैः वड़ौतस्थ जाटमहाविद्यालये अर्थशास्त्रमध्यापयितुं प्रवक्तृपदं लब्धम् तत्र "अधीतमध्यापितमर्जितंयशः" इमामुक्तिं सफलां विधाय न्यायपालिकापङ्कप्रक्षालनाय विधि परीक्षामुत्तीर्य अनेकेसु नगरेषु न्यायाधीश पदे कार्यं कृत्वा बदायूं नगरे जिला जज पदं संप्राप्तम्। अग्रतः प्रयान्तिमहान्तः इत्यनुसारं लक्ष्मणपुरे उच्चन्यायालये न्यायाधीशपदमपि प्राप्तम्। न्यायपद्धतिमनुसरन् क्वचिदपि न्यायमूर्तिर्महावीरसिंहः सर्वजनप्रशंसनीयां, कर्मकुशलतां न्यायपालकतां चरित्रनिर्मलतां च न तत्याज अमीषां विचित्रया चरित्रचर्चया धर्मपत्न्या होश्यारि देव्या जीवनं सफलं प्राभूत्। भूपेन्द्र कुमार योगेन्द्र कुमारौ द्वौ पुत्रौ स्वपितुर्यशश्चन्द्रज्योत्स्नया स्वजीवनं धवलयतः।

ये जनाः औदार्यदाक्षिण्य वैदुष्य सौमनस्यसारल्य निर्मात्सर्य आदि गुणसम्पन्ना भवन्ति ते निर्मलचेतसां सुधियां प्रज्ञावतां वरेण्याः। सत्ये सत्यं प्रतिष्ठति ये खलु सत्यवाचस्ते सत्यवाग्भिः सदा वन्द्यन्ते यथा-

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूष पूर्णास्त्रिभुवनमुपकार श्रेणिभिः प्रीणयन्तः
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।।

न्यायमूर्ति भिः महावीर सिंहै रुपरेषां न्यायाधीशानां मानवन्यायसत्यान्वेषणाय

विधि प्रक्रियां निर्मलेन मनसा ये ग्रन्था: प्रणीतास्ते विधि परम्परायां महान्तं गरिमाणं गणयन्ति। लोके प्रतिष्ठाकरं कर्मजातं विज्ञाय विधाय च सर्वेजना: कामयन्ते यश:, परं केचन विरला एव भवन्ति यशोभाज:। कश्चित् प्रशस्येन कर्मणा स्वजनान् प्रीणयति कश्चित् मित्र जनान् प्रीणयति कश्चित्तु प्रियाप्रिययोहृदये समानरूपेण राजमानो निखिलं जगत् प्रीणयति। न्यायमूर्तयो महावीर सिंहा सम्प्रति स्वकेन ऋजुना पवित्राचारेण, निश्छलेन चेतसा, मुदितेन मनसा, परोपकारमच्या वृत्त्या च समेषां सचेतसां हृदये प्रतिष्ठापदं प्रसारयन्ति। तद्विषये पद्यमिदं निजामर्थवत्तां प्रकटयति-

एकस्य तिष्ठति नरस्य गृहे सुकीर्तिरन्यस्य गच्छति सुहृद्भवनानि यावत्।
न्यस्याविदग्धवदनेषु पदानिशश्वत्कस्यापि सञ्चरति विश्वकुतूहलीव।।

न्यायमूर्तीनां महावीरसिंहानां जीवने मूर्तिमती दया दृश्यतेस्म, स्वाध्यातिरेको नितरां लसतिस्म, लेखनकला सकलान् गुणान् आकलयतिस्म निरभिमानता सदा हसतिस्म, अपरिग्रहभावना विभाति स्म, साहसधैर्ययोरासीत् संगम:, आत्मभावश्चाभिवर्धते स्म। सकल गुणाधिष्ठानं महान्तं जनमुद्वीक्ष्य दिवस्पुत्राणां भवत्येष वागुन्मेष: ।

दिवमप्युपयातानामाकल्पमनल्पगुणगणा येषाम्।
रमयन्ति जगन्ति गिर: कथमिह कवयो न ते वन्द्या:।।

यैर्निजं जीवनं राष्ट्रहिते निहितं न्यायपालिका चिरं संरक्षिता लेखनकर्म-नैपुण्यं प्रकटितं, पूर्वप्रधानमन्त्री चौधरी चरणसिंहा देशानुसारं अखिलभारतीय किसान यूनियनस्य पदप्रतिष्ठा संप्राप्ता सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभायां न्यायसभाया अध्यक्ष पदं स्वीकृत्य समाजसेवा कृता, तानेवंविधान् दिवंगतान् स्मरणीयगुणान् स्वापरजनहृदिकृतपदान्, न्यायमूर्तिप्रवरान् श्री महावीर सिंहान् नतेन शिरसा श्रद्धाञ्जलिं प्रयच्छामि स्मरामि च-

गुरुकुलस्य ये परिद्रष्टार आसन् गुणैर्विशेषैगुणवतां च मान्या:।
न्यायमूर्तय: श्री महावीर सिंहा अद्यापि लोके यशसा चकासति।।

जस्टिस महावीर सिंह : एक अद्भुत व्यक्तित्त्व

लेखक - डॉ जयदेव वेदालंकार
प्राच्यविद्या संकायाध्यक्ष

नीतिकारों की मान्यता है कि महापुरुषों का चरित्र बड़ा अद्भुत होता है। वे बचपन से ही एक विचित्र व्यक्तित्व के धनी होते हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण आँचल में जन्मे महावीर सिंह, सामान्य किसान क्षत्रिय परिवार के बालक थे। यह बालक बचपन से ही धैर्यवान् तथा परिवार के वृद्धों की सेवा करने में ही आनन्द का अनुभव करता था। वे बचपन की अपनी एक घटना प्रायः सुनाया करते थे मेरे एक ताऊजी हुक्का बहुत पीते थे। इसलिये रात को परिवार के अन्य बच्चे उन के साथ समीप में न सोकर दूर सोते थे। मैं उन के पास चारपाई डालकर सोता था। रातभर में वे लगभग छः या सात बार हुक्का पीते थे

यह क्रम कई वर्ष तक चलता रहा। एक दिन वे बीमार हो गये। रात के दो बजे उन को खांसी उठी। मैं जगा और तुरन्त हुक्का भर कर ले आया। उन्होंने हुक्का पीया। मुझे संकेत से अपने पास बुलाया तुम कौन हो? इस परिवार में कहां से उत्पन्न हो गये हो? रात दिन मेरी सेवा करते रहते हो। आगे बोले बेटे मैं यह तो नहीं जानता बड़ा पद क्या होता है? परन्तु मैं आज यह कहता हूँ तुम एक दिन महान् व्यक्ति बनोगे। इस परिवार का तथा गाँव का नाम रोशन करोगे। यह कह कर वे स्वर्ग सिधार गये।

जब जस्टिस महावीर सिंह अपने जीवन की इस घटना को सुनाते थे तब उन का गला रुध जाता था। वे कहा करते थे मैं ज़ो कुछ हूँ अपने ताऊ के आशीर्वाद के कारण हूँ। उन की यह विनम्रता उन के निश्छल एवं निर्मल हृदय को द्योतित करती है। न्याय पालिका में उन्होंने कई पदों पर कार्य किया। जहाँ भी वे न्यायाधीश बन जाते रहे वहीं पर उनकी न्यायप्रियता की अनेक कहानियाँ प्रसिद्व हैं। उनका जाति धर्म के प्रति व्यामोह नहीं था वादी और प्रतिवादी किसी भी जाति या धर्म का हो, उस का पक्ष नहीं लेते थे अपितु जो सत्य या न्याय होता था, उस के अनुसार ही न्याय या फैसला सुनाते थे।

यद्यपि स्व० जस्टिस महावीर कट्टर आर्य समाजी थे पक्के दयानन्दी माने जाते थें अपने परिश्रम लग्न और निष्पक्षता के कारण उन को आर्य समाज की सर्वोच्च सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की न्याय आर्य सभा के सम्मानित अध्यक्ष पद पर अलंकृत किया गया। यहाँ पाठकों को यह बताना आवश्यक है कि उन का जन्म जाट क्षत्रिय परिवार में हुआ था। न्याय-आर्यसभा के अध्यक्ष पद पर पहुँचना ही उन के महान् चरित्र को ज्ञापित करता है। उन के समय में अनेक आर्य समाजों एवं आर्य प्रतिनिधि सभाओं के विवाद उन के समक्ष आये। उन्होंने हमेशा ''पानी का पानी'' ''दूध का दूध'' की कहावत के अनुसार उन पर अपना निर्णय दिया। उनके निर्णय पर कभी भी पक्षपात का आरोप नहीं लगां एक बार उन के समक्ष आर्य प्रतिनिधि पंजाब का विवाद, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने प्रस्तुत किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में दो दल बन गये। एक दल की ओर आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के नेतागण थे। वे सभी जस्टिस साहब की जाति के भी हैं। उन की ही जाति के तथा रिश्तेदारों ने दबाव डाला कि अमुक दल को वास्तविक आर्य प्रतिनिधि सभा घोषित किया जाय। उन्होंने विवाद को विस्तारपूर्वक सुना। दोनों पक्षों की दलीलें सुनने के पश्चात् उस दल के चुनाव को वैध घोषित किया, जिसको सभी पराजित करने को कह रहे थे। उन के इस निर्णय के बाद स्व० श्री वीरेन्द्र जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि पंजाब ने अपने साप्ताहिक पत्र आर्य मर्यादा में सम्पादकीय लिखते हुये कहा था कि आज तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली की न्याय आर्य सभा का अध्यक्ष इतना उच्च कोटि का नहीं रहा है जितने उच्च कोटि के धनी तथा महापुरुष और निष्पक्ष प्रचेता जस्टिस महावीर सिंह न्यायमूर्ति हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति के चयन के अवसर पर उन के घर अनेक बार जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन के सादा जीवन को देख कर ऐसी अनुभूति होती थी कि जैसे भारत के गुप्तकालीन प्रधान मन्त्री चाणक्य हों। जब किसी ने चाणक्य का पता जानना चाहा था तो उत्तर मे बतलाया था कि जहां पर प्रतिदिन यज्ञ करने के लिये खपरेलों वाली कुटिया में समिधा तथा उपलें सूख रहे हों यज्ञ के धुएँ से नीचे की छत काली पड़ गई हो।

जब जब मैं उन के निवास स्थान पर गया तो इलाहाबाद उच्च न्यायालय का वह जस्टिस खूंटीदार खड़ाऊं पहन कर अपने बरामदे में भ्रमण कर रहा होता

था। जैसे कोई सन्त अपनी कुटिया में टहल रहा हो। कुलपति चयन की प्रक्रिया में भी उनका व्यक्तित्त्व सामान्य व्यक्ति से ऊपर उठा हुआ था। उनसे जौलाई १९९३ में कुलपति चयन के पश्चात् जब मैं मिलने गया तो उन्होंने कहा मेरे लिये हरिद्वार से एक चीज ला सकते हो। मैंने कहा बतलाइये क्या लाना है? उन्होंने कहा मेरे लिये खूंटीदार खड़ाऊँ लाना। मेरी खड़ाऊं पुरानी हो गई है। मैं उस समय स्तब्ध था। ऐसे ही यदि महान चरित्रवान् विश्वविद्यालयों के कुलपति एवं आचार्यगण हो जायें तो देश का राष्ट्रपति महाराजा अश्वपति की तरह कह सकता है कि हे ऋषि प्रवर मेरे राज्य में ऐसा परिवार नहीं है जिसमें प्रतिदिन यज्ञ न होता हो। इस राज्य में कभी चोरी नहीं होती है। तथा यहां पर कोई मदिरा पान नहीं करता। इस राज्य में दुराचार भी नहीं होता है।

आज के न्यायालयों के प्रति जनमानस की यह अवधारणा है कि वहाँ ईट भी रिश्वत मांगती है,। यदि जस्टिस महावीर सिंह जी जैसे न्यायाधीश हों तो देश में न्यायपालिका का सम्मान होने लगेगा। आपने भारतीय संविधान की हिन्दी भाषा टीका की है। उसकी अनेक धाराओं को विस्तारपूर्वक समझाया भी है।

वास्तव में श्री जस्टिस महावीर सिंह जी एक व्यक्ति नहीं अपितु एक संस्था थे।

जयदेव वेदालंकार
डीन, प्राच्य विद्या संकाय

कौटिल्य अर्थशास्त्र में वर्णित न्याय-व्यवस्था

डा० देवेन्द्र कुमार गुप्ता

मनुष्य के आचरण के साधिकार निर्धारित नियमों को न्याय की संज्ञा दी जा सकती है अर्थात् वे नियम जिनका पालन अनिवार्य हो और जिनका उल्लंघन किसी न किसी रूप में दण्डनीय हो। मानव आचरण के इसी नियमन और संयोजन के आधार को प्राचीन भारत में न्याय की संज्ञा दी गई थी। वास्तव में न्याय व्यवस्था का इतिहास उन नियमों और विधि संस्थाओं के विकास का इतिहास है जो किसी समाज द्वारा नवीन विचारों, परिस्थितियों और सम्बन्धों को आत्मसात् करते हुए अग्रसर होता है। अत: न्याय व्यवस्था के द्वारा समय २ पर स्थापित नियमों और औचित्यपूर्ण सामाजिक सम्बन्धों को सथायित्व व अनौचित्य पूर्ण सम्बन्धों पर प्रतिबन्ध लगाने में सहायता मिलती है। किसी भी सभ्यता के विकास क्रम अर्थात् उस सभ्यता के सामाजिक जीवन का, असभ्यता से सभ्यता व अव्यवस्था से व्यवस्था की ओर अग्रसर होना किसी सीमा तक उस समाज की न्याय व्यवस्था का ही परिणाम होता है।

मौर्य काल में न्याय व्यवस्था का स्वरूप क्या था ? इस विषय में विस्तृत जानकारी हमें कौटिल्य अर्थशास्त्र के माध्यम से प्राप्त होती है। इस काल में अनेकविध न्यायालयों की सत्ता थी। सबसे छोटे न्यायालय ग्रामों के थे, जहां ग्रामिक ग्राम के वृद्धों की सहायता से न्याय कार्य का सम्पादन करता था। वह अपराधियों को दण्ड देता था और उनसे जुर्माना भी वसूल करता था।[१] इसके ऊपर संग्रहण के, फिर द्रोणमुख के और फिर जनपदीय न्यायालय होते थे।[२] इनके ऊपर पाटलिपुत्र में विद्यमान धर्मस्थीय और कंटकशोधन नामक केन्द्रीय न्यायालय थे। सबसे ऊपर राजा का न्यायालय होता था जो अन्य न्यायधिशों की सहायता से किसी भी मामले का अन्तिम निर्णय करने का अधिकार रखता था। ग्राम संघ और राजा के न्यायालय के अतिरिक्त अन्य सब न्यायालय दो भागों में विभाजित होते थे, एक-धर्मस्थीय और दूसरा कंटकशोधन। धर्मस्थीय न्यायालयों के न्यायधीश धर्मस्थ[३] या व्यावहारिक और कंटकशोधन न्यायालयों के न्यायधीश प्रदेष्टा कहलाते थे।[४] ये न्यायधीश

१- कौटिल्य अर्थशास्त्र, ३/१०,

२- कौटिल्य अर्थशास्त्र, ३/१, "धर्मस्थास्त्रयस्त्रयोऽमात्या जनपदसन्धिसंग्रहणद्रोणमुखस्थानीयेषु व्यावहारिकानर्थान् कुर्युः।।"

३- वही, ३/१,

४- वही, ४/१, "प्रदेष्टारस्त्रयस्त्रयो वाऽमात्या कण्टकशोधनं कुर्युः।"

केवल अकेले कार्य नहीं करते थे, अपितु दोनों प्रकार के न्यायालयों में तीन-२ धर्मस्थ और प्रदेष्टा न्यायकार्य का सम्पादन करते थे।[५] जैसा की वर्तमान समय में भी न्यायालयों में प्राय: दो या तीन या अधिक न्यायधीश बेंच के रूप में बैठकर कार्य करते हैं। ठीक इसी प्रकार की न्याय-व्यवस्था मौर्य काल में भी थी।

धर्मस्थीय और कंटकशोधन न्यायालयों में किन-२ विषयों से सम्बन्ध रखने वाले वाद न्याय के लिए प्रसतुत किए जाते थे, उनमें किन कानूनों के अनुसार फैसले दिये जाते थे और न्याय कार्य करते समय किस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता था ? इन विषयों पर भी कौटिल्य अर्थशास्त्र से विशद् प्रकाश पड़ता है। धर्मस्थीय और कंटकशोधन न्यायालयों में क्या अन्तर था ? इसका स्पष्ट रूप से ज्ञान तो हमें उन वादों के अनुशीलन से प्राप्त होगा, जो इन न्यायालयों में निर्णय के लिए प्रसतुत किये जाते थे। परन्तु स्थूल रूप से हम कह सकते हैं कि व्यक्तियों के पारस्परिक विवाद धर्मस्थीय न्यायालयों में और व्यक्तियों तथा राज्य के वाद कंटकशोधन न्यायालयों में प्रसतुत किए जाते थे। आधुनिक रूप में हम इन्हें 'दीवानी' (Civil) और फौजदारी (Criminal) न्यायालय भी कह सकते हैं।

धर्मस्थीय न्यायालय - कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार धर्मस्थीय न्यायालय में निम्नलिखित मामले पेश होते थे- दो व्यक्तियों या व्यक्ति समूहों के आपस के व्यवहार के मामले[६], आपस में जो समय (कंट्रैक्ट) हुआ हो, उसके मामले[७], स्वामी और भृत्य के झगड़े[८], दासों के झगड़े[९] ऋण को चुकाने के मामले[१०], धन को अमानत पर रखने से पैदा हुए झगड़े[११], क्रय-विक्रय सम्बन्धी मामले[१२], डाका, चोरी या लूट के मुकदमें[१३], किसी पर हमला करने के मामले[१४], गाली, कुच्चन या मानहानि के मामले[१५], जुएं सम्बन्धी झगड़े[१६], मिल्कियत के बिना ही किसी सम्पत्ति को बेच देना, मिल्कियत-सम्बन्धी झगड़े[१७], सीमा सम्बन्धी झगड़े[१८], इमारतों को बनाने के कारण उत्पन्न मामले[१९], चरागाहों, खेतों और मार्गों को क्षति पहुँचाने के मामले[२०], पति-पत्नी सम्बन्धी मुकदमें[२१], स्त्रीधन सम्बन्धी विवाद[२२], सम्पत्ति के बंटवारे और उत्तराधिकार सम्बन्धी झगड़े[२३], सहयोग, कम्पनी और साझे के मामले[२४], न्यायालय में

५- कौटिल्य अर्थशास्त्र, ३/१, ४/१,
६- वही, ३/२, 'व्यवहार स्थापना'
७- वही, ३/१०, 'समयस्यानपाकर्म'
८- वही, ३/१२, 'स्वाम्यधिकार: भृतकाधिवार:'
९- वही, ३/१३, 'दासकल्प:'
१०- वही, ३/११, 'ऋणादानम्'
११- वही, १/१२, 'औपनिधिकम्'
१२- वही, ३/१५, 'विक्रीतक्रीतानुशय:'
१३- वही, ३/१७, 'साहसम्'
१४- वही, ३/१९ 'दण्डपारुष्यम्'
१५- वही, ३/१८ 'वाक्पारूष्यम'
१६- वही, ३/२० 'द्यूतसमाह्वयम्'
१७- वही, ३/१६, "स्वस्वामिसम्बन्ध"
१८- वही, ३/८, "सीमा विवाद"
१९- वही ३/८, "गृह्वास्तुकम्"
२०- वही ३/८, "विवीतक्षेत्रपथहिंसा"
२१- वही ३/२, "विवाह धर्म:"
२२- वही ३/२, "स्त्रीधनकल्प:"
२३- वही, ३/३, "दायविभाग:, दायक्रम, अंशविभाग: "
२४- वही, ३/१४, "सम्भूयसमुत्थानम्"

स्वीकृत निर्णय विधि सम्बन्धी विवाद[२५], और विविध मामले[२६] आदि।

धर्मस्थों (धर्मस्थीय न्यायालयों के न्यायधीशों) को कतिपय अन्य कार्य भी करने पड़ते थे। वे देव, ब्राह्मण, तपस्वी, स्त्री, बाल, वृद्ध, रोगी तथा अनाथ आदि के हितों को दृष्टि में रखते थे। चाहे ये मामले उनके न्यायालय में वाद (मुकदमें) के रूप में प्रस्तुत न भी किये गये हो। विद्या, बुद्धि औ पौरुष आदि की दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति का यथोचित सम्मान करना भी धर्मस्थों का कार्य था। धर्मस्थों के लिए कौटिल्य का यह कथन कि धर्मस्थों की सबके प्रति समदृष्टि होनी चाहिए, सबका विश्वास उन्हें प्राप्त होना चाहिए, जनता में वे लोकप्रिय होने चाहिए और बिना किसी छल-कपट के उन्हें अपने कार्यों का सम्पादन करना चाहिए, एक आदर्श न्याय व्यवस्था का द्योतक है।

कंटकशोधन न्यायालय- कंटकशोधन न्यायालयों में निम्नलिखित मामले पेश होते थे- शिल्पियों और कारीगरों की रक्षा[२७], व्यापारियों की रक्षा तथा उनसे दूसरों की रक्षा[२८], राष्ट्रीय व सार्वजनिक आपत्तियों के निराकरण सम्बन्धी मामले[२९], नियम विरूद्ध उपायों से आजीविका चलाने वाले लोगों की गिरफ्तारी[३०], अपने गुप्तचरों द्वारा अपराधियों को पकड़ना[३१], सन्देह होने पर या वस्तुतः अपराध करने पर गिरफ्तारी[३२], मृतदेह की परीक्षा कर मृत्यु के कारण का पता लगाना[३३], अपराध का पता करने के लिए विविध भांति के प्रश्नों का पूछना तथा शारीरिक कष्टों का प्रयोग[३४], सरकार के सम्पूर्ण विभागों की रक्षा[३५], अंग काटने की सजा मिलने पर उसके बदले में जुर्माना देने के लिए आवेदन पत्र[३६], शारीरिक कष्ट के साथ या उसके बिना मृत्युदण्ड देने का निर्णय[३७], कन्या के साथ बलात्कार[३८] और न्याय का उल्लंघन करने पर दण्ड देना।[३९]

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि धर्मस्थीय न्यायालयों में व्यक्तियों के आपस के मुकदमें पेश होते थे। जबकि इसके विपरित कंटकशोधन न्यायालयों में वे मुकदमें उपस्थित किए जाते थे, जिनका सम्बन्ध राज्य से होता था। कंटकशोधन का अभिप्राय ही यह है कि राज्य के कंटकों (काटों) को दूर करना।

२५- कौटिल्य अर्थशास्त्र, ३/१, "विवादपदनिबन्धः"
२६- वही, ३/२०, "प्रकीर्णकानि"
२७- वही, ४/१, "कारूकरक्षणम्"
२८- वही, ४/२, "वैदेहक रक्षणम्"
२९- वही, ४/३, "उपनिपात प्रतीकारः"
३०- वही, ४/४, "गूढ़ाजीविनां रक्षा"
३१- वही, ४/५, "सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनम्"
३२- वही, ४/६, "शङ्कारूपकर्माभिग्रहः"
३३- वही, ४/७, "अशुमृतक परीक्षा"
३४- वही, ४/८, "वाक्यकर्मानुयोगः"
३५- वही, ४/९, "सर्वाधिकरण रक्षणम्"
३६- वही, ...
३७- , ४/११, "शुद्धश्चित्रश्चि दण्डकल्पः"
३८- वही, ४/१२, "कन्याप्रकम्"
३९- वही, ४/३, "अतिचारदण्ड"

न्यायालयों में किस कानून के अनुसार न्याय किया जाता था, इस विषय पर भी कौटिल्य अर्थशास्त्र से विस्तृत प्रकाश पड़ता है।[४०] कौटिल्य के अनुसार कानून के चार अंग थे- यथा- धर्म, व्यवहार, चरित्र और राजशासन। इनका अभिप्राय स्पष्ट करते हुए कौटिल्य ने लिखा है कि 'धर्म' का अधार सत्य है, व्यवहार साक्षियों पर आश्रित होता है, मनुष्यों के परम्परागत रुप से चले आ रहे नियम 'चरित्र' कहलाते है और राजा द्वारा प्रचारित आज्ञाओं को 'राजशासन' या 'शासन' कहा जाता है।[४१] जिसे आधुनिक समय में औचित्य या इक्विटी(**Eqity**) कहते है, उसी को कौटिल्य ने धर्म कहा है। स्वाभाविक रुप से इस प्रकार का कानून सत्य पर आश्रित होता है। औचित्य का विचार प्राय: सभी जन-समुदायों में विद्यमान रहता है और अनेक विवादग्रस्त विषयों का निणर्य इसी के अनुसार किया जाता है। विशेषतया उस दशा में जब विषय पर कोई स्पष्ट कानून विद्यमान हो। दो व्यक्ति या व्यक्ति समूह परस्पर मिलकर पारस्परिक समझौते द्वारा जो तय करते थे उसे 'व्यवहार' कहते थे। इस व्यवहार का निर्णय साक्षियों के आधार पर ही होता था। पर यदि कतिपय व्यक्ति कोई ऐसा व्यवहार पारस्परिक समझौत द्वारा तय करते थे, जो धर्म विरूद्व होता था, तो उसे स्वीकार्य नहीं समझा जाता था।४२ जिसे आजकल परम्परागत कानून कहते है (**Customarg Law**) उसी को कौटिल्य ने 'चरित्र' कहा है। उस समय विविध जातियों, जनपदों और श्रेणियों आदि में परम्परागत कानूनों की सत्ता थी जिसे प्राचीन काल के न्यायालयों में मान्य समझा जाता था। राजा की ओर से जो आज्ञाएं और आदेश जारी किये जाते थे, उन्हें 'शासन' कहते थे। जब कोई मामला न्यायालय के सम्मुख उपस्थित होता था तो उसका निर्णय इन्हीं चार प्रकार के कानूनों के आधार पर ही किया जाता था।

यदि मुकद्में के दौरान यह अनुभव किया जाता था कि धर्म, व्यवहार, चरित्र और शासन में परस्पर विरोध है तो पश्चिम को पूर्व का बाधक माना जाता था।[४३]

इसका अभिप्राय स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'शासन' (राजकीय आदेश) का न्यायालय की दृष्टि में सर्वाधिक महत्व था। यदि राजा की ओर से कोई आज्ञा प्रचारित की

४०- कौटिल्य अर्थशास्त्र, ४/१-१३,

४१- वही, ३/१, "धर्मश्चव्यवहारश्च चरित्रं राजशासनम्
अत्र सत्यस्थितो धर्मोव्यवहारस्तु साक्षिषु
चरित्रं संग्रहे पुंसां राज्ञामाज्ञा तु शासनम्"

४२- वही, ३/१, "संस्थया धर्मशास्त्रेणशास्त्रं वा व्यवहारिकम्।
यस्मिन्नर्थे विरूद्धयेत धर्मेणार्थं विनिश्चयेत्"

४३- वही, ३/१, "धर्मश्च व्यवहारश्च चरित्रं राजशासनम्।
विवादार्थ चतुष्पाद: पश्चिम: पूर्वबाधक:।"

जाती थी, जो परम्परागत कानून या व्यक्तियों के पारस्परिक व्यवहार के विरूद्ध होती थी, तो राजकीय आज्ञा ही मान्य समझी जाती थी, चरित्र और व्यवहार नहीं। इसी प्रकार व्यवहार और चरित्र में विरोध होने पर चरित्र मान्य होगा, व्यवहार नहीं। पर यदि धर्म और व्यवहार में परस्पर विरोध हो, तो धर्म विरूद्ध व्यवहार को न्यायालय में मान्य नहीं समझा जायेगा। लेकिन धर्म के आधार पर निर्णय करने की आवश्यकता तभी होती थी, जबकि मुकदमें के विषय में न कोई राजकीय आदेश होते थे और न कोई व्यवहार और चरित्र।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में बहुत से ऐसे कानून मिलते हैं जो निःसन्देह 'शासन' है। सम्राट अशोक ने भी अपने शिलालेखों द्वारा अनेक राजकीय आज्ञाएं प्रचारित की थी। कूटस्थानीय 'एकराजो' के कारण प्राचीन भारतीय राज्यों में शासन या राजकीय कानून का महत्व स्वाभाविक रूप से बढ़ता जा रहा था। पर जाति, जनपद, श्रेणी तथा कुल आदि के जो परम्परागत कानून (चरित्र) चले आ रहे थे, राजा उनकी उपेक्षा व अतिक्रमण नहीं करता था, अपितु अपने आदेशों को उनके 'अविरूद्ध' रखने का प्रयत्न करता था।

न्यायालयों में मुकदमों का निर्णय करते समय किस कार्य प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता था, इस विषय पर भी कौटिल्य अर्थशास्त्र से उनके महत्वपूर्ण बातें ज्ञात होती हैं। अर्थशास्त्र के अनुसार जब न्यायालय में कोई मुकदमा पेश किया जाता था तो उसमें निम्नलिखित बातें दर्ज की जाती थी। जैसे-तारीख, अपराध का स्वरूप, घटनास्थल, यदि ऋण का मुकदमा है तो ऋण की मात्रा, वादी और प्रतिवादी दोनों का देश, ग्राम, जाति, गोत्र, नाम और पेश तथा दोनों पक्षों की युक्तियों तथा प्रत्युक्तियों का पूरा २ विवरण आदि।[४४]

प्रतिवादी को अभियोग का जबाव देने के लिए तीन से सात दिन तक का समय दिया जाता था। इससे अधिक समय लेने पर प्रतिदिन के हिसाब से तीन से बारह पण तक जुर्माना देना पड़ता था। इस प्रकार मुकदमा तैयार करने के लिए अधिक से अधिक पन्द्रह दिन दिये जा सकते थे।[४५] मुकदमों के निर्णयों में साक्षियों को बहुत अधिक महत्व दिया जाता था। कौटिल्य के अनुसार साक्षी को विश्वास के योग्य, ईमानदार और प्रतिष्ठित होना चाहिए। प्रायः तीन साक्षियों का होना अनिवार्य माना जाता था। उसमें से कम से कम दो

४४-कौटिल्य अर्थशास्त्र, ३/१, "सवंत्सरमृतुं मासं पक्ष दिवसं करणमधिकरणंऋणंवे दकावेदकयोः कृतसमर्थावस्थयोर्देशग्रामजाति-गोत्रनामकर्माणि चाभिलिख्य वादिप्रतिवादिप्रश्नानर्थानुपूर्व्यान्निवेशयेत्। निविष्टांश्चावेक्षेत"

४५-वही, ३/१, "तस्यांप्रतिब्रुवतस्त्रिरात्रं सप्तरात्रमिति। अत ऊर्ध्व त्रिपणावरार्ध्य द्वादशपणपरं दण्डं कुर्यात्। त्रिपक्षादूर्व्वमतिब्रुवतः परोक्तदण्डंकृत्वा"

ऐसे होते थे जो दोनों पक्षों का मान्य होते थे। जिन साक्षियों पर पक्षपात का जरा सा भी सन्देह होता था उनकी साक्षी को प्रमाण नहीं माना जाता था। गवाही देने से पूर्व साक्षी को सत्य बोलने की शपथ लेनी होती थी। कौटिल्य के अनुसार साक्षी को ब्राह्मण, पानी से भरे हुए कुम्भ और अग्नि के सम्मुख ले जाया जाए। यदि साक्षी ब्राह्मण वर्ण का हो तो उससे कहा जाए- "सत्य २ कहो"। यदि साक्षी क्षत्रिय या वैश्य वर्ण का हो, तो उससे कहा जाए "(यदि तुम असत्य भाषण करोगे तो) यज्ञ और पुण्य कर्मों के फल तुम्हें प्राप्त नहीं होंगे और शत्रु सेना को जीत लेने पर भी तुम्हें हाथ में खप्पर लिए हुए भीख मांगनी पड़ेगी।" यदि साक्षी शूद्र हो तो उससे कहा जाए "(यदि तुम झूठ बोलोगे तो) तुम्हारा जो कुछ भी पुण्यफल है, मरने के बाद वह सब राजा को प्राप्त हो जायेगा। और राजा के सब पाप तुम्हें प्राप्त हो जायेंगे। झूठ बोलने पर तुम्हें दण्ड भी दिया जायेगा। जो भी तथ्य है, वे जैसे भी सुने या देखे जाएँगे, हमें ज्ञात हो ही जाएंगे। लेकिन यदि साक्षियों में मतभेद होता था तो निर्णय बहुसंख्यक गवाहों की साक्षी को आधार मानकर किया जाता था।[४६] अर्थशास्त्र में सत्य का पता लगाने के लिए गुप्तचरों की सहायता लेने का भी विधान किया गया है। गुप्तचर मुकदमें की वास्तविकता का पता लगाने का प्रयत्न करते थे और पता लगाकर न्यायधीश को इसकी सूचना देते थे। लेकिन उनकी सूचनाओं को मानना और न मानना न्यायधीश के हाथ में था। पर इसमें सन्देह नहीं की गुप्तचरों की सूचनाओं का निर्णय के लिए यथोचित उपयोग किया जाता था।

इस प्रकार कौटिल्य अर्थशास्त्र के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है कि मौर्य काल की न्याय व्यवस्था का बहुत ही व्यवस्थित और सुसंगठित थी। इसके अनुशीलन से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि प्राचीन भारत में न्यायालय भली भांति व्यवस्थित थे और न्याय करते समय एक निश्यित कार्यविधि का अनुसरण किया जाता था लेकिन उस समय न्यायालयों में वकील होते थे या नहीं, इस सम्बन्ध में कौटिल्य अर्थशास्त्र से कोई ज्ञान प्राप्त नहीं होता। पर जब न्याय विभाग इतना सुव्यवस्थित दशा में हो तो वादी (अभियोक्ता) और प्रतिवादी (अभियुक्त) की सहायता के लिए यदि कतिपय विशेषज्ञ भी हो तो कोई अस्वाभाविक नहीं है।

प्राचीन भारतीय इतिहास,
संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

४६- अर्थशास्त्र, ३/११, "साक्षिभेदे यतो बहवा शुचयोऽनुमता वाततो नियच्छेयु:।"

महर्षि दयानन्द प्रतिपादित वैदिक न्याय व्यवस्था

-डॉ० महावीर, डी.लिट्, व्याकरणाचार्य
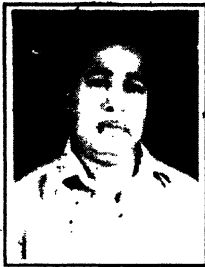
किसी भी समाज को सुव्यवस्थित सुमर्यादित रखने के लिये न्याय-व्यवस्था अपरिहार्य है। न्याय उन्नतिशील सभ्यता का आवश्यक अंग है। इस न्याय व्यवस्था का सम्बन्ध मानव के समस्त क्रिया कलापों से होता है। न्याय मानवीय आवश्यकता पर आधारित संकल्पना है। किसी भी राजनीतिक व्यवस्था की सुचारूता की कसौटी उत्तम न्याय-व्यवस्था ही होती है। "न्याय" ही राज्य का वह तत्व है, जो उसे "डकैतों के दल" से भिन्न करता है[1]। क्योंकि निष्पक्ष स्वतन्त्र और विधि सम्मत न्याय प्रणाली के अभाव में सर्वत्र अशांति एवं अराजकता व्याप्त हो जाती है। वास्तव में न्याय के अभाव में सभ्य राज्य या मानव समाज की परिकल्पना ही नहीं की जा सकती है।

वैदिक साहित्य में न्याय-व्यवस्था के समस्त आयामों-विधि की संकल्पना, न्यायिक प्रक्रिया एवं दण्ड विधान आदि की कहीं विस्तार से तो कहीं संक्षेप से रूप-रेखा उपलब्ध होती है, क्योंकि ईश्वर का न्यायकारी विशेषण तभी चरितार्थ होगा, जब उसकी न्याय-व्यवस्था सर्वथा पक्षपात रहित युक्तियुक्त एवं परिपूर्ण हो।

१. विधि की संकल्पना

समाज की शांति, राष्ट्र की सुरक्षा और प्रगति तथा मानव-कल्याण के लिये विधि की अनिवार्यता को न केवल भारतीय चिन्तकों ने अपितु पाश्चात्य विचारकों ने भी किसी न किसी रूप में स्वीकृति अवश्य प्रदान की है। राजनीति शास्त्र में विधि या कानून का सम्बन्ध राज्य के उन नियमों से है, जो मानव के आचरणों को नियन्त्रिण एवं निर्धारित करते हैं।

आधुनिक युग के वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द के अनुसार विधि, मनुष्यों के समस्त बाह्य क्रिया-कलाप को नियन्त्रित तथा निर्देशित करने वाला सूत्र मात्र नहीं है, जिससे राज्य के प्रशासन का संचालन होता है, अपितु विधि का सम्बन्ध वेदोक्त नैतिकता से है। वह मानव के लौकिक उद्देश्यों की पूर्ति के साथ ही पारलौकिक लक्ष्य से भी सम्बद्ध है। स्वामी दयानन्द विधि को प्राकृतिक विधि से उपमित करते हुए ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं-

"जैसे ईश्वर के नियमों में सूर्य की किरणें आदि पदार्थ यथावत् वर्तमान हैं, वैसे

ही तुम (राजा) प्रजा पुरुषों को भी राजनीति के नियमों में वर्त्तना चाहिए।"[२]

इससे स्पष्ट होता है कि राज्य के सफल संचालन हेतु विधि उसी प्रकार आवश्यक है, जैसे सृष्टि के संचालन के लिए प्राकृतिक या ईश्वरीय विधि की आवश्यकता होती है। स्वामी दयानन्द ने वैदिक मान्यतानुकूल विधि को धर्म की संज्ञा प्रदान करते हुए स्पष्ट लिखा है कि- ऐसा वह कानून हो, जिससे यह लोक और परलोक दोनों शुद्ध होवें। वह कानून धर्म से कुछ भी विरूद्ध न होवे, क्योंकि धर्म नाम है न्याय का और न्याय नाम है पक्षपात न छोड़ना।[३] महर्षि ने धर्म को संकुचित अर्थों में प्रयुक्त न कर न्याय, सत्य-सद्गुण एवं ऋतु (प्राकृतिक विधान) के रूप में प्रयुक्त किया है। इस प्रकार विधि की अवधारणा में राजसत्ता (राज्य) और धर्मसत्ता (ईश्वर) दोनों का सन्तुलन रहता है। इस विधि का उद्देश्य मात्र लौकिक कल्याण नहीं, अपितु पारलौकिक हित भी है। वह मानव के बाह्य आचरण का नियन्त्रण भी करता है साथ ही साथ नैतिकता, अध्यात्म एवं जीवन के उच्चतर मूल्यों का संरक्षण और संवर्द्धन भी करता है। इसे हम इस प्रकार से व्याख्यायित कर सकते हैं- "विधि का सर्वोपरि उद्देश्य धर्म (न्याय) की स्थापना, सामाजिक कुरीतियों का निवारण, स्वास्थ्य-संवर्धन, मानव कल्याण तथा व्यक्तित्व विकास, शांति तथा सुव्यवस्था की स्थापना, स्वतन्त्रता और समानता की रक्षा भय एवं आतंक की समाप्ति के साथ ही साथ पारलौकिक हितों का संरक्षण भी है।

स्वामी दयानन्द ने वदोक्त रीति से विधि का निर्माण करने का निर्देश दिया है। सत्यार्थ प्रकाश में विधायन के क्षेत्र में तीनों सभाओं की सक्रिय भूमिका को स्वीकार करते हुए लिखा है कि तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के अधीन सब लोग वर्तें।[४] महर्षि ने आजकल की भांति बहुमत (संख्या) पर बल न देकर गुणवत्ता पर बल दिया है। उनका अभिमत है कि यदि एक अकेला सब वेदों का जानने वाला, द्विजों में उत्तम सन्यासी जिस (विधि) की व्यवस्था करे वही श्रेष्ठ धर्म है, क्योंकि अज्ञानियों का सहस्रों, लाखों और करोड़ों मिलकर जो कुछ व्यवस्था करें, उसको कभी न मानना चाहिए।[५] अम्यत्र भी महर्षि ने विधि निर्माण में वेदविदों को महत्व देते हुए लिखा है कि "राजसभा के सभासद की वेदज्ञ विद्वानों की आज्ञा का उल्लंघन न करें।[६]

वेद विधि के निर्माण के साथ ही साथ विधि-प्रयुक्ति, विधि अधिनिर्णय तथा विधि-अनुपालन पर भी बल देता है। विद्वान् जिन कर्मो

के करने की आज्ञादेवें उनको करो और जिनका निषेध करें उनको छोड़ दो।[७] परन्तु यह भी कटु सत्य है कि भय के बिना विधि का अनुपालन संभव नहीं है, दुष्टजनों द्वारा विधि का पालन कराने के लिये दण्ड की आवश्यकता पड़ती हैं सदा से ही न्यूनाधिक रूप में समाज में ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं जो अपने कुकृत्य से समाज की शान्ति भंग करते हैं। उनको दण्ड देना आवश्यक हो जाता है, दण्ड का वास्तविक लक्ष्य सुधार है। विधि भंग करने वालों को इस प्रकार दण्डित किया जाना चाहिये कि उनके चरित्र का सुधार हो और कोई अन्य प्राणी उनको दिये जाने वाले दण्ड से भयभीत होकर पुन: नियम तोड़ने का दु:साहस न कर सके। वेद के आधार पर महर्षि दयानन्द ने 'विधि की सर्वोच्चता' और 'विधि के शासन' जैसे अत्याधुनिक विधि शास्त्र के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। उनका मत है कि विधि के समक्ष राजा-प्रजा, स्त्री-पुरुष आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

२. **न्याय की संकल्पना :**

विधि और न्याय एक दूसरे के पूरक हैं। न्याय साध्य है और कानून उसका साधन। प्रसिद्ध राजनीतिक चिन्तक वार्कर का मत है कि 'राजसत्ता विधि को वैधता प्रदान करती है और न्याय इसे मूल्य प्रदान करता है।[८]

प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन में न्याय को धर्म का प्रतीक माना गया है, तथा इसी के कारण न्यायाधीश को "धर्माध्यक्ष" या "धर्माधिकारी" और न्यायालय को "धर्माधिकरण" की संज्ञा प्रदान की गयी है। याज्ञवल्क्य कहते हैं कि "निष्पक्ष न्याय से वही फल प्राप्त होता है जो पवित्र वैदिक यज्ञों से प्राप्त होता है।"[९] स्पष्ट है कि भारतीय हिन्दू चिन्तन न्याय को धर्म और यज्ञ की संज्ञा प्रदान कर उसकी महत्ता और उपयोगिता को सार्वभौमिक स्थिति प्रदान करता हैं

वेदानुयायी स्वामी दयानन्द ने अपनी न्याय की अवधारणा को धर्माचरण से संयुक्त करते हुए स्पष्ट रूप से कहा है कि 'धर्म नाम से न्याय का और न्याय नाम है पक्षपात का छोड़ना।[१०] इसीलिए उन्होंने न्यायपूर्वक राज्य पालन को क्षत्रियों (राजाओं) का अश्वमेघ यज्ञ [११] तथा मोक्ष का कारण भी स्वीकार किया है। उनका मत है कि 'वही राजा है, जो न्याय को बढ़ाने वाला हो[१२], जैसे प्रात: बेला सबको चैतन्य करती है, वैसे न्यास से सम्पूर्ण प्रजाओं को चैतन्य करो[१३], जैसे सूर्य और चन्द्रमा नियम से दिन-रात्रि

चलते हैं, वैसे न्याय-मार्ग को प्राप्त हूजिए।[१४]

आर्याभिविनय नामक अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ में वेद मन्त्र की छाया में ईश्वर से प्रार्थना करते हुए वे लिखते हैं- "हे राजाधिराज ! जैसा सत्य-न्याय-युक्त अखण्डित आपका राज्य है वैसा न्याय-राज्य हम लोगों का भी आपकी कृपा से स्थिर हो......हे न्यायप्रिय ! हमको भी न्याय प्रिय यथावत् कर। हे धर्माधीश। हमको धर्म (न्याय) में स्थिर रखो।"[१५] महर्षि के इन विचारों से स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक काल में भी इस देश में न्याय को परम धर्म माना जाता था। इस अवधारणा की पुष्टि आधुनिक पाश्चात्य विधिशास्त्री जेम्स ब्राइस इस प्रकार करते हैं- "यदि न्याय का दीपक अन्धकार में विलीन हो जाय, तो वह अन्धकार (अन्याय) कितना दु:खद और भयानक होगा।"[१६]

स्वामी दयानन्द की वैदिक व्यवस्था इसी संकल्पना पर केन्द्रित है। वेद में न्याय-व्यवस्था की रक्षा मानव सभ्यता की रक्षा तथा न्याय का विनाश, मानव-सभ्यता का विनाश कहा गया है।

स्वामी जी ने वैदिक साहित्य तथा राजनीति शास्त्र के प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर न्याय कार्य की प्राथमिक इकाई ग्राम-पंचायत को माना है। इसके बाद तहसील (सौ ग्रामों का समूह) और जिला (एक हजार ग्रामों का समूह) स्तर पर न्यायालय होंगे। इसी प्रकार यह व्यवस्था दश सहस्र तथा लक्ष ग्रामों की राजसभाओं के स्तर पर उच्च न्यायालय के रूप में होगी। अन्तत: सर्वोच्च न्यायालय के रूप में केन्द्रीय राजसभा होगी, जिसमें सभी सभासद, न्यायाधीश के रूप में राजा सभी अन्य न्यायाधीशों (सभासदों) की सहमति और स्वीकृति से निर्णय देगा।

३. **न्यायाधीश :**

न्याय-कार्य राजा और सभासदों द्वारा सम्पादित किया जायेगा अत: जो योग्यताएं एवं गुण राजा और सभासदों के हैं वे ही न्यायधीश के लिए ही वाञ्छनीय हैं। वेदों के प्रकाण्ड विद्वान आचार्य प्रियव्रत जी ने वैदिक देवता सोम को न्यायाधीश का प्रतिरूप माना है। वे इन्द्र और अग्नि को प्रधान रूप से सम्राट वाचक मानते हैं। न्याय विभाग का कार्य करने के लिये अपने प्रतिनिधि के रूप में सम्राट, जिस अधिकारी को नियुक्त करता है, उसका नाम वेद में सोम है। इसकी पुष्टि में आचार्य श्री निम्न मन्त्र उद्धृत करते हैं :-

१. सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तपोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्।।[१७]

२. ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूष्यन्ति स्वधामि।
अध्ये वा तान्द्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरूपस्थे।

यहाँ सोम का अर्थ है न्याय और इन्द्र का काम है शासन। सोम जो दण्ड निर्धारित करता है, इन्द्र उसको क्रियान्वित कराता है।

न्यायाधीश को सोम के गुणों से ओतप्रोत होना चाहिये। महर्षि दयानन्द ने न्यायाधीश के गुणों का उल्लेख इस प्रकार किया है- 'न्यायाधीश वायु के समान सबको प्राणवत् प्रिय और हृदय की बात जाननेहारा यम की भांति पक्षपात रहित, सूर्यतुल्य न्याय, धर्म और विद्या का प्रकाशक तथा अन्धकार, अविद्या एवं अन्याय का निरोधक, अग्निवत् दुष्टों को भस्म करने वाला[१९]। असत्य को छोड़ सत्य को ग्रहण करने वाला, अन्यायकारी को नष्ट और न्यायकारी को बढ़ाने वाला स्वात्मवत् सबका सुख चाहने वाला।[२०] सत्यकारी, सत्यवादी, सत्यमानी[२१] शुद्ध अन्त: करणवाला[२२], सूर्य और चन्द्रमणि के गुणों से युक्त[२३], अग्निवत् तेजस्वी और वेगवान्[२४], मित्रगुणयुक्त[२५] होना चाहिये।

इन योग्यताओं में शैक्षिक अर्हताओं के अतिरिक्त उच्चतम नैतिक एवं आध्यात्मिक गुणों को इसलिए आवश्यक बताया है कि दण्ड का धारण अविद्वान् और अधर्मीजन न कर सकें। उसे विद्वान्, विश्ववित्, सुमेधा ऋषिमना, वचोवित् तथा सुश्रुवा आदि गुण धारक व्यक्ति को ही धारण करना चाहिये।

वे न्याय कार्य में पुरुषों के समान स्त्रियों को भी सर्वथा योग्य मानते हैं[२६]। महर्षि द्वारा वेदमन्त्रों के उद्धरण देते हुए न्याय-प्रशासन जैसे राज्य कार्यों में स्त्रियों की सहभागिता का उद्‌घोष अभूतपूर्व क्रान्तिकारी विचारों का परिचायक था।

स्वामी जी ने राजा को न्याय-कार्य हेतु प्रतिक्षण उद्यत रहने का संकेत दिया है। उनका स्पष्ट मत है कि यदि राजा भोजन पर भी बैठा हो तो भी उसे न्याय के लिये भोजन छोड़कर चल देना चाहिए। अपने वेद-भाष्य में महर्षि कहते हैं कि- हे राजन् हम सब जब आपको पुकारें, उसी समय आपको आना चाहिए तथा हम लोगों के वचन सुनना और यथार्थ न्याय करना चाहिए।[२७]

महर्षि ने न्याय-अन्याय के निश्चय के लिये वेद, मनुस्मृत्यादि शास्त्र, सत्पुरुषों का विचार, वेद-प्रतिपादित कर्म तथा जिसको आत्मा चाहे, को आधार

बनाया है। महर्षि ने वैदिक प्रसंग में- "सत्य परीक्षण"[२८] के लिए पांच प्रकार की परीक्षाओं का निर्देश किया है जिनका उपयोग न्यायिक निर्णय में भी किया जा सकता है। ये पांच प्रकार की परीक्षाएं हैं- ईश्वर उसके गुण कर्म स्वभाव और वेद विद्या, प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण सृष्टि-क्रम के अनुकूल, आप्तों का व्यवहार तथा अपने आत्मा की पवित्रता।

दण्ड विधान :

न्याय-व्यवस्था में दण्ड प्रक्रिया आ अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। महर्षि दयानन्द ने मनुस्मृत्यादि ग्रन्थों के आधार पर दण्ड को ही प्रजा का रक्षक माना है। इनकी दृष्टि में दण्ड न केवल राज्य का अपितु धर्म का भी मूलाधार है। दण्ड ही समस्त लौकिक एवं पारलौकिक लक्ष्यों एवं कार्यो का निर्देशक एवं नियन्ता है। वे सत्यार्थ प्रकाश के षष्ठ समुल्लास में लिखते हैं- दण्ड ही वास्तविक राजा, वर्णाश्रम-धर्म का प्रतिभू, शासन-कर्त्ता, प्रजा का रक्षक, धर्म, कृष्णवर्ण रक्त नेत्र वाला भयंकर पुरूष, धर्म अर्थ काम और मोक्ष का प्रदाता है।

महर्षि की दण्ड की अवधारण सुस्पष्ट है, वे बिना अपराध के दण्ड देने को दुर्व्यसन कहते हुए लिखते हैं कि जो जितना अपराध करे, उसको उतना दण्ड और, जो जितना अच्छा कार्य करे उसे उतना ही पारितोषिक दिया जाना चाहिए, न अधिक न न्यून।[२९] दण्ड का प्रयोजन सभी प्रकार के प्रमाद तथा व्यक्तिक्रमों के विरूद्ध एक व्यापक मानसिक नियम की अभिपुष्टि करना है। दण्ड का उद्देश्य परिशोधन है, प्रतिशोध नहीं। महर्षि का मत है कि- जिस प्रकार शिष्य एवं पुत्र को क्रमशः गुरु और पिता दण्ड देते हैं, उसी भाव से राजा भी दण्ड दे।[३०] दुष्टों को दण्ड द्वारा शिक्षा देकर श्रेष्ठ स्वभावयुक्त करें।[३१] इस प्रकार दण्ड का उद्देश्य मानव की राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था को सम्यक् सञ्चालित करना है।

वैदिक वाङ्मय में अनेक अपराधों तथा दण्ड विधानों का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे यातुधान, राक्षस्, दस्यु, पिशाच, स्तेन, तस्कर आदि ये सभी नाम अपने सामान्य प्रयोग में प्रायः पर्यायवाची हैं। पर साथ ही इनके अर्थो में परस्पर अन्तर भी है। आचार्य प्रियव्रत जी ने अपने ग्रन्थ में ३९ प्रकार के अपराध वेद-मन्त्रों के आधार पर परिगणित किये हैं। इन अपराधियों को दण्ड देना अनिवार्य है। महर्षि ने अनेक प्रकार के दण्डों का विधान किया है। यथा : वाक्-दण्ड, धिक्-दण्ड, अर्थ-दण्ड, देश-निर्वासन[३२], अग्नि से जलाना[३३], कारागार दण्ड[३४] इत्यादि।

स्वामी दयानन्द ने झूठी साक्षी देने वाले, चोर, डाकू, साहसिक, वेदशास्त्र विरोधी, अधर्मी, व्यभिचारी स्त्री-पुरुष, आर्थिक अपराधी, मद्यप, पशुहिंसक, जुआरी आदि के लिये पृथक्-पृथक् दण्ड विधान किया है। यही नहीं तो अपराधी राज-पुरुष तथा राजा-रानी के लिये भी उनके अपराध के अनुसार दण्ड निर्दिष्ट किया है। उनका निर्देश है कि जो राजा या रानी अथवा न्यायाधीश या उसकी स्त्री व्यभिचारादि कुकर्म करे तो सभा उनको प्रजा पुरुषों से भी अधिक दण्ड दे।[35] उन्होंने भिन्न-भिन्न अपराधों के लिये विभिन्न प्रकार की दण्ड-व्यवस्था के साथ ही साथ दण्ड प्रयोग के समय दोषसिद्ध अपराधी के सामाजिक, मानसिक एवं आर्थिक स्तर का भी ध्यान रखा है। इसके अतिरिक्त महर्षि का यह भी सुझाव है कि दण्ड सदैव देश, काल तथा परिस्थिति के अनुकूल देय होना चाहिए। यह दण्ड-विधान प्रतिकारात्मक, प्रतिरोधात्मक एवं सुधारात्मक होने के साथ-साथ बुद्धि एवं तर्क सम्मत भी है।

महर्षि की सम्पूर्ण न्याय-व्यवस्था का सूक्ष्म विश्लेषण करने पर स्पष्ट हो जाता है कि उनकी न्याय की अवधारणा उनके राज-दर्शन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष है। इसमें विधि के शासन और विधि की उचित प्रक्रिया दोनों का सुखद संयोग है। इस व्यवस्था का महत्वपूर्ण पक्ष है आध्यात्मिक एवं संवैधानिकता का अभूतपूर्व समन्वय। वर्तमान व्यवस्था में यदि महर्षि की वेद सम्मत न्याय प्रणाली को क्रियान्वित किया जाये, तो न्याय पर से उठा हुआ प्रजा का विश्वास पुन: लौट सकता है।

सन्दर्भ - सूची

१. एल.सी. मैकडानल-वेस्टर्न पोलिटिकल थ्योरी, भाग-१, पृ० १२०
२. ऋ०भा० १.१०५.११
३. ऋ०द०स० के प० और वि० भाग। पृ० ४२
४. सत्यार्थ प्रकाश, पृ० ९२
५. ऋ०द०स०-के प० और वि० भाग-२, पृ० ६३३
६. यजु० भा० ७.३५
७. ऋ०भा०-१-७९-१२७
८. ज्ञान सिंह सन्धू-राजनीति सिद्धान्त पृ० २८४
९. याज्ञवल्क्य १.३५९, ३६०
१०. ऋ.द.स. के प० और वि०-भाग १ पृ० ४२
११. ऋ.भू०-पृ० - २५४

१२. यजु० भा० १७-१५
१३. ऋ०भा० ४.१०.१
१४. ऋ०भा०-५.५२.५
१५. आर्याभिविनय पृ० ९१-९२
१६. जेम्स ब्राइस - माडर्न डिमोक्रेसीज़, भाग-२ पृ०-४२१
१७. अथर्व०-८.४.१२, ऋग्-७-१.४.१२
१८. अथर्व० ८.४.९, ऋग्० ७.१०४.९
१९. स.प्र.-पृ०-९३
२०. स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश - पृ० ४०६
२१. ऋ.भा. १.७०.४
२२. यजु०भा०-१७.११
२३. यजु०भा०-२९.१४
२४. ऋ०भा० ५.५०.४
२५. आर्या०-पृ० ३०
२६. ऋ०भा०-२.२७.७ २.२७.१२ आदि
२७. ऋ०भा०-३.४०.८
२८. मनु० १.१३१
२९. ऋ० द०स० के प० और वि०-भाग २ पृ० ७५६
३०. सत्यार्थ प्रकाश-पृ० २४
३१. ऋ.भा० १.४२
३२. यजु० भा० ८.४४
३३. यजु०भा०११.७७
३४. ऋ.भा. ७.२५२
३५. सत्यार्थ प्रकाश पृ०-११४

रीडर, संस्कृत विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार

□ □ □

VEDIC JURISPRUDENCE

INDER DEV KHOSLA

Necessity of Law

The instinct of self- preservation is the first law of nature and is common with all Scientific life. Bitter felling of aggrieved for revenge and retaliation would have soon resulted in mutual extermination, although at first the weaker, but afterwards the stronger too would have fallen victim to the brute force, which thought employed for preservation, would have inevitably ended in annihilation. Vedic rishis foresaw it and they thus laid down that instead of mutual retaliation and ultimate annihilation states or Government, should frame rules or laws to take the offender to task. on behalf of the offended.

Mr Maine, a legal illuminary, has rightly observed that law, more specially the criminal law, is a civilized way of revenge. He has further remarked, "I recognize the greatness and soundness of Vedic system, now known as Hindu law."

Function and Definition of Law

In a society, law has a definite and important place, as an agent of social evolution, but it can play a limited role. The main function of law is the preservation of stability of state and ensuring security to people against any disorder. Law can be said to have run parallel to culture, sometimes lagging behind it and sometimes leading the way, always taking care that the gap between the two is not large. Law in fact is a social science, as against natural science. In democracy, law as the body of principles recognized and applied by the statue in the administration of Justice.

Indian constitution, is presumbly, the only constitution in the world, with a Vedic background, which imbibes the above idea of harnessing the changing with time. In this connection Art. 15A(H) is explict. It clearly points out that the fundamental duty of every citizen is "to develop the scientific temper, humanism and the spirit of inquiry and reform."

According to Vedas, as also correctly defined in Mahabharata, "Law is Dharma, viz. that which sustains (the society)". The Sanskrit

world Dharma is the one of those words that defy all attempts at an exact rendering in english or in other tongue.

Dharma in Vedic language is derived from the root (Dhar) which means to uphold, to nourish (Rig. 1.87.1 and 10.92.2 and 10.21.3). Broadly speaking it means the fixed principles or rules of conduct, viz. righteousness (तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्) the first rule of conduct (Rig. 1.164.50, 1.164.43). The same words occur in Atharvaveda (7.5.1 and 6.51.3). Dharma is one of the main pillars of a society (ऋतं सत्यं तपो श्रमो धर्मश्च कर्मच) (Atharva. 12.1.1). At another place it is said (तदे तद् क्षत्रं यद् धर्म) Law is the king of kings.

Kinds of Law

Law is divided into two main branches, viz. civil law and criminal law. Other types of the laws are substantive laws and procedural laws. Criminal law is concerned with wrongs against the community as a whole, while civil law is concerned with rights, duties and obligations of individual members of society between themselves. Civil proceedings are taken up on the initiation of the aggrieved and no preliminary inquiry is made as to the authenticity of the grievance, whereas in criminal cases, before charging the accused, a preliminary enquiry is needed.

Sin and crime defined

A breach of moral principle is called sin. A breach If law, that is a legal duty, if punishable, is a crime. Beneath all the circumstances inducing compliance with morals, the sole force is goodwill and moral spirit with us, but behind law stands the brute force of the state.

Vedic concept of Law of Dharma

Vedas do not contain any codified laws in consonance with the prevalent concept. They use the word dharma for law. They do, however, contain reference to various topics, that fall under the domain of law or Dharm Shastra. Maine, in his treatise on Vedic laws, has brought together some 50 passages that shed flood of light on laws of marriage, succession, adoption, Sradha, Stridhana etc. For example, it is made clear that a brotherless maiden secures her

husband with difficulty (Rig. 1.124.7) Similarly, in Mantra 5, Sukta Mandla 4 of Rigveda reference is made to a sister who does not co-operate with her brother, she is stated to be of no worth. Regarding marriages hymn number 85 of Mandla 10 of Rigveda throws enough of light. Even marriages that are performed these days also follow the same rules.

Codification of Vedic Law

Codification of the law (the earliest available these days) was done by Manu, the great jurist, after churning the Vedic texts throughly. This law is contained in Manusmritit. That very law has come down to us with alterations, amendoments and additions in the course of long period of changes of throughts and conceptions. After Manu various smrities or dharmashastras were written, but authenticity is given to Manusmriti. Some of the names of authors of smrities and dharmashastra are noted below :—

Gautam, Bandhyana, Hiranyakeskeisdham, Vassistha, Koutilya, Yajnavalkya, Puran, Ramayana and Mahabharata, Parasara, Nanda, Madhvacharya.

All these shastras and smirities were the products of their own times and lost their merits with the change of conception from time to time. As a proof of it two quotations from two authors of dharmashastras are noted below.

Kalivarjya says that in Kaliyuga the performance of (अग्निहोत्र), renunciation is not possible.

Parashara says : " The dharma for men in Satyuga is different from that the Treta, Dvapara and kaliyuga. Also there are different dharmas of each yuga, practised in keeping with the distinctive character of that age."

Parashara further adds. "Dharmas for Satyuga are those, as laid by Manu, for Treta those written by Gautam : for Dvapara those laid by Likhila, and for the kaliyuga those laid by Parashara." This principle of change of law according to requirements of time is fully supported by the modern philosophers also :—

The world advances
Times out grow,
Laws; that in our
fathers days were best,
Shall be shaped better than we.

Vedic Legal Terminology

In Vedic language the word (धर्म) Dharma is primarily used for law, virtue, righte ousness; and it has been so employed in all the later smirities and Dharmashastras. For a judge the words used are Dharmdhayaksha (धर्माध्यक्ष), Dharmadhikari (धर्माधिकारी), Nyayadhish (न्यायाधीश) and for an advocate Pradvivako.प्राडविवाको . As mentioned in the foregoing para, the king is overall incharge of all the departments in a state including law justice and legislature. He is addressed as Varuna (वरुण), Indra (इन्द्र), Soma (सोम) according to the function performed by him from time to time.

Administration of Justice

(Shatpath : 14.13 12) राजा वै सोम

त्वां जना ममसत्येष्विन्द्र संतस्थाना वि ह्वयन्ते समीके।
अत्रा युजं कृणुते यो हविष्माननासुन्वता संख्यं वटि शूरः।

(Ath.20.89.4)

O mighty Indra ! the people standing in disputes invoke you in their fray for justice, wherein both the parties claim to be right. But you do not befriend him who does not work for the bettlement of the state. The place where justice is administered is called Samika (समीका) for disputes the word employed is (ममसत्य), mamsatya, because both parties to the dispute, claim to be true.

The presiding officer, *viz.*, judge, who takes decision is addressed mostly as Indra (इन्द्र). Parties in dispute place their facts before him.

इन्द्राय साम गायत विप्राय वृहते वृहत्।
धर्मकृतो विपश्चिते पनस्यवे ।।

(Rig 8.98.1) & (Ath 20.62.5)

"The king or judge (Indra) who administers justice is Dharmakrito (धर्मकृतो) and (पनस्यवे) Pansyave is one who possesses expertise in law."

क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः।
इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्।।

(Yaju. 35.19)

I, the knower, drive away the eater of raw meat, and the tormentor of men like fire, and cast aside the sinners.

Let all criminals be brought before the court of justice. Let a noble soul in the world learn knowledge from the learned."

These above mantras and the following ones also indicate that justice is administered through regular courts for disputes between litigants. This institution of courts is not modern one, as is currently understood; but it is very old and has come down to us form vedic times. सत्यानृते अवपश्चयंजनानाम् (Rig. 7.49.3)

The judge is called upon to decide after screening the facts and find out the truth. Hymns No. 7.104.15 of Rigveda and 8.4 of Atharvaveda fully convince us of the fact that kings have to establish courts for deciding disputes.

अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततप पूरुषस्य।
अधा स वीरैर्दशभिर्वि यूया यो मा मोघं यातुधानेत्याह।।

(Rig. 7.104.15)

O king (judge), if I am a wicked person or a torturer of the people, or if I harass any man's life, I may be killed else he (the enemy) be sent to prison and remain seperated from his ten sons, words यातुधानो या असुर Yatudhan or Asur, indicates that there are no other type of creatures except human beings. Those who indulge in bad deeds and behave in inhuman way are Asur.

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत् सत्यं सतरदृजीयस्तदित् सामा*वति हन्त्यासत्।।

(Ath.8.4.12)

It is very easy for a prudent judge to distinguish between truth and falsehood. Truth and falsehood are two opposite poles. Of these two, truth is always straight, simple, clear, and a man of judicious and righteous nature protects the truth and obliterates the falsehood.

न या उ सोमो वृजिनं हिनेति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम्।
हन्ति रक्षो हन्त्यासदवदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाने।

(Ath.7.104.13)

O judge ! never encourage the crime and the criminal, never give protection of encouragement to false claims. As a warrior or brave man kills the wicked, so you also destroy the person who tells a lie, let such a person remain entengled in noose.

Judges are required to decide cases with equity and good consciousness and should not be too rigid in the interpretation of law, because rigidity of law, sometimes provokes the censure that law is an ass.

ये पाकशसं विहरन्त एवैर्ये वां भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः।
अहये वा तान् प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे।।

(Ath.7.104.9)

Let the judge hand over the cruel man, for being hanged or send him to prison, Who accuses the person dealing his affairs with righteonuness and also to him, who harms the virtuous for his selfish motives.

यदि वाहमनृतदेवो अस्मि मोघं वा देवाँ अप्यूहे अग्ने।
किमस्यभ्यं जातवेदो हृणीषे द्रोघवाचस्ते निर्ऋथं सचेताम्।।

(Ath.8.4.14)

O wise judge ! if we worship falsehood as truth or if we in vain think of many worshipable deities, do you become angry with us ? Let the calamity fall upon them who speak lie, may they be one of us or some different one.

यो मा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः।
आप इव काशिना संगृभीता असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता।।

(Ath.8.4.8)

O mighty king ! let the person who speaks untruth and by his

false speeches accuses me when I am rightly engaged in my affairs with nature and guileless mind, he may be thrown away, as water filled in the cavity of joined hands, is wasted aways.
Types of Offences and Punishments

Offenders- (a) Rakshas (b) Dasu (c) Yatudhan (d) Pishach (e) Stean (f)Tasker (g) Attri (h) Afhashans (i) Dushcit (j) Rupu (k) Asatyavadi, etc.

Besides the above, some other punishable crime/offences find repeated references in the Vedas:-

(I) स्त्रीभिर्यो अत्र वृषणं पृतन्यादयुद्धो अस्य विभजानि वेदः।

(Rig.)

Any one having illicit connection with any woman be punished and his property confiscated and distributed amongst other deserving persons.

(II) निन्दाद्यो अस्मान् धिप्साच्च सर्वं त भस्मसा कुरु।

(Yaju.11.80)

(III) अयोदंष्ट्रो अर्चिषा यातुधानानुप स्पृश जातवेदः समिद्धः
आ जिह्वा भूरदेवान् रभस्व क्रव्यादो वृष्टवपि धष्त्स्वासन् ।।

(Ath.8.3.2)

O wise ruler ! you pounce upon those foolish person who indulge in anti-social activities and deal with them also in jail who charge exorbitant interest from others.

(IV) त्वं तं देव जिह्वया परि बाधस्व दुष्कृतम्।
मर्त्तो यो नो जिघांसति।।

(Rig.6.16.32)

Person engaged in bed deeds and those who want to kill us, O King! you give them serverst punishment.

(V) अदाशुषं तेषां नो वेद आ भर

(Rig.1.81.9)

O king ! you snatch aways the property of that individual who

does not take part in state affairs and distribute the same amongst other.

(VI) समी पणेरजति भोजनं मुषे विदाशुषे भजति सुनरं वसु

(Rig.5.34.7)

(VII) शूरो यज्वनो विभजन्नेति वेदः।

(Rig.)

The king confiscates the property of harmful people and distributes the same to other deserving person or utilizers the same for the good of the state. The following single Ved mantra enumeates some of the undesirable elements in the society who need punishment.

न्यक्रतून्ग्रथिनो मृध्रवाचः पणींरश्रद्धाँ अवृधाँ अयज्ञान्।
प्रप्रतानदस्यूंरग्निर्विवाय पूर्वश्चकारां परा अंयज्यून्।।

(Rig.7.6.3)

(1) अकृतन् (Who does not doany work and is a parasite of the society) (2) ग्रंथिन (a miser who does not use his money for the benefit of the state) (3) अयजन (who does not perform yajna of any king). (4) (मृघ्रवाचः) (A habitual liar).

The head of the state/judge should keep undesirable persons separated from the general society so that they may not influence others and place them in lower category.

the above mantras throw light on the civil law of the state. Confiscation of property of the offenders is the right remedy prescribed therein. The following are some more severe punishments—

(1) The offender be sent to jali (Ath 8.4.9).
(2) Calamity may fall on him (Ath : 8.4.9)
(3) Let the calamity fall on the offender (Ath 8.3.14)
(4) Let the wicked person be properly punished (Ath. 8.4.17)

If a habitual offender does not improve himself then such an incorrigible one be separated from the general society and confined to solitary cell.

(5) पातय परमक्षयुतावरम्
Both eyes of the bandits and villains be removed. (Ath. 1.8.3)

(6) अहये वा तान् प्रदातु सोम:
O king ! send the offender to gallows, (Ath. 8.4.9)

(7) तं त्वा सीसेन विध्यामो यथानोऽसो अवीरहा
We shoot you with lead bullet so that you may not again harm our brave men.

(Ath. 1.16.4)

(8) इन्द्रो वज्रेणापि शीर्षाणि वृश्चतु
The ruler may get the head of the offender cut with weapon if he is found guilty of a serious crime. (Ath. 1.7.7)

(9) त्वचं यातुधानस्य भिन्धि प्रपर्वाणि जातवेद: शृणीहि।

I pierce through the skin of the criminal and let the fatal electric device destroy him. (Ath. 8.3.4)

इन्द्र जहि पुमांसं यातुधानमुत स्त्रियं मायया शाशदानाम्।
विग्रीवासो मूरदेवा ऋदन्तु मा ते दशन्त्सूर्यमूच्चरन्तम्।।

O judge Indra ! destroy the wicked male or female, who is expert in treachery and evil tricks. Let people of hypocritic nature perish. They be deprived of their necks so that they do not exist before the next sunrise.

In vedic mantras sometimes the word soma and sometimes the word Indra has used while addressing the king, or his representative, administering justice. The word 'Soma' represents a judicial officer and Indra as an executive magistrate.

प्र वर्तय दिवाऽश्मानमिन्द्र सोमशितं मघवन्त्सं शिशाधि।
प्राक्तो अप्राक्तो अधरादुदक्तोऽभिजहि रक्षस: पर्वतेन।।

(Ath. 8.4.19)

O Indra ! you execute the order passed by the "Soma" and keep ready, with your expertise, the weapons for punishing the offender. You kill the (राक्षस) Rakshas, with that weapon on all sides.
परीममिन्द्रामायुषे महे क्षत्राया घतन

यथैनं जरसे नयाँ ज्योक् क्षत्रेऽधि जागरत्। (Ath.19.24.2)
परीमं सोममायुषे.............. .... जागरत्।। (Ath 19.24.3)

In the above mantras king has been addressed both as Indra and Soma. Soma's function is indicated as (श्रोत्र) and that of Indra (क्षत्र)

Punishment to Beasts

Like human beings beasts of other creatures, who give trouble to human life and property are also punishable. For such creatures the word uses are (व्याघ्र)- Vyaghra and (वृक) Vrik etc.

उदितस्त्रयो अक्रमन् व्याघ्र: पुरुषो वृक: ।
हिरुग्घि यन्ति सिन्घवो हिरुग् देवो
वनस्पतिर्हिरुङ्. नमन्त शत्रव:।।

(Ath.4.3.1)

Let the three, ***viz.*** tiger, wolf, and thief stay aways from the vicinity of the population. Just as rivers flow unnoticed so these three too, remain hidden in woods let our enemies bend down.

परेण दत्वती रज्जु: परेणाघायुरर्षतु।

(Ath.4.3.2)

Let the rope having teeth (viz. snake) go far away or remain at a distance from here.

We crush and cut them to pieces, both the eyes of the tiger and also his mouth. We break all the twenty nails of the tiger.

यत् संयमो न वियमो वि यमो यन्न संयम:।
इन्द्रजा: सोमजा आथर्वणमसि व्याघ्रजम्भनम्।।

(Ath.4.3.7)

One, who is once bound up need not be unbound. Three methods have been prescribed for capturing creatures, namely Indraja (इन्द्रजा), *viz.* by over powering with superior force, second Somja सोमजा meaning thereby that to tame the creature by giving him provisions, grains of other suitable catables, and the third (Atharvana) (अथर्वणा), viz.non-violent methods, applying only mild force. The method to be employed should depend upon the fact, as to how much ferocious and harmful the beast is.

Control of Çrimes

For controllng crimes in the state, two methods have been prescribed, one is to punish the criminal/offender, as described in the foregoing para, and second is to bring the criminal to right path by giving him lessons etc. Vedas are, however, of the view that if he offender is not reformed by the second method he/she should be given deterrent punishment.

Qualification of Judges

पश्चात् पुरस्ताघरादुतोत्तरात् कविः काव्येन परि पाह्यग्ने।
सखा सखायमजरो जरिम्णे, अग्ने मर्ता अमर्त्यस्त्वं नः।।

O king! with your noble conduct and wit ennoble your subjects. You being their friends protect them from all sides till they live to their full age. You have a foresight. You, through your wisdom, put down all crimes. The judges are supposed to be learned person.

(1) सोमो वै ब्रह्मण (here ब्रह्मण means a learned in a Vedic Lore)

(2) स सोमं प्रथमः पपौ (Ath. 4.6.1)

(3) सोमो ह्यस्यस्मद् दायादः (Ath. 5.18.6)

(4) यद् वो वयं प्रमिनाम व्रतानि विदुषां देवा
अविदुष्टरासः अग्निषृद् विश्वादा पृणातृ
विद्धान्त्सोमस्य यो ब्राह्मण आविवेश।।

(Ath.19.59.2)

O learned ones, we being ignorant violate the vows, lawa and discipline, please correct is from these violations. From these mantras it is clear that सोम and ब्राह्मण are synonymous words, indicative of the wise and learned persons.

Note: The dictum "Judge not so that may be judged" is not applicable to judges while deciding the cases. They have to decide each case according to the facts without any extraneous consideration.

Punishment of Collective Crimes

शतमश्मन्मयीनां पुरामिन्द्रो व्यास्यत्।
दिवोदासाय दाशुषे।।

(Rig. 4.30.20)

The king should destroy the cities of places in which thieves, gamblers and criminals thrive.

त्वं मायाभिरप मायिनोऽधमः स्वधाभिर्ये अधि शुप्तावजुह्वत।
त्वं प्रिप्रोर्नृमणः प्रारुजः पुरः प्र ऋजिश्वानं दस्युहत्येष्वाविथ।

(Rig. 1.51.5)

By the knowledge, devices, straightforwardness and other virtues, you put down the dacoits, thieves, robers etc. In battles you slay them and destroy all malignants completely.

अग्नीरक्षाँसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः शुचिः पावक ईड्यः।

(Ath.8.3.26)

O mighty rule ! radiant with glow and glamour, strong among his people, destroy the wicked through your noble, pious and purian conduct.

In Vedas much stress has been laid on the qualification for the selection if the judges. They have to be noble in their conduct, so that with their ennobling influence, the idea of committing crime by the criminals is removed.

Court Procedure and Witnesses

श्रधि श्रुत्कर्ण वहिनर्भिदेवैरग्ने सयावभिः।
आ सोदन्तु बर्हिषि मित्रोऽअर्य्यमा प्रातर्यावाणोऽध्वरम्।।

(Yaju 33.15)

A judge should sit in a full fledged court, alongwith assessirs and learned associates; should listen to the complainant and then give decision without pride and prejudice.

पृष्टाऽपव्ययमानुस्तु कृतावस्थो घनैषिणा।
त्र्यवेरैः साक्षिभिर्भाव्यो नृपब्राह्मणसन्निघौ।।

(Manu. 8.60)

Judge should proceed to record the evidence of at least three witnesses, in case the alleged debtor of the debt money.

नार्थ सम्बन्धिनो नाप्ता न सहाया न वैरिणिः।
न दृष्दोषाः कर्तव्या न व्याध्यार्ता न दूषिताः।।

(Manu. 8.64)

Evidence of the following persons is not entertainable (1) Debtor of rich persons, (2) A friend, (3) A helper, (4) A servant, (5) An enemy, (6) Irreligious one, (7) Insolvent & one who has already been convicted of an offence, including that of giving false evidence in court. The following persons should also not be allowed to give evidence.

नतो न मतो नोन्मत्तो क्षुतृष्णोपपीडितः।
न श्रामार्तो न कामार्तो न क्रुद्धो नापितस्करः।।

(Manu. 8.67)

One is anger, an addict, one who is thirsty or hungry, a vicious one, one who is a theif, one who is tried, however, in special circumstances, like the following, any one can be allowed to give evidence when the crime is committed in a lone place.

अनुभावी तु यः कश्चित्कुर्यात्साक्ष्यं विवादिनाम्।
अन्तवेश्मन्यरण्ये वा शरीरस्यापिवात्यये।।

(Manu. 8.69)

When the incident of crime takes place in a house or in a jungle, any expert can be allowed to give evidence.

Vanprastha Ashram
Jwalapur (Hardwar)

मनुज तो वही है.....

महावीर 'नीर'
विद्यालय–गु.कु. कांगड़ी

बने को मिटाना, सभी जानते हैं।
मिटे को बना दे, मनुज तो वही है।।

उठे को गिराना, सभी जानते हैं।
गिरे को उठा दे, मनुज तो वही है।।

खिले फूल को तो, सभी तोड़ लेते।
उसे जो खिला दे, मनुज तो वही है।।

हँसना, हंसाना, सभी जानते हैं।
सभी को हंसा दे, मनुज तो वही है।।

बातें गगन की, सभी कर रहे हैं।
धरा को संवारे, मनुज तो वही है।।

खुशी में उछलना, सभी जानते हैं।
गमी में हँसा दे, मनुज तो वही है।।

कपट झूठ, बोना, बहुत जानते हैं।
मिटा दे इन्हें जो, मनुज तो वही है।।

अटारी को रोशन, सभी कर रहे हैं।
कुटी जगमगा दे, मनुज तो वही है।।

सुनो 'नीर' जग में, सभी जन्म लेते।
जो जीवन बना ले, मनुज तो वही है।।
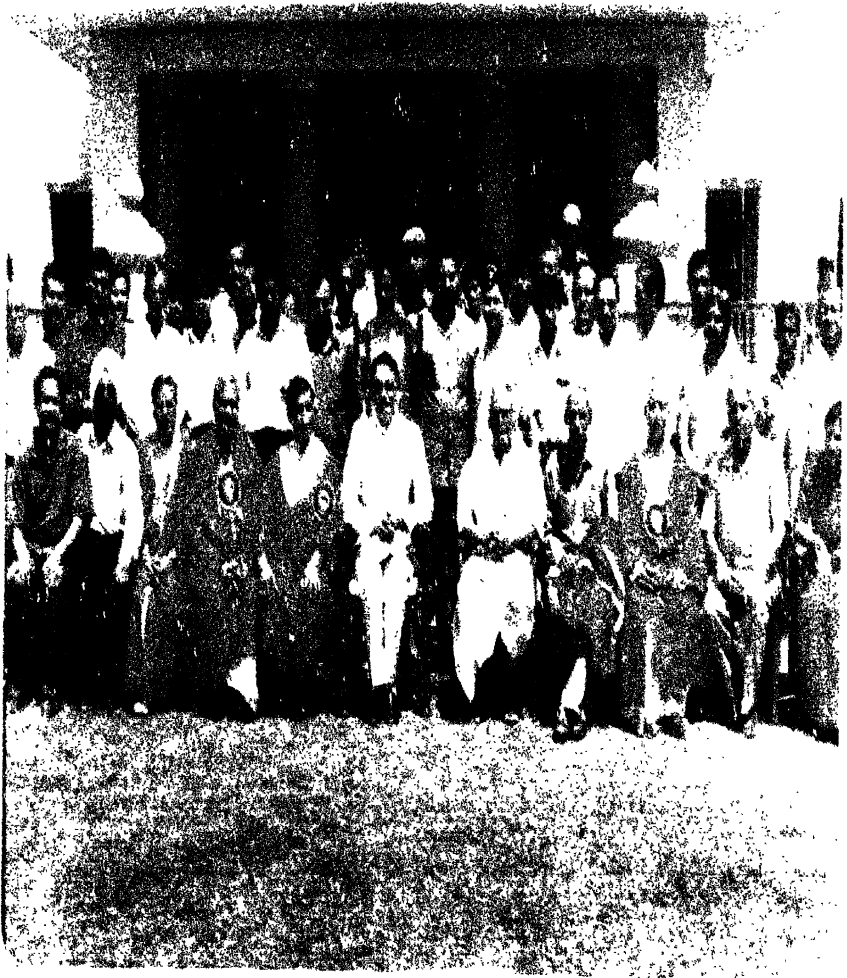
गु०कां०वि०वि० के ९५वें दीक्षान्त समारोह के पश्चात्
लोकसभाध्यक्ष डॉ० शिवराज पाटिल एवं
विश्वविद्यालय परिवार के साथ स्व० जस्टिस महावीर सिंह जी